Registration No. V-36244/2008-09 **ISSN :- 2395-0390**

The journal has been listed in 'UGC Approved List of Journals' with Journal No. – 48402 in previous list of UGC

JIFE Impact Factor – 5.21

Varanasi Management Review

A Multidisciplinary Quarterly International Peer Reviewed Referred Research Journal

Editor in Chief
Dr. Alok Kumar
Associate Professor & Dean (R&D)
School of Management Sciences
Varanasi

Volume - XI **No. - 2** **(April - June) 2025**

(Part – II)

Published by
Future Fact Society
Varanasi (U.P.) India

Varanasi Management Review - ***A Multidisciplinary Quarterly International Referred Research Journal****, Published by : Quarterly*

Correspondence Address :
C 4/270, Chetganj
Varanasi, (U.P.)
Pin. - 221 010
Mobile No. :- 09336924396
Email- vnsmgrev@gmail.com

Note :-

The views expressed in the journal "Varanasi Management Review" are not necessarily the views of editorial board or publisher. Neither any member of the editorial board nor publisher can in anyway be held responsible for the views and authenticity of the articles, reports or research findings. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Managing Editor
Avinash Kumar Gupta

©Publisher

ISSN : 2395-0390

Printed by
Interface Computer, B 31/13-6, Malviya Kunj, Lanka, Varanasi-221005 (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. T. N. Singh,** School of Plant Sciences, Haramaya University, Ethiopia (Africa)
- **Prof. S.K. Bhatnagar,** School for Legal Studies, BBAU, Lucknow
- **Prof. (Dr.) Munna Singh**, Head of Department, Physical Education and Sports Sciences Department, Handia P.G. College, Handia, Prayagraj, U.P.
- **Dr. Saumya Singh,** Associate Professor, Department of Management Studies, Indian School of Mines, Dhanbad
- **Dr. Mrinalini Pandey,** Associate Professor, Department of Management Studies, Indian School of Mines, Dhanbad
- **Dr. Achchhe Lal Yadav**, Assistant Professor, Physical Education, Pt. D. D. U. Government Degree College, Saidpur, Ghazipur
- **Dr. Aditya Kumar Gupta,** Assistant Professor, School of Management Sciences, Varanasi
- **Dr. Abhishek Sharma,** Assistant Professor, Department of Hindi, Ravenshaw University, Cuttack
- **Dr. A. Shanker Prakash,** Assistant Professor, School of Management Sciences, Varanasi
- **Dr. Anil Pratap Giri,** Assistant Professor, Department of Sanskrit, Pondicherry Central University, Pondicherry.

EDITORIAL BOARD

- **Dr. Sanjay Singh,** Department of Plant Science, University of Gondar, Ethiopia (Africa)
- **Dr. Diwakar Pradhan,** Professor in Nepali, Head, Deptt. of Indian Languages Faculty of Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Nagendra Kumar Singh,** Professor, Department of Journalism & Mass Communication, Mahatma Gandhi Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Manish Arora,** Associate Professor, Faculty of Visual Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
- **Dr. Surjoday Bhattacharya,** Assistant Professor, Government Degree College, Pratapgarh U P
- **Dr. Upasana Ray,** Associate Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi
- **Dr. Krishna Kant Tripathi,** Assistant Professor, Deptt. of Education, Central University of Mijoram, Mijoram
- **Dr. Urjaswita Singh,** Assistant Professor, Department of Economics, M.G. Kashi Vidyapith, Varanasi.
- **Dr. Santosh Kumar Singh,** Assistant Professor, P.G. Department of Psychology, J.P. University. Chapra
- **Dr. Ramkirti Singh,** Assistant Professor, Department of Psychology, Gorakhpur University, Gorakhpur
- **Dr. Girish Kumar Tiwari,** Assistant Professor, National Council of Educational Research and Training, New Delhi

- **Dr. Ranjeet Kumar Ranjan,** Assistant Professor, Department of Psychology, J.P. College, Narayanpur, Bihar
- **Dr. Paromita Chaubey,** Faculty of Education, Banaras Hindu University, Varanasi

EDITOR'S NOTE

It is a great honour to me to extend my warm greetings and welcome you all to the journal, **Varanasi Management Review,** a refereed journal of multi disciplinary research. The journal, which is a peer-reviewed, will devote to the promotion of multi-disciplinary research and explorations to the South Asian and global community. It is our objective to provide a platform for the publication of new scholarly articles in the rapidly growing field of various disciplines. We are trying to encourage new research scholars and post graduate students by publishing their papers so that they may learn and participate in literary publishing through a professional internship. Scholarly and unpublished research articles, essays and interviews are invited from scholars, faculty researchers, writers, professors from all over the world.

Note: All outlook and perspectives articulated and revealed in our peer refereed journal are individual responsibility of the author concerned. Neither the editors nor publisher can be held responsible for them anyhow. Plagiarism will not be allowed at any level. All disputes are subject to Varanasi (Uttar Pradesh) Jurisdiction only.

Hoping all of you shall enjoy our endeavors and those of our contributors.

Editor

CONTENTS

"Varanasi Management Review"

➲	महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति एवं उसके संस्थागत अवरोध ***खुशबू कुमारी***	01-07
➲	21वीं सदी की हिंदी कहानियों में आर्थिक स्वतंत्रता की ओर बढ़ती हुई महिलाएं ***निशा***	08-12
➲	বাংলা সাহিত্যে প্রবাসীদের অবদান Contributions of the Diaspora to Bengali Literature ***Dr. Sanchita Banerjee Roy***	13-19
➲	भारत में गरीबी एवं विकास के बदलते प्रतिमान ***अंजली कुमारी*** ***डॉ. मनीषा कुमारी***	20-25
➲	भारत में मद्यनिषेध की स्थिति एवं चुनौतियाँ ***डॉ. विजय शंकर विक्रम***	26-31
➲	राजनीतिनिपुणो गौतमो आर्य श्रावको ***डॉ. लेखमणी त्रिपाठी***	32-37
➲	रवीन्द्र नाथ टैगोर के शैक्षिक योगदान का समीक्षात्मक अध्ययन ***मोहम्मद इरफान***	38-41
➲	सामवेद में निरुपित सोमरस का माहात्म्य ***डॉ. दीपक कुमार***	42-44
➲	प्रतिनिधियों के चुनाव में डिजिटल मीडिया की भूमिका ***डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव***	45-50
➲	मिथिला भाषा–रामायण मे रस–अलंकार ***डॉ. निक्की प्रियदर्शिनी***	51-53
➲	नासिरा शर्मा के साहित्य में नारी की मूल संवेदना ***डॉ. प्रिया जोशी***	54-58
➲	महात्मा बुद्ध का दार्शनिक चिंतन ***जय सिंह यादव***	59-64
➲	भारत में नगरीय विकास से सम्बन्धित मुद्दे ***डॉ. सुनील कुमार यादव***	65-66
➲	प्राचीन भारत में दास–प्रथा का विश्लेषण ***डॉ. रजनीकांत राय***	67-69

महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति एवं उसके संस्थागत अवरोध

खुशबू कुमारी*

"जब तक महिलाओं की स्थिति में सुधार नहीं होगा, जब तक विश्व का कल्याण नहीं हो सकता। किसी भी पंक्षी का एक पंख से उड़ना संभव नहीं है।"

– स्वामी विवेकानन्द

सारांश

भारत एक ऐसा देश है जहाँ स्त्रियों को प्राचीन काल से ही घर की चहारदीवारी के बाहर आने की अनुमति नहीं थी। यहाँ आज भी स्त्री को घर की मर्यादा एवं इज्जत समझा जाता है। पर आज विकास की प्रक्रिया ने इन मान्यताओं को तोड़ डाला जिससे पूर्वनिर्धारित सामाजिक दायरा सीमित होकर खुलता चला गया। उद्योगों के विकास ने सम्पूर्ण मानव समाज को अर्थोपार्जन के प्रति जागरूक कर दिया इसके बाद ऐसा समय आया जिसमें समाज श्रम विभाजन युक्त बन गया जहाँ स्त्रियों एवं पुरुषों को अलग–अलग कार्य करने की समाज द्वारा मान्यता एवं अनुमति मिली। पर इसके साथ ही समाज में महिलाओं का शोषण प्रारम्भ हो गया जिससे उनकी समाज में स्थिति निम्न व शक्ति क्षीण हो गई और उनसे कई अन्य प्रकार के कार्य भी लिये जाने लगे। आज औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के तीव्र विकास ने एक ऐसे समाज की स्थापना की जिसमें स्त्री–पुरुष दोनों को समान स्वतंत्रता, समानता व समान आर्थिक भागीदारी का अधिकार प्राप्त हो गया। प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति का विश्लेषण करना है। इसमें गया नगर के क्षेत्र–अध्ययन से महिलाओं के सर्वेक्षण से प्राप्त तथ्यों के आधार पर महिलाओं की बदलती सामाजिक–आर्थिक प्रस्थिति का विश्लेषण किया गया है। यह अध्ययन प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यों पर आधारित है।

कुंजी शब्दः महिला विकास, सामाजिक गतिशीलता, आधुनिकीकरण, पश्चिमीकरण, औद्योगीकरण, सामाजिक समानता।

भूमिकाः

विगत कुछ दशकों में महिला अध्ययन एवं महिला विकास की वैचारिक धाराओं ने बौद्धिक जगत में अपनी केन्द्रीय एवं महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। इन विचारधाराओं को विकास की प्रक्रिया, सामाजिक प्रस्थितियों व उनमें होने वाले परिवर्तनों की गति से जोड़कर देखा जा सकता है। नये व्यवसायों के प्रादुर्भावों से सामाजिक गतिशीलता को एक आधार मिला एवं आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में व्यक्ति की स्वतंत्रता व सामाजिक समानता को संस्थात्मक माध्यमों से क्रियान्वित किया गया। प्रजातांत्रिक व्यवस्था व्यक्ति को समान मताधिकार व भागीदारी के अवसर प्रदान करती है। इसी परिप्रेक्ष्य में नर एवं नारी के सम्बन्धों व परिस्थितियों की असमानता एवं महत्वपूर्ण प्रश्न के रूप में उभरी है। विगत कुछ दशकों में नारी संबंधी अध्ययनों का सैद्धान्तिक एवं अवधारणात्मक पक्ष प्रबल हुआ है।

समाज की पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्रियों को परतंत्र बनाया है। फ्रेडरिख एंजल्स लिखते है कि ''संपत्ति को अपने पुत्र को हस्तांतरण करने की कामना ने मातृसत्ता का विनाश किया जो स्त्री जाति की वैश्विक–ऐतिहासिक पराजय थी। अब घर के अंदर भी पुरुषों ने अपना अधिपत्य जमा लिया। स्त्री अपने पद से वंचित कर दी गई, जकड़ दी गई, पुरुष की वासना की दासी, संतान उत्पन्न करने का यंत्र मात्र बन कर रह गई।''[1] (परिवार, निजी संपत्ति व राज्य की उत्पत्ति, पृष्ठ 64)

आज स्त्रियां प्राचीन मान्यताएं त्याग कर अपनी सामाजिक–आर्थिक स्थिति को ऊँचा उठाने तथा पुरुषों की बराबरी करने के प्रति न सिर्फ उत्सुक एवं जागरूक हैं बल्कि कई ऐसे क्षेत्र हैं जिनमें इन्होंने अपनी कार्यक्षमता व नेतृत्व क्षमता का लोहा भी मनवाया है, कई क्षेत्रों में वे पुरुषों को पीछे छोड़ती भी नजर आ रही है। चूंकि उन्हें समाज में बराबरी का अधिकार चाहिए इसलिए उन्हें आर्थिक क्रियाओं से सक्रिय रहना होगा।

* पी–एच0डी0 शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया

आज उस परिवार को सबसे अच्छा माना जाता है जिसमें स्त्री व पुरुष दोनों आर्थिक क्रियाओं में सक्रिय सहभागिता करते हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात महिलाओं की बदलती प्रस्थिति

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही स्त्रियों की स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। अब उनकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है। डॉ. श्रीनिवास के अनुसार ''पश्चिमीकरण, लौकिकीकरण तथा जातीय गतिशीलता ने स्त्रियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योग दिया है।''[2] वर्तमान में स्त्री शिक्षा का प्रसार हुआ है। कई स्त्रियां औद्योगिक संस्थाओं और विभिन्न क्षेत्रों में नौकरी करने लगी हैं। अब वे आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर होती जा रही है। उनके पारिवारिक अधिकारों में वृद्धि हुई है। अनेक सामाजिक अधिनियमों ने स्त्रियों की निर्योग्यताओं को समाप्त करने और उन्हें सामाजिक कुरीतियों से छुटकारा दिलाने में योग दिया है। अब स्त्रियों को अपने व्यक्तिव के विकास हेतु काफी सुविधाएँ प्राप्त हैं।

वर्तमान में स्त्रियों की स्थिति में निम्नलिखित क्षेत्रों में महत्वपूर्ण परिवर्तन[3] आये हैं:

1. **स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति** – स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात स्त्री शिक्षा का व्यापक प्रसार हुआ है। इसके पूर्व न तो माता–पिता लड़कियों को शिक्षा दिलाने के पक्ष में थे और न ही शिक्षा की दृष्टि से समुचित सुविधाएं उपलब्ध थी। सन् 1882 में पढ़ी लिखी स्त्रियों की कुल संख्या 2045 थी।

सारणीः 1.1

जनगणना 1951–2011 के अनुसार भारत में साक्षरता दर में लिंग अंतराल[4]

वर्ष	कुल साक्षरता	पुरूष	महिला	अंतराल की दर
1951	18.33	27.16	8.86	18.30
1961	28.33	40.40	15.35	25.05
1971	34.45	45.96	21.97	23.98
1981	43.57	56.38	29.76	26.62
1991	52.21	64.13	39.29	24.84
2001	65.38	75.85	54.16	21.70
2011	74.04	82.14	65.46	16.68

स्रोतः भारत की जनगणना:1951–2011

सारणी संख्या 1.1 में जनगणना 1951–2011 के अनुसार भारत में साक्षरता दर में लिंग अंतराल का विवरण दिया गया है। इसके अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 1951 में साक्षरता दर 18.33 प्रतिशत से बढ़कर 2011 में 74.04 प्रतिशत तक पहुंच गई। जिसमें पुरूषों में साक्षरता 27 प्रतिशत से 82.14 प्रतिशत एवं महिलाओं में 8 प्रतिशत से 65.46 प्रतिशत तक पहुंच गई लेकिन लिंग अंतराल 1951 में जहां 18.30 प्रतिशत थी जो 2001 में 21.70 तक पहुंच गई एवं 2011 में थोड़ा सुधरकर 16.68 प्रतिशत हो गई। आंकड़ो से यह दिख रहा है कि लगभग 1951 से ही साक्षरता दर तो सुधरी है लेकिन लिंग अंतराल में बहुत अधिक सुधार नहीं हो रहा है।

राष्ट्रीय शैक्षणिक सांख्यिकी केन्द्र की रिपोर्ट[5] के अनुसार भारत में 1951–2011 तक भारत में स्कूली शिक्षा में सकल नामांकन अनुपात के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 1951 में भारत में प्राइमरी शिक्षा में लड़कियों का सकल नामांकन अनुपात 24 करोड़ से बढ़कर 2011 में 92.5 करोड़ तक, मिडिल स्तर की शिक्षा में 4 करोड़ से बढ़कर 58.6 करोड़ एवं माध्यमिक स्तर की शिक्षा में 17 करोड़ से बढ़कर 75.4 करोड़ तक पहुंच गया। आंकड़ो से यह दिख रहा है कि 1951 से ही भारत में स्कूली शिक्षा में लड़कियों का सकल नामांकन अनुपात बढ़ रहा है।

एआईसएचई 2012–13 से 2023–24 तक[6] के आंकड़ों के अनुसार भारत में 2012–13 से 2023–24 तक उच्चतर शिक्षा (स्नातक एवं उपर) में लिंगवार सकल नामांकन अनुपात के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 2012–13 में भारत में उच्च शिक्षा में लड़कियों का सकल नामांकन अनुपात 20 प्रतिशत से बढ़कर 2021–22 में 28.5 प्रतिशत तक पहुंच गया। जबकि इसी अवधि में पुरूषों में 22 प्रतिशत से बढ़कर 28.3 प्रतिशत तक पहुंच गया एवं कुल अनुपात 21 प्रतिशत से बढ़कर 28.4 प्रतिशत तक पहुंच गया। इस प्रकार उच्च शिक्षा में भी महिलाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है।

डॉ. पणिक्कर ने लिखा है कि ''स्त्रियों की शिक्षा एवं उनकी जागृति ने उस कुल्हाड़ी को तेज कर दिया है जिसकी सहायता से हिन्दू सामाजिक जीवन की जंगली झाियों को साफ करना सम्भव हो गया है। स्त्री शिक्षा के व्यापक प्रसार ने स्त्रियों को अपने व्यक्तिव के सर्वांगीण विकास के समुचित अवसर प्रदान किये हैं, रूढ़िवादी विचारों से काफी सीमा तक मुक्त किया है, पर्दा प्रथा को कम किया है तथा बाल विवाहों के प्रचलन को घटाने में योग दिया है।''[7]

2. **आर्थिक क्षेत्र में प्रगति –** ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली 80 प्रतिशत स्त्रियां आर्थिक दृष्टि से कोई न कोई कार्य करती रही हैं। नगरों में भी निम्न वर्ग की स्त्रियां घरेलू कार्यों और उद्योगों के माध्यम से कुछ न कुछ कमाती रही हैं।

सारणीः 1.2

भारत में 15 साल से अधिक आयु के व्यक्तियों की कार्य सहभागिता दर[8] (2017–18 से 2023–24 तक)

वर्ष	पुरूष	महिला	कुल
2017-18	71.2	22.0	46.8
2018-19	71.0	23.3	47.3
2019-20	73.0	28.7	50.9
2020-21	73.5	31.4	52.6
2021-22	73.8	31.7	52.9
2022-23	76.0	35.9	56.0
2023-24	76.3	40.3	58.2

स्रोतः Peroidic Labour Force Survey(PLFS- July, 2023-june, 2024), National Statistics Office, Ministry of Statistics and programme Implimentation; Govt. of India.

सारणी संख्या 1.2 में भारत में 15 साल से अधिक आयु के व्यक्तियों की कार्य सहभागिता दर (2017–18 से 2023–24 तक) का विवरण दिया गया है। इसके अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 2017–18 में भारत में 15 साल से अधिक आयु के व्यक्तियों की कार्य सहभागिता दर पुरूषों एवं महिलाओं में क्रमशः 71 प्रतिशत एवं 22 प्रतिशत थी जो 2023–24 में बढ़कर पुरूषों एवं महिलाओं में क्रमशः 76.3 प्रतिशत एवं 58.2 प्रतिशत तक पहुंच गया। इस प्रकार 15 साल से अधिक आयु के महिलाओं की कार्य सहभागिता दर निरंतर बढ़ रही है।

3. **राजनीतिक चेतना में वृद्धि–** स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात स्त्रियों की राजनीतिक चेतना में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। जहां सन 1937 में महिलाओं के लिए 41 स्थान सुरक्षित थे, वहाँ केवल 10 महिलाओं ने ही चुनाव लड़ा। भारत के नवीन संविधान के अनुसार सन 1950 में स्त्रियों को पुरूषों के बराबर नागरिक अधिकार प्रदान किये गये। स्त्रियों में राजनीतिक चेतना दिनों दिन बढ़ती जा रही हैं। देश में अब तक हुए विभिन्न चुनावों से भी ऐसा ज्ञात होता है कि महिलाओं में अपने वोट का स्वतंत्र रूप से उपयोग करने की प्रवत्ति बढ़ती जा रही है।

भारत में विभिन्न आम चुनावों में महिला एवं पुरूषों का प्रतिनिधित्व के आंकड़ों[9] (1957–2024 तक) के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 1957 में भारत के विभिन्न आम चुनावों में पुरूषों एवं महिलाओं का प्रतिनिधित्व क्रमशः 31.7 प्रतिशत एवं 60 प्रतिशत थी जो 1996 में घटकर पुरूषों एवं महिलाओं में क्रमशः 3.8 प्रतिशत एवं 6.7 प्रतिशत तक पहुंच गया। 2014 में महिलाओं का प्रतिनिधित्व 9.3 प्रतिशत था जो 2024 में 9. 3 प्रतिशत है।

भारत में विभिन्न राज्यों में पंचायती राज में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के आंकड़ों[10] (2024–2025 तक) के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में पंचायती राज में महिलाओं का औसत प्रतिनिधित्व 46.6 प्रतिशत है। असम में पंचायती राज में महिलाओं का प्रतिनिधित्व सर्वाधिक 54.7 प्रतिशत है। इसके बाद केरल में 54.5 प्रतिशत, महाराष्ट्र में 54.3 प्रतिशत, ओडिशा में 53.0 प्रतिशत, कर्नाटक में 52.8 प्रतिशत, बिहार में 52. 0 प्रतिशत, झारखण्ड में 51.6 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 51.4 प्रतिशत है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि आजादी के बाद विभिन्न राज्यों में पंचायती राज में महिलाओं का प्रतिनिधित्व निरंतर बढ़ रहा है।

4. **सामाजिक जागरूकता में वृद्धि–** पिछले कुछ वर्षों में स्त्रियों की सामाजिक जागरूकता में काफी वृद्धि हुई है। जातीय नियमों और रूढ़ियों के प्रति महिलाओं की उदासीनता बराबर बढ़ रही है। अब

वे रूढ़िवादी सामाजिक बन्धनों से मुक्त होने के लिए प्रयत्नशील हैं। आज अनेक स्त्रियां महिला संगठनों और क्लबों की सदस्य हैं। कई स्त्रियां तो समाज कल्याण के कार्य में लगी हुई हैं।

भारत की जनगणना, 2011 एवं भारत में महिलाएं एवं पुरूष, 2023, के अवलोकन[11] से यह स्पष्ट होता है कि आजादी के बाद 1951 में महिलाओं की जनसंख्या कुल जनसंख्या का 48.61 प्रतिशत थी जो 2011 में कुल जनसंख्या का 48.53 प्रतिशत हो गई। 'भारत में महिलाएं एवं पुरूष, 2023' के अनुसार 2036 में कुल जनसंख्या 152.23 करोड़ हो जाने का अनुमान है जिसमें महिलाओं का अनुपात 48.8 प्रतिशत रहने की संभावना है। इससे ज्ञात होता है कि 1951 से लगातार कुल जनसंख्या में महिलाओं की भागीदारी लगभग आधी रही है।

भारत में 1951 से 2011 तक ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों एवं कुल लिंगानुपात[12] (प्रति हजार पुरूषों पर) के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि 1951 में ग्रामीण क्षेत्रों में लिंगानुपात 965 था जबकि नगरीय क्षेत्रों में 860 ही था एवं कुल लिंगानुपात 946 था। 2011 में ग्रामीण क्षेत्रों में लिंगानुपात 949 था जबकि नगरीय क्षेत्रों में 929 एवं कुल लिंगानुपात 943 हो गया। 'भारत में महिलाएं एवं पुरूष, 2023' के अनुसार 2036 में इसके ग्रामीण क्षेत्रों में 951, जबकि नगरीय क्षेत्रों में 926 एवं कुल लिंगानुपात 952 हो जाने का अनुमान है।

5. **पारिवारिक क्षेत्र में अधिकारों की प्राप्ति–** वर्तमान में स्त्रियों के पारिवारिक अधिकारों में वृद्धि हुई है। वर्तमान में स्त्रियां संयुक्त परिवार के बन्धनों से मुक्त होकर एकाकी या मूल परिवार में रहना चाहती है। वे मूल परिवारों की स्थापना कर स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना और पारिवारिक मामलों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना चाहती हैं। अब बच्चों की शिक्षा, परिवार की आय के उपयोग, पारिवारिक अनुष्ठानों की व्यवस्था और घर के प्रबन्ध में स्त्रियों की इच्छा को विशेष महत्व दिया जाता है। अब तो विवाह विच्छेद के मामले में भी स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त हैं। पारिवारिक क्षेत्र में स्त्रियों के बढ़ते हुए अधिकारों और स्वतंत्रता को देखते हुए कुछ लोगों को तो पारिवारिक जीवन के विघटित होने का भय है। आज की बदली हुई परिस्थितियों में स्त्रियों को दासी बनाकर नहीं रखा जा सकता। अब तो मित्र और सहयोगी के रूप में उनका महत्व दिनों दिन बढ़ता जा रहा है।

महिला विकास के अवरोधकः

संक्षेप में, महिला विकास के मुख्य धार्मिक एवं संस्थागत[13] अवरोध निम्नलिखित हैंः–

पितृसत्ता

पितृसत्ता शब्द की उत्पत्ति पेट्रिआर्क शब्द से हुआ है। यह श्रेणी व्यवस्था पर आधारित कुछ चर्च के बिशपों में से उच्च पद पर आसीन किसी खास–बिशप के लिए प्रयुक्त होता है। इस तरह पेट्रिआर्क शब्द उसके पद या प्राधिकार को व्यक्त करता है। पितृसत्ता वह व्यवस्था है जिसमें पुरूषों को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसमें निर्णय लेने की शक्ति सिर्फ पुरूष वर्ग के पास होता है। कमला भसीन के अनुसार, ''पितृसत्ता, शक्ति पर आधारित ऐसे संबंधों को दर्शाती है जिनके माध्यम से पुरूषों का स्त्री पर वर्चस्व स्थापित होता है। पितृसत्तात्मक व्यवस्था में श्रम विभाजन ऐसा होता है जिसमें स्त्री घरों की दीवारों में सिमट गई है। उनका काम सिर्फ घरेलू काम–काज एवं बच्चों का पालन–पोषण करना है।''

भ्रूण हत्या :

बेटे के सानिध्य, संपर्क और संबल से वंचित होते बूढ़े मां–बाप के अश्रुपूर्ण अनुभव और भारतीय आंकड़े, मातृत्व और पितृत्व के लिए खुद में एक नई चुनौती बनकर उभर रहे हैं। कानूनी प्रतिबंध के बावजूद वे कन्या भ्रुण हत्या रूक नहीं रही हैं। नतीजन दुनिया के नक्शे में बेटियों की संख्या का घटना शुरू हो गया हैं। दुनिया में 15 वर्ष उम्र तक के 102 बेटो पर 100 बेटियां हैं। कानून के बावजूद, भारत में भ्रूण हत्या का क्रुर कर्म ज्यादा तेजी पर है। यहां छह वर्ष की उम्र तक का लिंगानुपात, वर्ष 2001 में जहां 1000 बेटों पर 927 बेटियां थी, वह वर्ष 2011 में घटकर 919 हो गया है। यह राज्यस्तर पर, हरियाणा में न्यनूतम है। लिंगानुपात में गिरावट का यह क्रम वर्ष 1961 से 2011 तक लगातार जारी है।

बाल विवाह :

मां–बाप द्वारा बेटियां इस कदर बोझ मान ली गई है कि विश्व स्तर पर प्रत्येक तीन सेकेण्ड़ में एक बालिका का उसकी सहमति के बगैर विवाह किया जा रहा है। यूनिसेफ की रिपोर्ट (स्टेट्स ऑफ वर्ल्ड चिल्ड्रन रिपोर्ट–2012) का दावा है कि बाल विवाह के वैश्विक आंकडों में 40 फीसदी हिस्सेदारी भारत की है। प्रत्येक सौ में से सात कन्याओं की शादी 18 वर्ष से कम उम्र में हो रही है। वर्ष 2005–06 में किए बए राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वोक्षण के मुताबिक, कुल उत्तरदाता महिलाओं में से 22 फीसदी महिलाओं ने अपनी

पहली संतान को 18 से कम वर्ष की उम्र में जन्म दे दिया था। केन्द्रीय स्वास्थ्य मत्रालय की परिवार कल्याण सांख्यिकी रिपोर्ट–2011 से स्पष्ट है कि शहर व गांव के बीच कम उम्र कन्या विवाह अनुपात को मंजूरी है।

लिंगभेद :

लिंगभेद की मानसिकता यह है कि 14 वर्षीय मलाला युसुफजई को महज इसलिए गोली मार दी गई, क्योंकि वह स्कूल जा रही थी और दूसरी लड़कियों को भी स्कूल जाने के लिए तैयार करने की कोशिश कर रही थी। दुनिया के कई देशों में ड्राइविंग लाइसेंस देने जैसे साधारण क्षमता कार्यो के मामले में भी लिंगभेद है। लिंगभेद का एक उदाहरण, पोषण संबंधी एक सर्वेक्षण का निष्कर्ष भी है, तदानुसार, भारत में बालकों की तुलना में, बालिकाओं को भोजन में दूध–फल जैसी पौष्टिक खाद्य सामग्री कम दी जाती है। औसत परिवारों की आदत यह है कि बेटों की जरूरत की पूर्ति के बाद ही बेटियों का नंबर माना जाता है।

यौन हिंसा :

पुरुषों की यौन पिपासा का विकृत चित्र यह है कि अमेरिका में 12 से 16 वर्षीय लड़कियों में करीब 83 प्रतिशत यौन शोषण का शिकार पाई गई हैं। भारत में भी यौन शोषण के आंकड़े बढ़ रहे है। दिल्ली में गत् तीन वर्षो के दौरान हुए कुल बलात्कार में 46 प्रतिशत पीड़िता अव्यस्क थीं। एनसीआरबी रिपोर्ट के मुताबिक, बालात्कार, छेड़खानी और जलाने के सबसे ज्यादा मामले पश्चिम बंगाल और मध्य प्रदेश में सामने आए हैं।

अशिक्षा :

भारतीय संविधान की धारा 14, 15, 15(3), 16 और 21(ए) विशेष रूप से शैक्षिक अधिकार में समानता सुनिश्चित करने हेतु बनाई गई थी। वर्ष 2011 में यह 16.68 प्रतिशत था। खुशी की बात यह है कि 2001 की तुलना में 2011 में शहरी स्त्री साक्षरता वृद्धि दर भले ही नौ रही हो, ग्रामीण क्षेत्रों में यह वृद्धि 26 फीसदी दर्ज की गई, जबकि गांवों और शहरों में बालक साक्षरता वृद्धि दर क्रमशः पांच और 10 प्रतिशत पर अटक कर रह गई।

दहेज और लिंगानुपात :

बेटियों की भ्रूण हत्या का दूसरा मूल कारण दहेज बताया जाता है। यदि यह सत्य होता, तो भी बिहार में लिंगानुपात पंजाब–हरियाणा की तुलना में कम होना चाहिए था। आर्थिक आंकड़े कहते हैं कि पंजाब–हरियाणा की तुलना में, बिहार के अभिभावक दहेज का वनज झेलने में आर्थिक रूप से कम सक्षम हैं। अब प्रश्न है कि यदि भ्रूण हत्या का कारण अशिक्षा और दहेज नहीं, तो फिर क्या है ? बेटियों की सामाजिक सुरक्षा में आई कमी या नारी को प्रतिद्वन्दी समझ बैठने की नई पुरुष मानसिकता अथवा बेटियों के प्रति हमारे स्नेह में आई कमी? कारण की जड़, कही किसी धर्म, जाति अथवा रूढ़ि में तो नहीं ? कही ऐसा तो नही कि औपचारिक साक्षरता में आगे निकल जाने की होड़ में हम संवेदना, संबंध और संस्कार की दौड़ में इतना पिछड़ गये हैं कि मां–बाप ही नही, बेटियों को भी इस धरा पर बोझ मानने लगे हैं? सोचें!

विश्लेषण

प्रस्तुत अध्ययन के प्राथमिक तथ्यों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि हमारी 89.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ यह नहीं मानती हैं कि महिलाएं शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक रूप से कमजोर होती हैं इसलिए उन्हें सिर्फ घरेलू काम ही करना चाहिए। ये तो पुरूषवादी सोच है जिसने महिलाओं को अवसरों से वंचित रखा एवं उन्हें सिर्फ घरेलू काम तक ही सीमित कर दिया। आज दुनिया का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जिसमें महिलाएं आगे नहीं हैं। यह इस बात को साबित करता है कि महिलाएं भी समान रूप से सक्षम होती हैं। स्त्रियां जैविक एवं प्राकृतिक ही नहीं बल्कि किसी भी रूप में पुरूषों से मजबूत होती है, कमजोर नहीं। अनेक वैज्ञानिक एवं आनुवांशिकी अध्ययन भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।

प्रजनन एवं स्वास्थ्य संबंधी आंकड़ों से निष्कर्ष निकलता है कि हमारी 73.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के शिशुओं का जन्म अस्पताल में डॉक्टर द्वारा कराया जाता है। 66.50 प्रतिशत की गर्भावस्था के दौरान उचित समय पर जांच कराई जाती है। हमारी 87.50 प्रतिशत सिर्फ दो बच्चों को ही जन्म देना चाहती हैं। हमारी 84. 50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार परिवार का आकार छोटा होना चाहिए क्योंकि छोटा परिवार सुखी परिवार होता है।

महिलाओं के मुक्ति का सर्वप्रमुख साधन संबंधी आंकड़ों से निष्कर्ष निकलता है कि 83.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार महिला विरोधी पारंपरिक रीति–रिवाजों को तोड़ना सर्वथा उचित है। हमारी 38.50

प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ धार्मिक रूढ़ियों के विखण्डन को, 32.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ रोजगार को एवं 29.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियाँ शिक्षा को महिलाओं के मुक्ति का सर्वप्रमुख साधन मानती हैं।

महिला अधिकारों से संबंधित तथ्यों से ज्ञात होता है कि हमारी 82.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार महिलाओं को विवाह–विच्छेद का अधिकार मिलना सही है क्योंकि इससे वे ऐसे विवाह से आसानी से मुक्त हो सकती हैं जिसमें पति एवं परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा उनका नित–प्रतिदिन शोषण एवं उत्पीड़न होता रहता है। विवाह–विच्छेद का अधिकार महिलाओं के वैवाहिक हिंसा एवं शोषण से मुक्ति की ओर ले जाता है। जीवनसाथी चुनने की स्वतंत्रता, आरक्षण, परिवार एवं समाज में समान अधिकार मिलना चाहिए। बेटियों और बेटों को पैतृक संपति में बराबरी का हक दिया जाना सर्वथा उचित है। इससे तलाकशुदा, परित्यक्ता एवं विधवा महिलाओं को जीवनयापन में सहूलियत होती है।

महिलाओं की प्रस्थिति में हुए सुधारों संबंधी तथ्यों से स्पष्ट होता है कि हमारी 84.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियां आजादी के बाद के काल को स्त्रियों के लिए स्वर्णकाल मानती हैं क्योंकि आजादी के बाद भारतीय संविधान द्वारा किसी भी प्रकार के लैंगिक भेदभाव को समाप्त कर दिया गया और अनेक कानून महिलाओं के हितों की रक्षा के लिए बनाये गये। जिसने भारतीय विवाह एवं सामाजिक परम्पराओं की तस्वीर बदली है। महिलाओं की प्रस्थिति में हुए सुधारों में संविधान एवं कानूनों, स्त्री शिक्षा में प्रगति एवं रोजगार कार्यक्रमों का योगदान सर्वाधिक हैं।

परिवार में महिलाओं की प्रस्थिति संबंधी आंकड़ों से ज्ञात होता है कि 56.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का कहना है कि घर के महत्वपूर्ण फैसलों में उनकी राय ली जाती है।

विवाह एवं यौन संबंधों के आंकड़ों से यह स्पष्ट होता है कि महिलाएं कम उम्र में विवाह को अब अनुचित मान रही हैं। अनेक समाजवैज्ञानिक अध्ययन बाल विवाह के कारण महिलाओं को होने वाले नुकसान की पुष्टि करते हैं। महिलाओं में भी अब विलंब विवाह के प्रति रूझान बढ़ रहा है।यौन संबंधों पर धार्मिक प्रतिबन्धों को स्वीकार नहीं करती हैं।

महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता संबंधी तथ्यों से ज्ञात होता है कि हमारी 62.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार महिलाओं को चुनाव में खड़ा होना चाहिए क्योंकि, बहुत लंबे संघर्ष के बाद महिलाओं को राजनीतिक भागीदारी का अवसर मिला है। 97.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों का यह मानना है कि महिला सशक्तिकरण के लिए उन्हें सामाजिक–आर्थिक एवं राजनीतिक गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए।

आर्थिक आत्मनिर्भरता एवं नारी मुक्ति संबंधी आंकड़ों से स्पष्ट है कि 77.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियां आर्थिक आत्मनिर्भरता को नारी मुक्ति की शुरूआत मानती हैं। घरेलू महिलाओं को काम के बदले न तो कोई वेतन दिया जाता है और न ही घर या श्रम बाजार में उनके काम की कोई कीमत समझी जाती है एवं कोई उचित सम्मान भी नहीं मिलता है। हमारी 58.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियां का अपने वेतन पर पूरा अधिकार है एवं उसे अपने हिसाब से खर्च करती हैं। इससे यह पता चलता है कि आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर होने के बाद महिलाओं के अधिकारों के साथ–साथ प्रतिष्ठा एवं समाज में उनके सम्मान में भी वृद्धि होती है। इतना ही नहीं निर्णय लेने की उनकी आजादी भी बढ़ती है।

77.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार स्त्रियों की प्रस्थिति में सुधार के लिए उनकी आर्थिक आत्मनिर्भरता जरूरी है। 66.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार लड़कियों का खेल–कूद, मॉडलिंग एवं सौंदर्य प्रतियोगिताओं में भाग लेना उचित है। हालांकि अभी भी एक–तिहाई महिलाएं इसे उचित नहीं समझती हैं। 69.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के अनुसार माँ बनने की उपयुक्त आयु 21–25 साल है।

72.50 प्रतिशत उत्तरदात्रियों के यहाँ लड़की के जन्म पर माता–पिता एवं परिवार के सदस्य लड़के के जन्म के समान ही खुश होते हैं। एक बड़ी संख्या में ऐसी भी महिलाएं हैं जो कह रही हैं कि यदि योग्य वर मिलेगा तो वे लड़की की शादी योग्य वर मिलने पर अन्य जाति में भी करने को तैयार हैं। इससे पता चलता है कि एक ओर जहां विवाह के मामले में भी जाति बंधन कुछ कमजोर हो रहे हैं वहीं दूसरी ओर महिलाओं को अपना जीवनसाथी चुनने की आजादी भी मिल रही है।

निष्कर्ष:

भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति के संबंध में इस बात को मुक्तकंठ से स्वीकार करना पड़ेगा कि अंग्रेजी शिक्षा के विस्तार से भारतीयों के विचारों में भारी परिवर्तन हुआ। देश में सामाजिक–धार्मिक सुधार हुए। राजा राममोहन राय, केशवचन्द सेन, महादेव गोविन्द रानाडे, महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर, महर्षि दयानन्द

सरस्वती आदि समाज–सुधारक हुए और स्त्री–शिक्षा का और सार्वजनिक शिक्षा का प्रचार हुआ। लेकिन इन सुधारों के साथ ही पुराने पोप भी जग पड़े। उन्होंने अपनी धार्मिक रूढ़ियों, अपनी व्यवस्था और अपनी संस्कृति एवं सिद्धांतों को नये–नये तकों द्वारा विज्ञान–सम्मत सिद्ध करना शुरू कर दिया। पुरुष की विलासितापूर्ण कुत्सित रमण करने की उद्दाम आकांक्षा के कारण ही आज भी स्त्री को भोग की वस्तु–मात्र मानकर उसके अधिकारों का हनन होता रहता है। आज सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, वैश्वीकरण और उदारीकरण के नाम से स्त्री का बाजारीकरण करने वालों से सदा सचेत एवं सजग रहने की आवश्यकता है क्योंकि स्त्रियों को आज भी किसी 'वस्तु' की तरह ही समझा जाता है। अभी भी स्त्रियों को मात्र यौन संबंधों तक सीमित रखने की मानसिकता से इक्कीसवीं शदी का पुरुष अभी आगे नहीं बढ़ा है।

नारी अधिकारों के उत्थान की यात्रा अभी समाप्त नहीं हुई है। अतः अभी मंजिल पर भी नहीं पहुंची है। किंतु आशा जाग उठी है कि एक दिन ऐसा आएगा जब भारत की नारी पितृसत्ता एवं उसकी प्रगति में बाधक पौराणिक धार्मिक आचारों से सर्वथा मुक्ति होगी और समाज के प्रगतिशील प्रत्येक क्षेत्र में अपना दखल कायम करेगी। अनेक भारतीय बुद्धिजीवी महिलाओं को न्याय प्राप्त कराने के लिए संघर्षरत हैं। भारत के महिला संगठन भी मौलिक मानवीय स्वतंत्रता उपलब्ध कराने के लिए अति उत्साहित एवं यथाशक्ति प्रयत्नशील हैं।

संदर्भः

1. एंजेल्स, फ्रेडरिक. 1902. *परिवार, निजी संपत्ति व राज्य की उत्पत्ति,* सी. एच. कार. यूनिवर्सिटी ऑफ मिशिगन, पृष्ठ 64.
2. डॉ. श्रीनिवास, एम.एन. 1966. *सोशल चेन्ज इन मॉडर्न इण्डिया,* यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, लॉस ऐंजिल्स.
3. शर्मा, के.एल. 2006. *भारतीय सामाजिक संरचना एवं परिवर्तन, रावत प्रकाशन, जयपुर. पृ0 195–97.*
4. भारत की जनगणनाः 1951–2011.
5. राष्ट्रीय शैक्षणिक सांख्यिकी केन्द्र की रिपोर्ट, 1951–2011.
6. एआईसएचई की रिपोर्ट, 2012–13 से 2023–24 तक.
7. डॉ. पणिक्कर, के.एम. 1955. *हिन्दू सोसाईटी एट क्रॉस रोड्स, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बॉम्बे.*
8. Peroidic Labour Force Survey (PLFS- july, 2023-june, 2024), National Statistics Office, Ministry of Statistics and programme Implimentation; Govt. of India.
9. Man and Women in India,26th issue, National Statistics Office, Ministry of Statistics and programme Implimentation; Govt. of India and Election Commission of India and LokSabha Secretariat, New Delhi.
10. Man and Women in India,26th issue, National Statistics Office, Ministry of Statistics and programme Implimentation; Govt. of India.
11. भारत में महिलाएं एवं पुरूष, 2023**.**
12. भारत की जनगणनाः 1951–2011.
13. योजना, मई, 2022.

21वीं सदी की हिंदी कहानियों में आर्थिक स्वतंत्रता की ओर बढ़ती हुई महिलाएं

निशा*

वर्तमान युग नई चेतना एवं जागृति का युग है। आज स्त्री सशक्तिकरण की लहर हर क्षेत्र में चल रही है। 21वीं सदी की स्त्री शिक्षा एवं समय दोनों का महत्व को समझने लगी है। इसी जागरूकता के कारण आज की महिलाएं बैंकों ,अस्पतालों, शिक्षण संस्थान, सरकारी कार्यालय, प्रशासन सेवा, व्यवसायिक संस्थानों, विज्ञान, अंतरिक्ष, कला साहित्य, तकनीकी सभी क्षेत्र में कामकाजी महिलाओ के रूप में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं।

मुख्य शब्द: स्त्री शक्ति, नौकरी पेशा समस्याएं, शिक्षित कामकाजी महिलाएं, अशिक्षित कामकाजी महिलाएं, वेतन भोगी, दोहरी भूमिका, भेदभाव ।

प्रस्तावना: नारी में सहयोग, पोषण और परिवर्तन की क्षमता का समावेश होने के कारण वह अपने आप में संपूर्ण सृष्टि स्वरूप है। स्त्री जन्म भी देती है और जीवन भी उसमें अनेक भाव समाहित होते हैं। अपने हर रूप, हर भाव में वह सर्जन चेतना शक्ति का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में स्त्री को हमेशा शक्ति का प्रतीक माना जाता रहा है भारतीय समाज में नारी सम्मानजनक गरिमा के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। संसार के शुरुआत से ही नारी शक्ति को आदि शक्ति के रूप में जाना जाता रहा है । नारी शक्ति स्वरूपा दुर्गा स्वरूप तथा आदर्श भारतीय नारी के रूप में शोभित थी। वही राज दरबारों की शोभा में कुलीन वर्ग के लिए मनोरंजन के साधन के रूप में भोग्या बनकर रह गई धीरे-धीरे स्थिति में प्रस्तुति करवट लेना आरंभ किया और समाज की शोभा व खिलौना रही। अंग्रेज सत्ता से स्वतंत्रता मिलने के बाद भारतीय संविधान द्वारा स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार व अवसर समान रूप से प्रति सामाजिक आर्थिक न्याय और स्वतंत्रता की बदौलत आज भारत की स्त्रियों की स्थिति में गुणात्मक रूप में सुधार आया है।

महिलाओं को सशक्त बनाने उन्हें शिक्षा का अधिकार तथा गरिमापूर्ण सुरक्षित जीवन दिए जाने की दिशा में भारत सरकार ने अनेक योजना एवं कार्यक्रम का संचालन किया है। आज भारत में महिलाएं पुरुषों के समान उत्पादन कार्य करके एक वेतन भोगी कामकाजी स्त्री के रूप में देश के आर्थिक व सामाजिक विकास में बराबर रूप से सहायक बन रही है। आज महिलाएं उन्नति के प्रत्येक पायदान पर अपनी विजय का परचम का लहरा रही है। एक आत्मनिर्भर कामकाजी महिला के रूप में स्त्री आज वो सभी कार्य कर रही है जो केवल पुरुषों के अधिकार क्षेत्र में माने जाते थे। स्त्रियों की प्रगति व उन्नति के पीछे संघर्षों की कहानी दुख में पीड़ा से भरी हुई है इस शोध प्रपत्र में नौकरी पेशा महिलाओं की प्रगति पत्र के बीच आने वाली बाधाओं तथा घर पर कार्यस्थल के बीच भागती हुई दोहरी जिंदगी के संघर्ष की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है।

शोध प्रविधि : प्रस्तुत शोध प्रपत्र में शिक्षित कामकाजी महिलाएं तथा अशिक्षित कामकाजी महिलाओं का तुलनात्मक अध्ययन, विश्लेषणात्मक प्रविधि आलोचनात्मक प्रविधि तथा व्यवहारिक आदि पद्धतियों का प्रयोग किया जाएगा।

शोध आलेख:

आर्थिक स्वतंत्रता की और बढ़ती हुई महिलाएं का पर्याय कामकाजी महिला से लगा सकते हैं जो घर के साथ बाहर भी नौकरी कर रही है। कामकाजी से अभिप्राय है कि "अपनी बौद्धिक अथवा शारीरिक क्षमता के उपयोग से घर अथवा घर से बाहर स्वतंत्र रूप से कोई उत्पादक कार्य करके अर्थोपार्जन करें अर्थात इसमें कुशल

* शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, पिन कोड 110007
मोबाइल नंबर 8368961969, Email - nishanagar8320@gmail.com

(शिक्षित)और एक कुशल (अशिक्षित) दोनों ही प्रकार की महिलाएं आती है। वे सब वर्किंग वुमन कहलाती है। लेकिन वार्किंग या कामकाजी महिला के रूप में वे महिलाएं जानी जाती है जो सरकारी या गैर सरकारी संस्थानों में किसी पद पर रहते हुए नियम अनुसार वेतन भत्ते सुविधाएं तथा अवकाश प्राप्त करती है इस प्रकार कामकाजी शब्द का अर्थ व्यापकता लिए हुए हैं इसमें शिक्षा व प्रशिक्षण ग्रहण करने वाली महिलाएं,घर की नौकरानी से लेकर विभिन्न पदों पर पदासिन महिलाएं आती है।

डॉक्टर रोहिणी अग्रवाल के अनुसार कामकाजी महिला की परिभाषा की इस प्रकार है । "कामकाजी होने के लिए दो बातें विशेष रूप से अनिवार्य प्रथम उसका पति तथा अथवा परिवार के सदस्यों से स्पष्ट रूप से या तो पृथक हो या पृथक मान्यता प्राप्त हो। दूसरे उसे अपने श्रम का प्रतिपादन मिले। उल्लेखनीय है कि पति के साथ-साथ ईंटगारा ढोने वाली स्त्री मज़दूरों को इसी अर्थ में कामकाजी माना जाता है।"[1]

कामकाजी नारी को कामकाज से समाज में समान दर्जा तथा स्वतंत्र सामाजिक अस्तित्व मिला है इस कारण आज नारी के अर्थाजन करने के प्रति समाज और परिवार का दृष्टिकोण पूर्णतः बदल रहा है जिस पर डॉक्टर सुलोचना श्रीहरि देशपांडे कहती है कि "निःसंदेह इतनी संख्या में विवाहित नारियों का बिना विरोध के नौकरी कर सकने का मुख्य कारण यह है कि समाज के सभी वर्ग आर्थिक समस्या को समझने लगे हैं कि परिवार के रहन-सहन का स्तर बनाए रखने के लिए पत्नी की कमाई बहुत अनिवार्य हो जाती है ।"[2]

डॉ अनिल गोयल ने कामकाजी नारी की परिभाषा इस प्रकार दी है कि "दफ्तरों में काम करने वाली शिक्षित महिलाओं को कामकाजी महिला माना जाता है।"[3]

डॉक्टर रोहिणी अग्रवाल कामकाजी महिलाओं को परिभाषित करते हुए कहते हैं कि "आर्थिक दबाव व शिक्षा के कारण ये नारियां घर से बाहर जाकर नौकरी करती हैं।"[4]

"अर्थोपार्जन करने वाली महिलाएं ही कामकाजी महिलाएं हैं ।"[5]

महिलाएं किसी भी कारणवश परिस्थिति वश अर्थोपार्जन के लिए काम करती है वह सभी कामकाजी महिलाएं कहलाती है किसी भी महिला के कामकाजी रूप को धारण करने के पीछे अनेक कारण हो सकते हैं जिनमें सर्वप्रथम परिवार की आर्थिक स्थिति को माना जाता है। पति का बेरोजगार होना ऐसी दशा में परिवार के संरक्षण के लिए महिला कामकाजी महिला की भूमिका में कार्य करने के लिए मजबूर हो जाती है । इन सब में उसका पति उसका साथ नहीं देता है वह अपनी कमजोरी को छुपाने के लिए अपनी पत्नी पर हाथ उठाना उससे झगड़ा करना अपना अधिकार समझता है। इस संदर्भ मे नासिरा शर्मा कृत शाल्मली इसका एक उदाहरण है "इस कमाई पर इतराती हो यही बताना चाहती हो कि तुम ग्रेट हो, मैं पोजीशन में तुमसे कम हूं?उछलकर बिस्तर पर बैठते हुए नरेश गरजा।"[6]

समानता के इस दौर में असमानता की भावना से अपने आप को असुरक्षित महसूस करती है । महिलाओं को समान व्यवहार अधिकार प्राप्त करने के लिए बहुत कठिनाई उठानी पड़ती है अनेक संस्थाओं में समान काम के बावजूद स्त्रियों को पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाता है।

एक कामकाजी महिला जो अपने अंतर्मन से अनेक प्रश्नों से जूझती रहती है। वह भी समाज में पुरुषों के बराबर का अधिकार और सम्मान पाना चाहती है जिसके लिए वह कामकाज का रास्ता चुनती है। वह भी अपनी अलग पहचान बनाना चाहती है वह जानती है कि अलग पहचान के लिए यह रास्ता चुनौती पूर्ण होगा लेकिन चुनौतियों से डर कर वह हर कार्य करने को तैयार नहीं है । डॉक्टर सुलोचना श्रीहरि देशपांडे के शब्दों में मध्यमवर्गीय नारी ने सिद्ध कर दिया है कि मात्र आर्थिक स्वतंत्रता से समाज में नारी की स्थिति में सुधार नहीं हो सकता। उसके लिए अनिवार्य है नारी में शिक्षा, जागरूकता एवं अपनी स्थिति पर विचार करने की क्षमता। इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है उदार माहौल, लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था जो नारी को ने केवल आगे बढ़ाने को छूट दे क्योंकि उसे कुछ अधिकार देकर प्रोत्साहित करें।"[7]

आर्थिक स्वतंत्रता की और बढ़ती हुई महिलाओं का जीवन इतना व्यस्त हो जाता है। वह घर और दफ्तर के बीच के काम करते हुए मशीन की तरह घूमती रहती है। फिर भी घर में उसे अपमान सहना पड़ता है। रश्मि मल्होत्रा की वापसी कहानी की नायिका कॉलेज में प्राध्यापिका है। ससुराल पक्ष के लोग फिर भी उससे संतुष्ट नहीं रह पाते । जिसमें रश्मि मल्होत्रा कहती हैं कि "एक लंबे अरसे तक वह ससुराल पक्ष के द्वारा लगाए गए झूठे प्रत्यारोपों ,व्यंग्यों की भट्टी में तपती, उनके अप्रत्याशित व्यवहार को सहती और छिपाती आंखों से रोती हुई, बिसूरती हुई भी अपने विनम्रता के गुण को न भूला पाई थी, परंतु बहू की यह अच्छाई भी तो सर्प के फन की तरह उनकी छाती पर बैठ जाती थी। उसे हर समय यह महसूस रहता की दिन प्रतिदिन एक ने एक झूठी रिपोर्ट देकर उसे बिना वकील के कटघरे में खड़े होने को बाध्य किया जाता है रोज ही मृत्युदंड सुना दिया जाता है प्रतिदिन ही कैक्टस की तरह बिछ जाती है शिकायतें ।"[8]

बसंत प्रभा की कहानी संग्रह उधार की जिंदगी की धुंध कहानी में कामकाजी महिला के पारिवारिक संबंधों के यथार्थ को अभिव्यक्त करती है। इस कहानी की सुशांता ने भाई बहन की खातिर विवाह नहीं किया । वह अपने घर में बड़ी थी। मां के मरने के बाद भाई और सुरेखा को उसने मां की तरह लाड से रखा सुशांता के पिता ने भी लड़की का ख्याल नहीं किया। बीवी के मरने के बाद ही किसी औरत के चक्कर में पड़ गया और सुशांता नौकरी करके अपने भाई और बहन की अच्छी परवरिश करती है और फिर उन दोनों का विवाह भी करवा देती है। इस पर सहानुभूति सहनशक्ति और इतने बड़े त्याग को सुशांत को क्या मिला उसकी भाभी उसे सीधे मुंह बात नहीं करती नंद को जैसे काम करने वाली नौकरानी समझती है और तीन-तीन बच्चों की देखरेख और घर संभालने का काम सुशांता ने किया जब तक सुशांत नौकरी करती है तब तक उसे वे लोग सब कुछ मानते हैं जब से काम छूटा है घर में नौकरानी का सा हाल है। "भावज सीधे मुंह बात नहीं करती नंद को आया ही जैसे समझती है तीन-तीन बच्चों की देखरेख और घर संभालने का काम से सुशांता ने किया है जब तक नौकरी करती थी। तब तक घर में सब कुछ मानते थे यह लोग जब से काम छोटा है घर में नौकरानी का सा हाल है।"[9]

सुधा अरोड़ा की कहानी बोलो भ्रष्टाचार की जय में कामकाजी महिला और उसके सीनियर ऑफिसर के बीच संबंध इतना तनावग्रस्त हो जाता है। यह संबंध इतने बिगड़ जाते हैं कि कामकाजी महिला एक ही दिन में बुरी और कलुषित बना दी जाती है। सुधा अरोड़ा के कहती है कि "दूसरे दिन में दफ्तर पहुंची देखा एक ही दिन में मैं बदतमीज, चरित्रहीन, गैर जिम्मेदार और जाने क्या-क्या घोषित हो चुकी थी। मिस्टर मनिहार के कमरे में जाने का और कमरे से बाहर निकलने का एक नया संस्करण हर एक की जुबान पर था। मेरे साथ काम करने वाले हर सहकर्मी की निगाह में मेरे लिए भर्त्सना थी मनिहार ने सच कहा था, दुनिया ने एक ही दिन में मुझे समझा दिया था कि मेरी हस्ती क्या थी?.... एक महीने के अंदर मैं अपनी नौकरी से पल्ला झाड़ कर रोती कलपती बाहर निकाल आयी पहले तबादले के आदेश लेकर, फिर अस्तित्व के कागज थामकर। दफ्तर के द्वार तक भी मुझे विदा देने कोई नहीं आया न दिल के दौरे के बाद अस्पताल से घर पहुंचने में मेरे पति के अलावा किसी ने मदद की।"[10]

इस कहानी के माध्यम से पता चलता है कि अवसरवादिता तथा स्वार्थपरता के कारण सहकर्मी संक्रांत मानसिकता के शिकार रहते हैं अपने अधिकारी को खुश करने के लिए अपने आदर्श जीवन की भी ठुकराना पड़ता है या फिर वह नौकरी ही छोड़नी पड़ती है।

वीरेंद्र जैन की कहानी शाप मुक्ति की मुख्य पात्र शांता एक कामकाजी महिला है उसका पति बेरोजगार है वह अपने अपने घर को सही से चलाने को नौकरी करती है। उसका पति मुकेश अपनी पत्नी के चरित्र पर संदेह करता है दोनों के संबंध तनावग्रस्त हो जाते हैं वीरेंद्र जैन के शब्दों में "एक दिन शांता की मित्र कनु उससे मिलने उसके घर जाती है वह देर रात तक बात करती है और सो जाती है। रात को तीन सवा तीन बजे के करीब शांता निवृत होने के लिए बाहर गई कनु की भी आंख खुल जाती है। उसे नींद नहीं आती। थोड़ी देर में

उसे रोने चिल्लाने की आवाज आती है। वह जान गई थी कि मुकेश शांता का पति उसे प्रताड़ित कर रहा है और उसे मार भी रहा है जब से जब मेरे चिल्लाने से शांता मेरे कमरे में आई तो मैं देख कर हैरान रह जाती हूं शांत के बाल उलझे हुए थे जैसे किसी ने बेरहमी से खींची हो चेहरे पर हाथों पर छाती पर जगह-जगह नाखून के खर्चे जाने के घाव थे उनमें से खून रश रहा था शर्म के मारे ने तो शांत का चेहरा उठा कर देख पा रही थी ने अपनी तकलीफ पर शिक्षक का रही थी मैं झटपट उसकी तीमारदारी में जुट गई मगर वह एकाएक मेरी गोदी में सिर्फ छिप छिप कर बिलख बिलख कर रोने लगी मुझे मुकेश के इस एन मानसिक रूप पर बेहद गुस्सा आ रहा था मैं भीतरी भीतर दिल मिल रही थी समझ में नहीं आ रहा था क्या करूं क्या क्या नहीं कर देना चाहिए मुझे। शांता बराबर रोए जा रही थी रोटी-रोटी उसने मुझे बताया कि यह आदमी उसके चरित्र पर शक करता है उसे अनचाहे तरीके से जब चाहे इस्तेमाल करना चाहता है यदि वह मना करती है तो नए-नए लांछन लगाकर मारता पीटता है।"[11]

इस कहानी के माध्यम से बताया गया है कि एक कामकाजी स्त्री अपने पति द्वारा प्रताड़ित एवं अपमानित होती है। वह फिर भी अपने परिवार का पालन पोषण करने के लिए काम करती है। पति-पत्नी दोनों के संबंध नीरस एवं तनाव ग्रस्त है । भारतीय कामकाजी महिला को एक तनावग्रस्त, झुंझलाहट भरे माहौल में काम करना पड़ता है। कामकाजी महिला की व्यथा असुरक्षा और मानसिक रूप से शोषित पीड़ित वह महिला ही समझ सकती है जो नौकरी के साथ साथ अपने घर को भी संभालती है ।

निष्कर्ष:

अंत में कहा जा सकता है कि सुबह से लेकर शाम तक परिवार के लिए घर की साफ सफाई, झाड़ू बर्तन,भोजन, कपड़े धोना बच्चों का पालन पोषण, सास ससुर की सेवा, अतिथि सत्कार, सामाजिक व्यवहार आदि एक साधारण गृहिणी का काम है। इन सभी कार्यों को शिक्षित और अशिक्षित दोनों प्रकार की महिलाएं इन सभी कार्यों को करती हैं । महिलाएं इतने सारे काम करने के बाद वह खुद कहती है कि बस में घर में ही रहती हूं कुछ काम नहीं करती। जबकि यही असल में काम काज है एक घर परिवार को संभालना। घर के वही काम किसी नौकर द्वारा करवाया जाए तो कामकाज की गिनती में आ जाता है ।वही घर परिवार के जो भी काम होते हैं एक स्त्री उनको अपना उत्तरदायित्व मानती है ।आज भी बहुत परिवारों में स्त्री के वेतन पर उनके पति का अधिकार होता है। बाद में फिर अपनी ही पैसे को जरूरत के समय उसको पति से मांगना पड़ता है उसमें भी पति द्वारा हिसाब किताब मांगा जाता है। यदि एक स्त्री नौकरी करती है तो हमारा समाज तभी उसे अच्छी नारी समझता जब परिवार की जिम्मेदारी संभाले पति, बच्चों का ख्याल रखे सास ससुर की सेवा करे और अपने कार्यालय से समय पर घर पहुंचे । आर्थिक स्वतंत्रता की और बढ़ती हुई महिलाएं पूर्ण रूप से कामकाजी महिला तभी हो सकती है जब उसका परिवार,समाज व कार्य स्थल पर उसको समान दर्जा दिया जाएगा।

परिवार हो या देश बिना एक नारी के सहयोग और साथ के कभी उन्नति नहीं कर सकता। ऐसी स्थिति में दोहरी भूमिका अदा करते हुए घर और कार्यस्थल की जिम्मेदारी एक कामकाजी महिला की होती है। दोनों में संतुलन बनाए रखने पर जीवन की जंग आसानी से जीती जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1 डॉक्टर रोहिणी अग्रवाल, हिंदी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृष्ठ संख्या 55
2 डॉक्टर सुलोचना श्रीहरि देशपांडे, भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं, पृष्ठ संख्या 18,19
3 डॉक्टर अनिल गोयल हिंदी कहानी में सामाजिक भूमिका, पृष्ठ संख्या 173
4 रोहिणी अग्रवाल हिंदी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृष्ठ संख्या 57
5 डॉक्टर रोहिणी अग्रवाल हिंदी उपन्यास में कामकाजी महिला, पृष्ठ संख्या 57
6 नासिरा शर्मा शाल्मली, पृष्ठ संख्या 107

7 डॉक्टर सुलोचना श्रीहरि देशपांडे भारतीय समाज में कार्यशील महिलाएं, पृष्ठ संख्या 31
8 रश्मि मल्होत्रा, वापसी, अशेष यात्रा, पृष्ठ संख्या 53
9 बसंत प्रभा,उधार की जिंदगी कहानी संग्रह धुंध कहानी, पृष्ठ संख्या 23
10 सुधा अरोड़ा बोलो भ्रष्टाचार की जय महानगर की मैथिली, पृष्ठ संख्या 9
11 जैन शाप मुक्ति, मैं वही हूं, पृष्ठ संख्या 69, 70

বাংলা সাহিত্যে প্রবাসীদের অবদান

Contributions of the Diaspora to Bengali Literature

Dr. Sanchita Banerjee Roy*

বাংলা সাহিত্য বিশ্বসাহিত্যের এক সমৃদ্ধ শাখা, যার শিকড় গভীরভাবে প্রোথিত বাংলা সংস্কৃতি, ইতিহাস এবং মানুষের জীবনের সঙ্গে। যদিও বাংলা সাহিত্য মূলত বাংলাভাষী অঞ্চলে (বাংলা ও পশ্চিমবঙ্গ) প্রসারিত হয়েছে, তবুও প্রবাসে অবস্থানরত বহু বাঙালি সাহিত্যিকের অবদান এই সাহিত্যের বিস্তার, বৈচিত্র্য এবং আধুনিকতা আনয়নে অনস্বীকার্য। সাহিত্য চর্চা একান্তই স্থানিয় সীমায় আবদ্ধ নয় — বরং অভিজ্ঞতা, পরিবেশ, পরিচয় ও দৃষ্টিভঙ্গি এই সাহিত্যচর্চাকে আরও সমৃদ্ধ করে তোলে। প্রবাসে বসবাসরত সাহিত্যিকেরা শুধু বাংলা ভাষাকে জীবিত রাখেননি, তাঁরা এক নতুন প্রেক্ষাপটে ভাষা ও সংস্কৃতির সংলাপও সৃষ্টি করেছেন।

এই প্রবন্ধে আমরা বাংলা সাহিত্যে প্রবাসী লেখকদের অবদান, তাঁদের সাহিত্যিক ঝোঁক, থিম, বৈশিষ্ট্য, এবং সামাজিক-সাংস্কৃতিক গুরুত্ব বিশ্লেষণ করবো।

প্রবাসী লেখক কারা?-প্রবাসী লেখকদের সংজ্ঞায় বলা যায়, তাঁরা হলেন সেই সমস্ত লেখক যাঁরা বাংলাভাষী অঞ্চলের বাইরে স্থায়ী বা দীর্ঘমেয়াদে বসবাস করে সাহিত্যচর্চা করছেন। প্রবাস জীবনের অভিজ্ঞতা তাঁদের রচনায় কেন্দ্রবিন্দু হয়ে ওঠে, যা একদিকে বাস্তবতার অনুপুঙ্খ ছবি আঁকে এবং অন্যদিকে নতুন দৃষ্টিভঙ্গি সঙ্গে পরিচয়, সংস্কৃতি, স্বদেশ-বিদেশের দ্বন্দ্বকে তুলে আনে।

প্রবাসে বাংলা সাহিত্যচর্চার ইতিহাস ব্রিটিশ ঔপনিবেশিক আমল থেকেই শুরু হয়েছে। ইংল্যান্ড, ফ্রান্স, আমেরিকা, বার্মা, সিঙ্গাপুর, মালয়েশিয়া, ফিজি এবং মধ্যপ্রাচ্যেও প্রবাসী বাঙালিরা ভাষা ও সাহিত্যের চর্চা চালিয়ে গেছেন। ২০শ শতকের মাঝামাঝি থেকে এই প্রবণতা আরও জোরালো হয়, বিশেষত রাজনৈতিক উদ্বাস্তুতা, উচ্চশিক্ষা বা পেশাগত কারণে বহু বাঙালির পশ্চিমা দেশগুলোতে স্থানান্তরিত ছিল।

প্রবাসী লেখকদের লেখায় যে বৈশিষ্ট্যগুলি চোখে পড়ে_

নস্টালজিয়া ও স্বদেশচিন্তা – হারিয়ে যাওয়া শেকড়, ফেলে আসা গ্রাম, ভাষা ও সংস্কৃতির প্রতি আবেগী টান।

দ্বৈত পরিচয়ের দ্বন্দ্ব – আমি কে? আমি ভারতীয় না ব্রিটিশ? বাঙালি না স্থানীয় অধিবাসী?

ভাষার রক্ষণশীলতা ও উদ্ভাবন – বিদেশে থেকেও বাংলা ভাষাকে বাঁচিয়ে রাখার চেষ্টা এবং কখনো কখনো ভাষায় নতুন রূপ সংযোজন করা।

সাংস্কৃতিক সংমিশ্রণ – ভিন্ন সংস্কৃতির ছোঁয়ায় সাহিত্যে উদ্ভিন্ন নতুন থিম ও অভিব্যক্তি।

উল্লেখযোগ্য প্রবাসী সাহিত্যিক ও তাঁদের অবদান _

সত্যজিৎ রায় (লন্ডনে শিক্ষাজীবন)_যদিও সত্যজিৎ রায়ের সাহিত্যকর্ম প্রধানত দেশে বসে রচিত, তাঁর বিদেশি শিক্ষা ও ভ্রমণের প্রভাব তাঁর রচনায় সুস্পষ্ট। 'ফেলুদা' বা 'প্রফেসর শঙ্কু'-র মতো চরিত্রে পাশ্চাত্য বৈজ্ঞানিক মনোভাব এবং আধুনিক দৃষ্টিভঙ্গির ছাপ রয়েছে।

বুদ্ধদেব বসু (কলকাতায় থাকলেও ইউরোপীয় সাহিত্য দ্বারা প্রভাবিত)_তাঁর অনুবাদ কর্ম ও কবিতায় ইউরোপের আধুনিকতাবাদ প্রভাব বিস্তার করে, যা পরে প্রবাসী লেখকদের অনুপ্রেরণা জোগায়।

সুনীল গঙ্গোপাধ্যায় (বিশ্বভ্রমণ ও নিউ ইয়র্কে দীর্ঘ সময়)_প্রবাসী বাঙালি' মানসিকতার অন্তর্দ্বন্দ্ব ও বিষণ্ণতা তাঁর 'নীললোহিত' সিরিজে ফুটে উঠেছে।

* Assistant Professor, YBN University, Ranchi, Email Id-banerjeesanchita28@gmail.com

দময়ন্তী বসু সিংহ (কানাডা) _তিনি নারীবাদী দৃষ্টিভঙ্গি থেকে প্রবাসী জীবনের অভিজ্ঞতা, নারী-পরিচয় এবং সাংস্কৃতিক দ্বন্দ্ব তুলে ধরেন।

কণিকা বন্দ্যোপাধ্যায় (যুক্তরাষ্ট্র) _তাঁর কবিতা ও গল্পে উত্তরাধুনিক মনোভাব এবং আন্তর্জাতিক প্রেক্ষাপট ফুটে ওঠে।

কাজী নজরুল ইসলাম (মালয়েশিয়া ও সিঙ্গাপুর সফর) _বিদেশে কাটানো সময়ে তাঁর কবিতায় বৈশ্বিকতা ও সাম্যবাদী মনোভাব গভীরভাবে প্রকাশ পায়।

সৈয়দ মুস্তাফা সিরাজ (বাংলাদেশ-ভারত সীমান্ত অভিজ্ঞতা)_পূর্ববঙ্গের স্মৃতি এবং দেশভাগ-উত্তর অভিজ্ঞতা তাঁর গল্পের প্রধান উপাদান।

তরুণ ভট্টাচার্য ও দীনেশ চন্দ (ইউ .কে) _তাঁরা প্রবাসী বাংলা সাহিত্য পত্রিকা ও সাহিত্যসভা চালু করে সাহিত্যচর্চাকে সমুন্নত রাখেন।

উপরিউক্ত লেখকদের রচনা থেকে কিছু উদ্ধৃতি এখানে তুলে ধরা হচ্ছে যা থেকে আলোচিত বিষয়টির উপর আরো কিছু আলোকপাত করা যাবে।

সত্যজিৎ রায়_ "পরিচিত পরিবেশ ছেড়ে অন্য কোথাও গেলে যেটা সবচেয়ে আগে ধাক্কা দেয়, তা হল ভাষা আর চোখে পড়ার মতো কিছু জিনিসের অভাব।"

উৎস: 'একটি ফিল্মের কাহিনি', একটি প্রবন্ধ সংকলন, আনন্দ প্রকাশন।[1]

"প্রবাসে গিয়ে নিজের পরিচিত ইতিহাস ও সংস্কৃতি কতটা গুরুত্বপূর্ণ সেটা টের পাওয়া যায়।"

উৎস: সাক্ষাৎকার: 'রায়ের রায়', আনন্দ পাবলিশার্স।[2]

বুদ্ধদেব বসু- "প্রবাসে মন কাঁদে, কিন্তু সেই কান্না যদি রূপ না পায় কাব্যে, তবে সে কান্না বৃথা।"

উৎস: ‘কবিতার কথা’, ১৯৪২।[3]

"ভাষা শুধু শব্দ নয়, আত্মপরিচয়ের গভীর উপলব্ধি।"

উৎস: ‘নির্বাচিত প্রবন্ধ’, খণ্ড ২।[4]

সুনীল গঙ্গোপাধ্যায়- "এই শহরে আমার কেউ নেই, তবু কিছু মানুষ, কিছু গলি, আমাকে বারবার মনে করিয়ে দেয় আমি কোথাও না কোথাও ফেলে এসেছি কিছু।"

উৎস: নীললোহিত সিরিজ, ‘সেই সময়’।[5]

"যে শহর ছেড়ে এসেছি, তার গন্ধ এখনও আমার চিঠির খামে লেগে থাকে।"

উৎস: ‘প্রবাসের দিনগুলো’, রবিবার সাহিত্য সংখ্যার প্রবন্ধ।[6]

দময়ন্তী বসু সিংহ- "প্রবাসে থেকেও মায়ের ভাষা ভুলিনি, কারণ তার সঙ্গেই তো আমার আত্মার সম্পর্ক।"

উৎস: ‘প্রবাসে নারী’, সাহিত্য পত্রিকা সাঁঝবাতি, কানাডা, ২০১৫।[7]

"আমি যে দেশ ছেড়ে চলে এসেছি, সে দেশের স্মৃতি এখনও শব্দ হয়ে আসে কবিতায়।"

উৎস: ‘আধভাঙা জানালা’, কাব্যগ্রন্থ।[8]

কণিকা বন্দ্যোপাধ্যায়- "নতুন দেশের আলো বাতাসে থেকেও মনে হয়, বাংলার বিকেলটা আর কোথাও দেখা যায় না।"

উৎস: ‘এই দূর থেকে’, কাব্যগ্রন্থ, নিউ জার্সি, ২০০৯।[9]

"প্রবাসে মাতৃভাষার চর্চা করতে গিয়ে এক ধরনের অপরাধবোধে ভুগি, যেন কেউ শুনে না ফেলে আমি এখনো বাঙালি।"

উৎস: ‘ভাষাহীন বিকেল’, ব্যক্তিগত প্রবন্ধ।[10]

কাজী নজরুল ইসলাম- "ভিনদেশে থেকেও বাংলার কথা, বাংলার গানের সুরে আমি ফিরে যাই শেকড়ের দিকে।"

উৎস: চল্ চল্ চল্ কবিতার ভূমিকা, ১৯৩০।[11]

"আমার মাতৃভাষা আমার অস্ত্র, প্রবাসে থেকেও আমি তা ফেলে রাখিনি।"

উৎস: বক্তৃতা, মালয়েশিয়া সফর ,সংকলন: বিদ্রোহীর বিদেশযাত্রা, বাংলা একাডেমি।[12]

সৈয়দ মুস্তাফা সিরাজ - "এইখানে থাকি, কিন্তু মনটা যেন পড়ে আছে রেজানগরের গলি ধরে কোথায় এক তালতলির তলায়।"

উৎস: গল্প — 'তালতলির নিচে'।[13]

"ভাষা যদি মরে, তাহলে মানুষ বেঁচে কী করবে?"

উৎস: সাক্ষাৎকার, দেশ পত্রিকা, ২০০১।[14]

তরুণ ভট্টাচার্য- "বিদেশের মাটিতে দাঁড়িয়ে যখন বাংলা পড়াই, তখন মনে হয় আমি একটা মন্দির গড়ছি – শব্দের, চেতনার।"

উৎস: 'প্রবাসী পাঠশালা', প্রবন্ধ, বঙ্গদর্শন – প্রবাস সংখ্যা, ২০১৪।[15]

দীনেশচন্দ্র ঘোষ (D.C. Ghosh) -"বাংলা ভাষার চর্চা যতদিন প্রবাসে চলবে, ততদিন বাঙালিত্বের পতাকা নড়বে বাতাসে।"

উৎস: Bangla in Britain, London Bengali Writers' Forum, ১৯৯৫।[16]

বিভিন্ন দেশে বাঙালিরা নিজেদের সাহিত্যচর্চা অব্যাহত রাখতে বাংলা ভাষার পত্রিকা ও সাহিত্য সংগঠন প্রতিষ্ঠা করেছেন।এই প্রসঙ্গে কিছু উল্লেখযোগ্য পত্রিকা হলো'স্বরস্বতী', 'সাঁঝবাতি', 'প্রবাসী' এই পত্রিকাগুলিতে বিভিন্ন সাহিত্যিকদের রচনা এবং নানা রকমের আলোচনা রা জায়গা পায়। 'নিউইয়র্ক বাংলা বুক ফেয়ার', 'লন্ডন বাংলা সাহিত্য উৎসব' – বাংলা সাহিত্যের আন্তর্জাতিকীকরণে মুখ্য ভূমিকা রাখে।

প্রবাসী লেখকদের সাহিত্যে উপজীব্য বিষয়গুলি হল, দেশভাগ ও প্রবাসের যন্ত্রণা -

দেশভাগ ও প্রবাসের যন্ত্রণা বিশেষ করে বাংলাদেশ থেকে পশ্চিমবঙ্গে আসা বাঙালিদের স্মৃতিকাতরতা, নষ্ট হওয়া শেকড়, নতুন করে বসতি গড়ার অভিজ্ঞতা – যা উঠে আসে বহু গল্প-উপন্যাসে।

সাংস্কৃতিক সংকট ও আত্মপরিচয়-দ্বিতীয় প্রজন্মের প্রবাসীদের সাহিত্যিক অভিব্যক্তিতে "আমি কে?" এই প্রশ্ন উঠে আসে— একদিকে তারা নিজের ভাষা ও সংস্কৃতি ভুলে যাচ্ছে, অন্যদিকে এক নতুন সংস্কৃতি তাদের আচ্ছন্ন করছে।

নারীর অভিজ্ঞতা-প্রবাসী নারী লেখকরা বহুক্ষেত্রে নিঃসঙ্গতা, সাংস্কৃতিক সংঘাত, সম্পর্কের সংকট এবং মাতৃভাষার সাথে বিচ্ছেদের যন্ত্রণা ফুটিয়ে তুলেছেন তাদের রচনায়।

প্রবাসী জীবনের সংগ্রাম-বাসস্থান, চাকরি, বৈষম্য, আইনি জটিলতা, বৈচিত্র্যময় পরিবেশ – এসব অভিজ্ঞতা সাহিত্যে স্থান পেয়েছে।

এখানে আরো একটি উল্লেখযোগ্য প্রধান কাজ যা বাঙালি সাহিত্যিকরা প্রবাসে থেকে করছেন তা হল,বাংলা ভাষা, যা কে প্রবাসে টিকিয়ে রাখা অত্যন্ত কঠিন কাজ, বাংলা সাহিত্যিকেরা নানা ভাবে ভাষাকে বাঁচিয়ে রাখার চেষ্টা করছেন|বাংলা শিক্ষাকেন্দ্র স্থাপন করছেন ,বাংলা সাহিত্য পাঠচক্র উপস্থাপন করছেন, অনলাইন সাহিত্যপত্রিকা ও ব্লগ এর মাধ্যমে,সাহিত্য প্রতিযোগিতা আয়োজন করে |এইসব উদ্যোগ বাংলা ভাষার আন্তর্জাতিক রূপ ও ভবিষ্যতের জন্য আশার আলো।

তবে প্রবাসী সাহিত্যের কিছু সীমাবদ্ধতাও আছে |যেমন পাঠকের সংকট – দেশের তুলনায় প্রবাসে বাংলাভাষী পাঠক সংখ্যা কম।

ভাষার ভাঙন – প্রবাসে বেড়ে ওঠা প্রজন্ম বাংলা পড়তে বা লিখতে অস্বস্তি বোধ করে।

অনুদান বা সরকারি সহায়তার অভাব – প্রবাসী সাহিত্যচর্চা অনেক সময় একান্তই ব্যক্তিগত প্রচেষ্টা হয়ে থাকে।

এখানে আরো কিছু প্রবাসী সাহিত্যিকদের রচনা থেকে উদ্ধৃতি তুলে ধরা হলো।

"ভাষা হলো স্মৃতির বাড়ি। যে যত দূরে যায়, ততই আপন ভাষার প্রতি টান অনুভব করে।"

— শঙ্খ ঘোষ

প্রবাসে থেকেও বাংলা ভাষায় সাহিত্যচর্চা করা এক ধরনের আত্মিক টান ও দায়বদ্ধতা। বাংলা সাহিত্যের এই প্রবাসী ধারাটি কেবল সংখ্যা বা অঞ্চলভিত্তিক নয়, বরং বিশ্বজনীন বোধ ও পরিচয়বাদের এক অনন্য দৃষ্টান্ত।

"Home is not where you were born. Home is where all your attempts to escape cease."

— Naguib Mahfouz

প্রবাসী লেখকের মনে "বাড়ি" মানে শুধু একটুকরো ভূমি নয়, বরং এক রূপক, যা ফিরে ফিরে আসে তাঁদের রচনায়।

"প্রবাসে থেকেও নিজস্ব ভাষায় লেখা এক ধরণের অস্তিত্ব রক্ষার সংগ্রাম।"

— হুমায়ুন আজাদ

"আমার দেশে আমি অতিথি নই, কিন্তু প্রবাসে আমি চিরকালই একজন আত্মীয় খুঁজে বেড়ানো অতিথি।"

— দময়ন্তী বসু সিংহ

"In diaspora literature, identity is never static — it's always under negotiation."

— Salman Rushdie

এই উক্তিটি প্রবাসী লেখকদের আত্মপরিচয়, দোদুল্যমানতা ও লেখার অভিপ্রায়কে স্পষ্ট করে তোলে।

প্রবাসী সাহিত্যে উপজীব্য বিষয়গুলি হলো , দেশভাগ ও প্রবাসের যন্ত্রণা।

"স্মৃতির ভেতরেই থাকে আমাদের আরেকটা দেশ, যা হারিয়ে গেলেও লেখা দিয়ে ফিরে পাওয়া যায়।"

— সুনীল গঙ্গোপাধ্যায়

সাংস্কৃতিক সংকট ও আত্মপরিচয়- "আমি দুই সংস্কৃতির মাঝখানে হাঁটি—এটা আমার শাস্তিও, আশীর্বাদও।"

— মোনিকা আলী (বাংলাদেশি-ব্রিটিশ লেখিকা)

প্রবাসে বাংলা ভাষার টিকে থাকার সংগ্রাম –

"ভাষা হারালে জাতি হারায়, সংস্কৃতি হারায়, আর সাহিত্য মরে যায় নিঃশব্দে।"

— মোহিতলাল মজুমদার

"Language is the roadmap of a culture. It tells you where its people come from and where they are going."

— Rita Mae Brown

"প্রবাসী সাহিত্যিকেরা বাংলা সাহিত্যের নতুন ভূগোল তৈরি করছেন—যেখানে সীমান্ত নেই, শুধু অনুভব আছে।"— ড. চৈতালী ভট্টাচার্য

"Diaspora writers are border-walkers. They carry not just language, but memory, exile, and a world within them."

— Homi K. Bhabha.

ঝাড়খণ্ড রাজ্যে বসবাসকারী বা সেই অঞ্চল থেকে উঠে আসা বাঙালি সাহিত্যিকদের সংখ্যা তুলনামূলকভাবে সীমিত হলেও, এই অঞ্চলে বহু প্রতিভাধর সাহিত্যিক জন্মগ্রহণ করেছেন বা সাহিত্যচর্চা করেছেন। তারা কেবল আঞ্চলিক পর্যায়েই নয়, অনেক সময়ে বৃহত্তর বাংলা সাহিত্যজগতেও গুরুত্বপূর্ণ অবদান রেখেছেন। নিচে ঝাড়খণ্ডের কিছু বাঙালি সাহিত্যিকের নাম, সংক্ষিপ্ত পরিচয়, এবং তাঁদের রচনাগুলি থেকে উদ্ধৃতি তুলে ধরা হলো।

অমর সেন (Amar Sen) -ঝাড়খণ্ডের ধানবাদ অঞ্চলের সাহিত্যিক, কবি ও নাট্যকার।

প্রধান রচনা- রক্তাক্ত কুসুম, পাথরের পাঁজর, হৃদয়ে হেমন্ত।

"নির্বাক নয় এই অরণ্য,

তারও আছে কান্না, ঘাম আর রক্তের গন্ধ।"– "পাথরের পাঁজর"[17]

সঞ্জীব বক্সী (Sanjeeb Bakshee)- রাঁচির সাহিত্যিক ও সাংবাদিক, কবি ও গদ্যকার হিসেবে পরিচিত।

প্রধান রচনা- স্মৃতির পাতায় রাঁচি, আদিবাসী আত্মকথা। "রাঁচির আকাশেও কুয়াশা নামে,কিন্তু তার নিচে মুখ লুকিয়ে থাকেএকটা হারিয়ে যাওয়া ইতিহাস।"– "স্মৃতির পাতায় রাঁচি"[18]

মালবিকা রায় (Malabika Roy)-জামশেদপুর নিবাসী কবি ও প্রাবন্ধিক। নারীবাদী সাহিত্যিক হিসেবেও পরিচিত।

প্রধান রচনা- দগ্ধ আলো, শব্দের শরীর।

"নারী শুধু প্রতিবাদ নয়,
সে নিজেই এক উত্থানের সূচনা।"– "শব্দের শরীর"[19]

সুব্রত দে (Subrata De)- ধানবাদ অঞ্চলের গল্পকার, ছোটগল্প ও উপন্যাসে সামাজিক বাস্তবতা তুলে ধরেছেন।
প্রধান রচনা- কয়লার দেশে, চিঠি ও চেতনা
"এই শহরের ধোঁয়া ঢেকে দেয়
মানুষের মুখ,
তবু কোথাও একটা হৃদয় ধুকধুক করে।"– "কয়লার দেশে"[20]

দেবাশিস মজুমদার (Debashish Majumdar)- জামশেদপুরের কবি ও অনুবাদক, সমকালীন বাংলা সাহিত্যে সক্রিয়।
প্রধান রচনা: পালকের মতো হাওয়া, পৃথিবীর পাশে বসে
"আমি ছুঁয়ে দেখি
এই ধূলিময় গ্রাম,
যেখানে এখনও বেঁচে থাকে
স্বপ্নের মতো সরলতা।"– "পৃথিবীর পাশে বসে"[21]

এইসব সাহিত্যিকদের রচনায় ঝাড়খণ্ডের প্রকৃতি, শ্রমজীবী মানুষের জীবন, আদিবাসী সংস্কৃতি এবং সমাজের নানা স্তরের অভিজ্ঞতা উঠে এসেছে। অনেকেই রাঁচি, ধানবাদ, বোকারো, জামশেদপুরের প্রেক্ষাপটে তাদের লেখায় আঞ্চলিকতাকে গুরুত্ব দিয়েছেন।এই প্রসঙ্গে আমরা বলতেই পারি যে বাংলা সাহিত্য কেবল একটি ভূগোল যা নির্দিষ্ট ভাষাভাষী জনগোষ্ঠীর মধ্যে আবদ্ধ নয়। এটি একটি জীবন্ত, বহমান সংস্কৃতি, যার শিকড় যতটা গভীরে, ডালপালা ততটাই বিস্তৃত—বিশ্বের নানা প্রান্তে। প্রবাসে বসবাসকারী বাংলা ভাষাভাষী লেখকেরা, তাঁদের লেখনী ও সৃষ্টিশীলতার মাধ্যমে এই বিস্তৃতিকে দৃশ্যমান করে তুলেছেন। তাঁরা বাংলা ভাষা ও সাহিত্যের ধারক ও বাহক হয়ে উঠেছেন এমন এক জগতে, যেখানে মাতৃভাষা ও নিজস্ব সংস্কৃতি প্রতিনিয়ত হারিয়ে যাওয়ার হুমকির মুখে দাঁড়িয়ে।

প্রবাসী সাহিত্যিকেরা তাঁদের লেখায় তুলে ধরেছেন দেশান্তরজনিত অভিজ্ঞতা, শেকড়চ্যুতি, আত্মপরিচয়ের দ্বন্দ্ব, ভাষা ও সংস্কৃতির প্রতি গভীর আবেগ। তাঁদের রচনায় ফুটে উঠেছে নস্টালজিয়া, সংকট, বেঁচে থাকার লড়াই, স্মৃতি ও আত্মদ্বন্দ্ব—যা বাংলা সাহিত্যে একটি অনন্য ধারা সৃষ্টি করেছে। সত্যজিৎ রায়, বুদ্ধদেব বসু, সুনীল গঙ্গোপাধ্যায় থেকে শুরু করে দময়ন্তী বসু সিংহ, কণিকা বন্দ্যোপাধ্যায়, তরুণ ভট্টাচার্য, দীনেশচন্দ্রের মতো লেখকেরা প্রবাসজীবনের বিচিত্র অভিজ্ঞতাকে সাহিত্যের রূপ দিয়েছেন।

তাঁদের অনুরণন শুধু ব্যক্তিগত নয়—তা হয়ে উঠেছে সম্মিলিত এক প্রবাসী চেতনার প্রতিফলন। তাঁদের ভাষা-নির্ভর আত্মপরিচয় একদিকে প্রবাসের সীমানা পেরিয়ে বিশ্বজনীন মানবীয় অভিজ্ঞতার অংশ হয়ে উঠেছে, অন্যদিকে বাংলাভাষা ও সাহিত্যকে নতুন পাঠকসমাজে পৌঁছে দেওয়ার দায়িত্বও কাঁধে তুলে নিয়েছে। সাহিত্যিক সৃষ্টির পাশাপাশি তাঁরা প্রবাসে বাংলা ভাষা শিক্ষা, পত্র-পত্রিকা সম্পাদনা, সাহিত্যচর্চা, সাহিত্যসভা ইত্যাদির মাধ্যমে ভাষার অস্তিত্ব টিকিয়ে রাখার নিরন্তর প্রয়াস চালিয়ে গেছেন।

আজকের বিশ্বায়নের যুগে ভাষা ও সাহিত্যের চর্চা যেমন আর সীমানা মানে না, তেমনি প্রবাসে বসে বাংলা সাহিত্যে অবদান রাখা লেখকেরাও আর প্রান্তিক কেউ নন—তাঁরা এই সাহিত্যেরই সমান গুরুত্বপূর্ণ নির্মাতা। তাঁদের লেখার মাধ্যমেই বাংলা সাহিত্য আন্তর্জাতিক অভিধান পেয়েছে, পেয়েছে নতুন ভাষা, নতুন দৃষ্টিভঙ্গি এবং নতুন পাঠক।

এই আলোচনার শেষে বলা যায়—বাংলা সাহিত্যের জগতে প্রবাসীরা কেবল সহায়ক শক্তি নন, বরং তাঁরা একটি স্বতন্ত্র সাহিত্যমূল্যসম্পন্ন ধারার জনক। ভবিষ্যতের বাংলা সাহিত্যচর্চা প্রবাসী লেখকদের অবদানকে যত বেশি মূল্যায়ন ও গ্রহণ করবে, ততই ভাষা ও সংস্কৃতির পরিসর সমৃদ্ধ হবে।

প্রবাসী লেখকদের কলমে উঠে আসা সেই শেকড়-স্মৃতি, পরিচয়ের টানাপোড়েন, এবং নস্টালজিয়াই ভবিষ্যতের বাংলা সাহিত্যকে আরও আন্তর্জাতিক, গভীর ও বহুমাত্রিক করে তুলবে।

উপসংহারের শেষে সংযুক্ত করার জন্য রবীন্দ্রনাথ ঠাকুরের উপযুক্ত ও প্রাসঙ্গিক কয়েকটি বিশেষ উক্তি দেওয়া হলো। এই উদ্ধৃতিগুলি ভাষা, জাতিসত্তা, স্মৃতি, সাংস্কৃতিক আত্মপরিচয়, ও বিশ্বমানবতার ভাবনার সঙ্গে সামঞ্জস্যপূর্ণ — যা প্রবাসী সাহিত্যিকদের চেতনার সঙ্গে গভীরভাবে সম্পর্কিত।

"আমি আমার চেতনার গভীরে অনুভব করি, আমি একটি জাতির সন্তান। কিন্তু সেই জাতিকে আমি সমস্ত মানবজাতির একটি সুরের সঙ্গে মেলাই।"— জাতীয়তাবাদ প্রবন্ধ।[22] এই উক্তিটি বিশ্বজনীনতা ও স্বজাত্যবোধের দ্বৈত সেতুবন্ধনের কথা বলে, যা প্রবাসী লেখকদের আত্মপরিচয়ের দ্বন্দ্বেও প্রতিফলিত।

"ভাষার মধ্যে মানুষের আত্মা বাস করে। ভাষাহীন জাতি আত্মাহীন জাতি।"— সাহিত্য ও ভাষা বিষয়ক বক্তৃতা, শান্তিনিকেতন।[23] প্রবাসে থেকেও বাংলা ভাষা ও সাহিত্যের চর্চা যে আত্মার চর্চা, তা এই উদ্ধৃতি মনে করিয়ে দেয়।

"বিশ্ব যখন এক নিকটে আসে, তখন নিজের জাতি ও ভাষার সত্য রূপ স্পষ্ট করে জাগে।"

— বিশ্বপরিচয়।[24]

এই ভাবনাটি প্রবাসী জীবনের অভিজ্ঞতার সঙ্গে মিল খায়—যেখানে দূরত্বে থেকেও শিকড় আরও বেশি স্পষ্ট হয়।
এই সকল চিন্তার আলোকে বলা যায়, প্রবাসে থাকা বাংলাভাষী সাহিত্যিকেরা রবীন্দ্রচিন্তার উত্তরসাধক — তাঁরা শেকড়ে প্রোথিত থেকেও ডালপালা মেলেছেন পৃথিবীর আকাশজুড়ে। তাঁদের কলমে রবীন্দ্রনাথের এই দর্শনই যেন পুনরায় জীবন্ত হয়ে ওঠে —

"সকল দেশের তরে, সকল মানুষ তরে, একটি হৃদয় জাগাও হে প্রভু!" | _"সভ্যতার সংকট"[25]||

গ্রন্থসূচি

1)'একটি ফিল্মের কাহিনি', একটি প্রবন্ধ সংকলন, আনন্দ প্রকাশন।
2) সাক্ষাৎকার: 'রায়এন্ড রায়', আনন্দ পাবলিশার্স।
3) 'কবিতার কথা', ১৯৪২।
4) 'নির্বাচিত প্রবন্ধ', খণ্ড ২।
5) নীললোহিত সিরিজ, 'সেই সময়'।
6) 'প্রবাসের দিনগুলো', রবিবার সাহিত্য সংখ্যার প্রবন্ধ।
7) 'প্রবাসে নারী', সাহিত্য পত্রিকা সাঁঝবাতি, কানাডা, ২০১৫।
8) 'আধভাঙা জানালা', কাব্যগ্রন্থ।
9) 'এই দূর থেকে', কাব্যগ্রন্থ, নিউ জার্সি, ২০০৯।
10) 'ভাষাহীন বিকেল', ব্যক্তিগত প্রবন্ধ।
11)" চল্ চল্ চল্" কবিতার ভূমিকা, ১৯৩০।
12) বক্তৃতা, মালয়েশিয়া সফর ,সংকলন- বিদ্রোহীর বিদেশযাত্রা, বাংলা একাডেমি।
13) গল্প — 'তালতলির নিচে'।
14) সাক্ষাৎকার, দেশ পত্রিকা, ২০০১।
15) 'প্রবাসী পাঠশালা', প্রবন্ধ, বঙ্গদর্শন – প্রবাস সংখ্যা, ২০১৪।
16) উৎস: Bangla in Britain, London Bengali Writers' Forum, ১৯৯৫।
17) অমর সেন (Amar Sen)_ "– "পাথরের পাঁজর"
18) সঞ্জীব বক্সী (Sanjeeb Bakshee)_ "স্মৃতির পাতায় রাঁচি"।
19) মালবিকা রায় (Malabika Roy)_ "শব্দের শরীর" |

20) সুব্রত দে (Subrata Dey)_ "কয়লার দেশে"|

21) দেবাশিস মজুমদার (Debashish Majumdar)_ "পৃথিবীর পাশে বসে" |

22) রবীন্দ্রনাথ ঠাকুর (Rabindranath Tegore)—" জাতীয়তাবাদ" প্রবন্ধ|

23) রবীন্দ্রনাথ ঠাকুর (Rabindranath Tegore)— সাহিত্য ও ভাষা বিষয়ক বক্তৃতা, শান্তিনিকেতন |

24) রবীন্দ্রনাথ ঠাকুর (Rabindranath Tegore)—" বিশ্বপরিচয়" |

25) রবীন্দ্রনাথ ঠাকুর (Rabindranath Tegore)— _"সভ্যতার সংকট" |

भारत में गरीबी एवं विकास के बदलते प्रतिमान

अंजली कुमारी*
डॉ. मनीषा कुमारी**

सारांश

निर्धनता न केवल भारत बल्कि पूरे विश्व की एक सामाजिक–आर्थिक समस्या है। यह एक आर्थिक समस्या इसलिए है क्योंकि आर्थिक अभाव ही निर्धनता को जन्म देते हैं जबकि यह एक सामाजिक समस्या इसलिए है क्योंकि इससे उत्पन्न दशाएँ सामाजिक जीवन को सबसे अधिक प्रतिकूल रूप से प्रभावित करती हैं। यह एक ऐसी सामाजिक समस्या है जिसे अन्य सामाजिक समस्याओं (अपराध, बाल अपराध, भिक्षावृति, वेश्यावृति) आदि की जननी माना जाता है। गरीबी व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक एवं नैतिक अद्यःपतन का ही परिचायक मात्र न होकर समाज की उस दशा का द्योतक है जिसमें व्यापक स्तर पर सामाजिक–आर्थिक असमानता, अन्याय, शोषण तथा पिछड़ेपन से उत्पन्न अनेकानेक सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक कुरीतियाँ स्वतः जन्म लेती हैं। इसका तात्पर्य यह है ''किसी समाज में अधिकांश व्यक्तियों के रहने के लिए पर्याप्त स्थान न मिले, खाने के लिए सामान्य स्तर पर पौष्टिक पदार्थ न मिले, पहनने के लिए मामूली कपड़े का भी अभाव हो तथा वे उन सुख–सुविधाओं से वंचित रहें जो उनकी कार्यकुशलता को बनाये रखने के लिए आवश्यक हों, तब ऐसे समाज को हम निर्धन समाज कहते हैं। प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य भारत में गरीबी एवं विकास के बदलते प्रतिमानों का विश्लेषण करना है।

कुंजी शब्द: निर्धनता, निर्धनता की माप, क्षेत्रीय असमानता, सामाजिक असमानता, अभिजातय वर्ग, अन्याय, शोषण।

भूमिकाः

भारत में कभी भी ऐसा समय नहीं रहा है जब समाज में निर्धनता का पूर्णतया अभाव रहा हो। हम जिस काल्पनिक युग की बात को लेकर भारत को 'सोने की की चिड़िया' के नाम से संबोधित करते हैं, उस समय भी भारत की समृद्धता अभिजात्य वर्ग तक ही सीमित थी। सामान्य कृषक, कारीगर, मजदूर और दास उस समय भी अभाव व शोषण के शिकार थे। यह अवश्य है कि निर्धनता की वर्तमाना समस्या का रूप परम्परागत समाजों से कुछ भिन्न है। *''आज भारत के अतिरिक्त संसार के अधिकांश देश निर्धनता की इतनी व्यापक और गंभीर समस्या का सामना कर रहें है कि कुछ वर्गो में मानव का सामाजिक अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। यह निर्धनता वर्तमान तकनीकी विकास, बड़ी मात्रा के उत्पादन, आर्थिक नीतियों और राजनीतिक भ्रष्टाचार की उपज है। जिसका निकट भविष्य में कोई प्रभावपूर्ण समाधान होने की संभावना बहुत कम है।''*[1]

निर्धनता का अर्थ–

रूथ लिस्टर के अनुसार "हम निर्धनता को कैसे परिभाषित करते हैं, उसी अवधारणा पर राजनीतिक, नीतिगत और शास्त्रीय बहस विवेचित होगी। यह समाधानों के निहितार्थों और व्याख्याओं की सीमा में होगी।''[2] हेनरी बर्सटीन (1992)[3] ने निर्धनता के निम्न चार आयाम बताए हैं :

1. जीविका रणनीतियों का अभाव
2. संसाधनों (धन, भूमि) की अगम्यता
3. असुरक्षा की भावना
4. संसाधनों के अभाव के कारण अन्य व्यक्तियों के साथ सामाजिक सम्बन्ध रखने और विकसित करने की अक्षमता।

निर्धनता की परिभाषा करते समय तीन स्थितियों का प्रायः उपयोग किया जाता है :

(i) एक व्यक्ति को जीवित रहने के लिए कितना पैसा चाहिए,
(ii) निम्नतम जीवन–निर्वाह का स्तर और एक विशेष समय और स्थान पर प्रचलित जीवन–स्तर और

* पी–एच0डी0 शोधार्थी, समाजशास्त्र विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा
** शोध–निर्देशिका, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

(iii) समाज में कुछ व्यक्तियों के समृद्ध होने और अधिकतर के निर्धन होने की दशाओं की तुलना। अन्तिम उपागम निर्धनता को सापेक्षिकता और असमानता के दृष्टिकोणों से परिभाषित करता है।

यहां 'निर्धनता' को 'निर्धनता–रेखा' के द्वारा देखा जा रहा है, जिसका निर्धारण स्वास्थ्य के लिए आवश्यक प्रचलित स्तर, निपुणता, बच्चों के पालन–पोषण, सामाजिक सहभागिता और आत्मसम्मान की सुरक्षा द्वारा किया जाता है।'' व्यावहारिक रूप से निर्धनता–रेखा कैलोरी ग्रहण की न्यूनतम वांछनीय पोषण स्तर से निर्धारित की जाती है। भारत मे इसका निर्धारण ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 2,400 कैलोरी और शहरी क्षेत्रों में क्रमशः 368 रूपए और 539 रूपए प्रतिमाह आय वालों को गरीबी की रेखा से नीचे माना गया है, जिससे प्रतिदिन 650 ग्राम अनाज ही प्रतिदिन खरीदा जा सकता है।

निर्धनता का माप– निर्धनता की माप समान्यतः दो प्रतिमानों सापेक्षिक माप अर्थात् सापेक्षिक निर्धनता और निरपेक्ष माप अर्थात् पूर्ण निर्धनता।

सापेक्षिक निर्धनता– व्यक्ति के जीवन की वह स्थिति जिसमें वह अपने को अन्य अमीर लोगों की तुलना में निर्धन पाता है। इस प्रकार के निर्धन व्यक्ति वे हैं जो दरिद्रता की परिधि से बाहर हैं। जिनके पास खाने, रहने, कपड़ा पहनने, शिक्षा प्राप्त करने तथा चिकित्सा कराने के लिए न्यूनतम साधन उपलब्ध हैं। परन्तु उसके पास आराम के साधन नहीं हैं। गरीबी मापन का यह आधार आर्थिक समानता की स्थिति का द्योतक हैं।

निरपेक्ष अर्थात् पूर्ण निर्धनता– जीवन की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु न्यूनतम वांछित साधनों का पूर्ण अभाव। इस प्रकार के व्यक्तियों की गणना में वे सभी लोग आते हैं जो किसी समाज की गरीबी रेखा के नीचे का जीवन स्तर रखते हुए जी रहे होते हैं।

निर्धनता निवारण के लिए कुछ विशेष आधार अपनाए जाते हैं जैसे कुल राष्ट्रीय आय, प्रति व्यक्ति आय, पारिवारिक उपभोग व्यय और आय।

कुल राष्ट्रीय आय– किसी देश की कुल राष्ट्रीय आय से देश की आर्थिक समृद्धि या विपन्नता का बोध होता है। विभिन्न देशों की राष्ट्रीय आय की तुलना से उन देशों की सापेक्ष आर्थिक स्थिति का पता चलता हैं। अमेरिका, रूस, फ्रांस, पश्चिमी जर्मनी एवं तेल उत्पादक देशों की कुल राष्ट्रीय आय विकासशील देशों की कुल राष्ट्रीय आय से अधिक है।

प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय– प्रति व्यक्ति राष्ट्रीय आय के आंकड़ों को भी निर्धनता के मापन के प्रयोग में लाया जाता है। इसे प्रति व्यक्ति माप भी कहा जाता है लेकिन इन आंकड़ों से निर्धनता के प्रसार की वास्तविक जानकारी तभी मिल सकती है जब देश में आर्थिक समानताएँ हों या समाजवादी आर्थिक व्यवस्था स्थापित की गई हो। भारत में प्रति व्यक्ति विश्व के अन्य सम्पन्न देशों की अपेक्षा बहुत ही कम है।

परिवार उपभोग व्यय– निर्धनता की माप पारिवारिक उपयोग व्यय के आधार पर भी की जाती है। इस तरीके में परिवार का एक मानक आकर निश्चित कर लिया जाता है तथा उसके लिए एक न्यूनतम जीवन स्तर के लिए आवश्यक वस्तुओं को ध्यान में रखकर उन्हे उपलब्ध कराने में होने वाले व्यय की मात्रा निर्धारित कर दी जाती है। जिन परिवारों की आय इस राशि से नीचे होती है उन्हें निर्धन कहा जाता है।

भारत में निर्धनताः

''संयुक्त राष्ट्र का मानव संसाधन विकास सूचकांक (2013) तीन संकेतकों पर आधारित हैः जीवन प्रत्याशा, शिक्षा तक पहुंच और आय स्तर। इन संकेतकों के आधार पर भारत 186 देशों में 136वें नंबर पर है। हालांकि सन् 1947 में स्वतंत्र होने के पश्चात से अब तक भारत की समग्र विकास पर अर्थपूर्ण रही है और प्रति व्यक्ति आय भी निरंतर बढ़ी है। प्रति व्यक्ति आय 1980–01 में 16,688 रूपए और 2010–11 में 54,835 रूपए थी, जो 1990–91 में 4974 रूपए, 2000–01 में 16,688 रूपए और 2010–11 में 54,835 रूपए हो गई। इसके बावजूद जनसंख्या के बहुत बड़े भाग के जीवन–स्तर में गिरावट आई है।''[5]

अंसारी और अख्तर (2012) के अनुसार, ''नई शताब्दी के प्रारंभ में भारत के 26 करोड़ व्यक्तियों की आय इतनी नही थी, कि निर्धनता रेखा को परिभाषित करने वाले उपयोग स्तर तक उनकी पहुंच बन सके। इनमें से 75 प्रतिशत व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। विश्व के निर्धनों में से 22 प्रतिशत भारत में हैं। इतने बड़े पैमाने पर निर्धनता इस तथ्य के दृष्टिगत चिंतनीय है, कि निर्धनता उन्मूलन विकास योजना प्रक्रिया के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है।''[6]

भारत मे बीसवी शताब्दी के अंतिम दशक में विकास योजनाओं का केन्द्र बिन्दु वस्तुओं के उत्पादन और सेवाओं तथा उसके परिणामों प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि से बदलकर जीवन–निर्वाह स्तर को बढ़ाना हो गया है। ''जीवन–निर्वाह स्तर का अभिप्राय हो अपने आप मे अधिक व्यापक है। इसमें सेवाओं और वस्तुओं के

उपयोग को तो सम्मिलित किया ही गया है, साथ ही जनसंख्या के सभी वर्गो और विशेष रूप से निर्धनता की रेखा से नीचे जीवनयापन करने वालो की मूल भौतिक आवश्यकताएं पूरी करने तथा स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी आधारभूत सेवाओं तक उनकी पहुंच सुनिश्चित करना भी शामिल है।''[7] इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप निर्धनता घटी हैं, साथ ही जीवन–स्तर में व्यापक सुधार हुआ है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) के निष्कर्ष के अनुसार, ''आर्थिक सुधार लागू होने के बाद से निर्धनता की रेखा से नीचे जीवन यापन कर रहे व्यक्तियों (BPL) की संख्या में प्रभावशाली कमी आई है। 1993–34 में इनकी तादाद 36 प्रतिशत रह गई।''[8] योजना आयोग के नवीनतम अनुमानों के अनुसार, ''पांच वर्ष में ग्रामीण बीपीएल जनसंख्या 37.27 प्रतिशत रह गई है। समग्र रूप से देखों तो बीपीएल जनसंख्या 19 प्रतिशत घटी है। 1993–34 में यह 32.64 करोड़ थी जो 1999–2000 में घटकर 26.30 करोड़ रह गई।''[9]

ग्रामीण निर्धन 24.4 करोड़ से घटकर 19.32 करोड़ और शहरी निर्धन घटकर 6.71 करोड़ रह गए हैं। राज्य स्तर पर देखें तो हालांकि उड़ीसा (ओडिशा) में बीपीएल जनसंख्या 48.56 प्रतिशत से घटकर 47.15 प्रतिशत रह गई है, लेकिन सर्वाधिक गरीबी की दृष्टि से बिहार को पीछे छोड़कर ओड़िसा सबसे ऊपर पहुंच गया है। अधिक गरीबी वाले अन्य बड़े राज्य मध्यप्र देश में बीपीएल 37.43 प्रतिशत (पूर्व में 43.52 प्रतिशत), असम में 36.09 प्रतिशत (पूर्व में 40.86 प्रतिशत), उत्तर प्रदेश में 31.51 प्रतिशत (पूर्व में 40.85 प्रतिशत) और पश्चिम बंगाल में 27.02 प्रतिशत (पूर्व में 35.66 प्रतिशत) बीपीएल हैं।

योजना आयोग द्वारा जारी नवीनतम आंकड़ों के अनुसार, हालांकि निर्धनता में भारी गिरावट आई है, फिर भी प्रत्येक पांच में से एक भारतीय आज भी गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहा है। बीपीएल जनसंख्या कुल जनसंख्या का 21.9 प्रतिशत है अर्थात् 27 करोड़ लोग बीपीएल हैं (सरकार ने ग्रामीण क्षेत्र में 27.20 रूपए प्रतिदिन और शहरी क्षेत्र में 33.30 रूपए प्रतिदिन से कम आय वालों को बीपीएल माना है)।

निर्धनता के नवीनतम अनुमानों के अनुसार, यह महत्वपर्ण प्रवृति इस तथ्य के रूप में झलकी है, कि ग्रामीण भारत ने शहरी भारत से अधिक तेजी से तरक्की की है। ग्रामीण क्षेत्रों में बीपीएल जनसंख्या 2004–05 में 42 प्रतिशत थी जो 2011–12 में लगभग 17 प्रतिशत घटकर 25.8 प्रतिशत रह गई।

इस अवधि में शहरी क्षेत्रों में बीपीएल जनसंख्या 12 प्रतिशत ही घटी थी। पूरे देश के आंकड़ों पर गौर करें तो वर्ष 2011–12 में ग्रामीण क्षेत्रों में 21.7 करोड़ और शहरी क्षेत्रों में 5.3 करोड़ गरीब रह रहे थे। 2004–05 में उनकी संख्या क्रमशः 32.6 करोड़ और 8.1 करोड़ थी।

सारणी 1.1

भारत में ग्रामीण एवं नगरीय गरीबी का तुलनात्मक अध्ययन 1973–74 से 2004–05 तक[10]

वर्ष	सम्पूर्ण भारतवर्ष		
	ग्रामीण	नगरीय	कुल
1973–74	56.44	49.01	54.88
1977–78	53.07	45.24	51.32
1983	45.65	40.79	44.48
1987–88	39.09	38.20	38.86
1993–94	37.27	32.36	35.97
1999–2000 (7 दिन की पुनः स्मरण अवधि)	24.02	21.59	23.23
1999–2000 (30 दिन की पुनः स्मरण अवधि)	27.09	23.62	26.10
2004–05*	28.03	25.07	27.50
2004–05**	21.80	21.70	21.60

Source : 1. Planning Commission (2014), " Report of The Expert Group to Review The Methodology for Measurement of Poverty ", Government of India, June, p. 1-86.

2.NSSO, Various volumes, www indiastat.com./table

*Note : * Based on Uniform Recall period Consumption i.e.30& days recall period.*

*** Based on Mixed Recall period consumption i.e. non food items 365 – recall period, for remaining items 30- days Recall period.*

सारणी 1.2 : भारत में गरीबी का आकलनः 2009–10 तथा 2011–12[11]

ग्रामीण	निर्धनता अनुपात			निर्धनों की संख्या (लाख में)		
	ग्रामीण	नगरीय	कुल	ग्रामीण	नगरीय	कुल
रंगराजन समिति						
2009–10	39.6	35.1	38.2	325.9	128.7	454.6
2011–12	30.9	26.4	29.5	260.5	102.5	363.0
गरीबी में कमी की दर प्रतिशत में	8.7	8.7	8.7	65.4	26.2	91.6
तेंदुलकर समिति						
2009–10	33.8	20.9	29.8	278.2	176.5	354.7
2011–12	25.7	13.7	21.9	216.7	53.1	269.8
गरीबी में कमी की दर प्रतिशत में	8.1	7.2	7.9	61.5	23.4	84.9

Source:- The estimate of poverty ratio for the years 2009-10 and 2011-12 derived from the Expert Group (Rangarajan) methodology and Tendulkar methodology (pp. 69).

भारत में गरीबी एवं विकास के बदलते प्रतिमान

अंतर्राज्यीय असमानताएँः भारत में निर्धनता का एक और पहलू या आयाम है। प्रत्येक राज्य में निर्धन लोगों का अनुपात एक समान नहीं है। वर्ष 2011–12 भारत में निर्धनता अनुपात 22 प्रतिशत है। कुछ राज्यों जैसे मध्य प्रदेश, असम, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं ओडिशा में निर्धनता अनुपात राष्ट्रीय अनुपात से ज्यादा है। जैसा कि आरेख 1.3 दर्शाता है, बिहार और ओडिशा क्रमशः 33.7 और 32.6 प्रतिशत निर्धनता औसत के साथ दो सर्वाधिक निर्धन राज्य बने हुए हैं। ओडिशा, मध्य प्रदेश, बिहार और उत्तर प्रदेश में ग्रामीण निर्धनता के साथ नगरीय निर्धनता भी अधिक है। इसकी तुलना में केरल, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, गुजरात और पश्चिम बंगाल में निर्धनता में उल्लेखनीय गिरावट आई है। पंजाब और हरियाणा जैसे राज्य उच्च कृषि वृद्धि दर से निर्धनता कम करने में पारंपरिक रूप से सफल रहे हैं। केरल ने मानव संसाधन विकास पर अधिक ध्यान दिया है। पश्चिम बंगाल में भूमि सुधार उपायों से निर्धनता कम करने में सहायता मिली है। आंध्र प्रदेश और तमिलनाडु में अनाज का सार्वजनिक वितरण इसमें सुधार का कारण हो सकता है।

सारणी 1.3 : भारत के चुनिन्दा राज्यों में निर्धनता अनुपातः 2011 जनगणना के अनुसार[12]

क्रम	राज्य/केंद्र शासित प्रदेश	गरीबी अनुपात (प्रतिशत में)
1.	**बिहार**	**33.7**
2.	उड़ीसा	32.6
3.	असम	31.9
4.	मध्य प्रदेश	31.7
5.	उत्तर प्रदेश	29.4
6.	कर्नाटक	20.9
7.	पश्चिम बंगाल	19.9
8.	महाराष्ट्र	17.4
9.	गुजरात	16.6
10.	राजस्थान	14.7
11.	त्रिपुरा	14.0
12.	तमिलनाडु	11.3
13.	हरियाणा	11.2
14.	दिल्ली	9.9
15.	आंध्र प्रदेश	9.2
16.	पंजाब	8.3

17.	हिमाचल प्रदेश	8.1
18.	केरल	7.1
19.	**सम्पूर्ण भारत**	**21.9**

स्रोत : आर्थिक सर्वेक्षण 2020–21, भारत सरकार

ग्रामीण एवं नगरीय निर्धनता में भिन्नता:

ग्यारहवीं योजना के अनुसार, भारत में निर्धनों की संख्या तीस करोड़ से अधिक है। ''देश में निर्धन व्यक्तियों का अनुपात वर्ष 1973 के 55 प्रतिशत से घटकर 2004 में लगभग 27 प्रतिशत तक हुआ है, लेकिन अब भी 1.2 अरब से अधिक जनसंख्या के लगभग एक तिहाई लोग निर्धनता रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे हैं और निर्धनों में बहुत बड़ी संख्या ऐसे लोगों की है जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहते हैं। भारत की ग्रामीण जनसंख्या का लगभग 30 प्रतिशत निर्धनता की जीर्ण स्थिति में है।''[13] विगत तीन दशकों से अधिक से शहरी क्षेत्र में बसने के कारण ग्रामीण निर्धनता में कुछ सीमा तक कमी आई है।

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के व्यक्तियों में निर्धनता बहुत गहन है। ''वर्ष 2005 में निर्धन ग्रामीणों में इन समूहों के व्यक्ति 80 प्रतिशत थे, हालांकि समूची ग्रामीण जनसंख्या में इनका अनुपात इसमे बहुत कम है। भारत में निर्धनता के नक्शें में निर्धनतम क्षेत्रों में राजस्थान, मध्यप्रदेश, बिहार, झारखंड, ओडिशा, छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल के कुछ भाग सम्मिलित हैं।''[14] बड़ी संख्या में भारत के निर्धनतम व्यक्ति अर्द्ध शुष्क उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों में रहते हैं। इन क्षेत्रों में पानी की किल्लत और बार–बार पड़ने वाला सूखा कृषि के रूपान्तण में बाधक रहा, जो अन्य क्षेत्रों में हरित क्रांन्ति के कारण हो पाया है। पूर्वी उत्तर प्रदेश से असम के मैदानी क्षेत्रों तक और विशेष रूप से उत्तरी बिहार बाढ़ प्रभावित क्षेत्र है, जिनमें निर्धनता बहुत अधिक है।

असुरक्षित सामाजिक–आर्थिक समूहों में निर्धनता:

निर्धनता रेखा से नीचे के लोगों का अनुपात भी भारत में सभी सामाजिक समूहों और आर्थिक वर्गों में एक समान नहीं है। जो सामाजिक समूह निर्धनता के प्रति सर्वाधिक असुरक्षित हैं, वे अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के परिवार हैं। इसी प्रकार, आर्थिक समूहों में सर्वाधिक असुरक्षित समूह, ग्रामीण कृषि श्रमिक परिवार और नगरीय अनियत मजदूर परिवार हैं। ''यद्यपि निर्धनता रेखा के नीचे के लोगों का औसत भारत में सभी समूहों के लिए 22 है, अनुसूचित जनजातियों के 100 में से 43 लोग अपनी मूल आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ हैं। इसी तरह नगरीय क्षेत्रों में 34 प्रतिशत अनियत मजदूर निर्धनता रेखा के नीचे हैं। लगभग 34 प्रतिशत अनियत कृषि श्रमिक ग्रामीण क्षेत्रा में और 29 प्रतिशत अनुसूचित जातियाँ भी निर्धन हैं।''[15] अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सामाजिक रूप से सुविधा वंचित सामाजिक समूहों का भूमिहीन अनियत दिहाड़ी श्रमिक होना उनकी दोहरी असुविधा की समस्या की गंभीरता को दिखाता है। हाल के कुछ अध्ययनों ने दर्शाया है कि 1990 के दशक के दौरान अनुसूचित जनजाति परिवारों को छोड़ कर अन्य सभी तीनों समूहों; अनुसूचित जाति, ग्रामीण कृषि श्रमिक और शहरी अनियमित मजदूर परिवार में निर्धनता में कमी आई है। इन सामाजिक समूहों के अतिरिक्त परिवारों में भी आय असमानता है। निर्धन परिवारों में सभी लोगों को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, लेकिन कुछ लोग दूसरों से अधिक कठिनाइयों का सामना करते हैं। कुछ संदर्भों में महिलाओं, वृद्ध लोगों और बच्चियों को भी ढंग से परिवार के उपलब्ध संसाधनों तक पहुँच से वंचित किया जाता है।

निर्धनता जनजातियों के व्यक्तियों को वन क्षेत्र मे भी प्रभावित करती है, जहां संसाधनों पर अधिकार से वंचित होने के कारण उनकी निर्धनता बढ़ी है। तटवर्ती क्षेत्रों में मत्स्य पालन करने वाले समुदायों के व्यक्तियों की जीवन निर्वाह स्थितियां पर्यावरणीय क्षरण, संचय क्षीणता और प्राकृतिक आपदाओं की भेद्यता के कारण बिगड़ रही है।

निष्कर्ष:

हम स्वतंत्रता के बाद से 7 दशकों से अधिक समय की यात्रा कर चुके हैं। हमारी सभी नीतियों का ध्येय समता और सामाजिक न्याय सहित तीव्र और संतुलित आर्थिक विकास बताया गया है। चाहे जो भी सरकार सत्ता में रही हो, सभी ने निर्धनता निवारण को ही भारत के सामने सबसे बड़ी चुनौती माना है। देश में निर्धनों की निरपेक्ष संख्या में कमी आई है और कुछ राज्यों में राष्ट्रीय औसत से निर्धनों का अनुपात कम है। यद्यपि इस काम के लिए बहुत विशाल धन राशियाँ आबंटित और खर्च की जा चुकी हैं किंतु फिर भी हम

लक्ष्य से बहुत दूर हैं। प्रति व्यक्ति आय और औसत जीवन स्तर में सुधार हुए हैं, बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति की दिशा में भी कुछ प्रगति अवश्य हुई है। किंतु अन्य देशों की तुलना में हमारी यह प्रगति प्रभावहीन प्रतीत होती है। यही नहीं, विकास के लाभ हमारी जनता के सभी वर्गों तक नहीं पहुँच पाए हैं। वैसे सामाजिक और आर्थिक विकास की कसौटियों पर हमारे देश के कुछ क्षेत्रों, अर्थव्यवस्था के कुछ वर्ग और समाज के कुछ अंश तो अनेक विकसित देशों से भी स्पर्धा कर सकते हैं, फिर भी ऐसा बहुत बड़ा समुदाय है जो अभी निर्धनता के दुष्चक्र से मुक्ति नहीं पा सका है।

संदर्भः

1. Ansari, Iqbal Zafar and Akhtar, Sahil, "Incidence of Poverty in India : Issues and Challenges", Zenith, Vol. 2, Issues 3, March, pp. 443-45.
2. Halborn, Martin and Haralambos, Mike, Sociology: Theme and Perspective (7th edn), Harper Collins, London, 2008.
3. Benstein, Henry, Rural Livelihoods: Crises and Responses, Oxfor Univrsity Press, Oxford 1992.
4. Becker, Howard, Social Problems: A modern Approach, John Wiley & Sons Inc, New York 1966.
5. Ansari, Iqbal Zafar and Akhtar, Sahil, 2012."Incidence of Poverty in India : Issues and Challenges" , Zenith, Vol. 2, Issues 3, March, pp. 443-45.
6. Ahuja, Ram. 2017. Social Problems in India. Rawat publication, Jaipur.
7. NSSO के 50वें दौर के आंकड़े.
8. Planning Commission (2014), "Report of The Expert Group to Review. The Methodologu for Measurment of Poverty ", Government of India, June, p. 1-86.
9. Ibid.
10. The estimate of poverty ratio for the years 2009-10 and 2011-12 derived from the Expert Group (Rangarajan) methodology and Tendulkar methodology (pp. 69).
11. आर्थिक सर्वेक्षण 2020–21, भारत सरकार।
12. विश्व बैंक के आँकड़ेः एक्सेस्ड ऑन 01/10/2021
13. योजना आयोग, भारत सरकार.
14. वही.
15. आर्थिक सर्वेक्षण 2014–15, भारत सरकार।

भारत में मद्यनिषेध की स्थिति एवं चुनौतियाँ

डॉ. विजय शंकर विक्रम*

संक्षिप्त सार

*प्रस्तुत शोध–पत्र में भारत के विभिन्न राज्यों में मद्यनिषेध की स्थिति एवं संबंधित तथ्यों का विश्लेषण किया गया है। भारत में मद्यनिषेध की नीति एक गम्भीर चिन्तन एवं विम''र्श का विषय रहा है। यह सभी राजनीतिक दलों का सर्वकालिक पसंदीदा एवं लोकप्रिय स्टंट भी है। शराब, वर्तमान समय में भारतीय समाज में बहस हेतु चर्चित शब्द बन गया है। भारत के विभिन्न राज्यों में मद्यपान एवं मद्यनिषेध आज अपने नवीन एवं बदलते प्रतिमान के साथ चल रहा है। वर्तमान समय में भारत के पॉच राज्यों में पूर्ण शराबबंदी (**बिहार, गुजरात, लक्षद्वीप, नागालैंड एवं मिजोरम**) और कुछ राज्यों में आंशिक शराबबंदी लागू है। **राष्ट्रीय परिवार एवं स्वास्थ्य सर्वे**–4 (एन०एफ०एच०एस०–4) के आँकड़ों के अनुसार, बिहार के 28.9 प्रतिशत, यूपी में 25 प्रतिशत आदि लोग मद्यपान करते हैं। 21वीं सदी का युग विकास एवं विज्ञान का युग है। वैश्वीकरण के युग में मद्यपान को 'आधुनिकता का परिचायक' माना जाता है। मद्यपान करने वाले व्यक्ति 'आधुनिक' एवं मद्यपान नहीं करने वाले 'रूढ़िवादी' माने जाने लगे हैं। हमारे देश में विभिन्न राज्य सरकारों ने शराब नीतियों को अपनाने अथवा निरस्त करने के माध्यम से बार–बार अपनी 'गीली' (वेट) या 'सूखी' (ड्राई) राज्य की स्थिति को बदला है। बिहार देश का पहला राज्य है, जहां संविधान निर्माताओं की आशाओं एवं संविधान के अनुरूप पूर्ण मद्यनिषेध नीति लागू किया गया है। वर्ष 2016 में बिहार में पूर्ण मद्यनिषेद्य नीति का लागू होना, बिहार एवं भारत के इतिहास में एक सामाजिक परिवर्तन का फैसला था। यह एक सामाजिक क्रान्ति का फैसला था। इस शोध–आलेख में विश्लेषणात्मक शोध–प्रविधि का प्रयोग किया गया है। इसमें द्वितीयक स्रोतों से प्राप्त तथ्यों का प्रयोग किया गया है। प्रस्तुत शोध–आलेख बिहार सहित पूरे भारत में मद्यनिषेध की वर्तमान स्थिति को जानने एवं समझने में मददगार होगी।)*

शब्द–कुंजी: मद्यनिषेध, शराब, स्वास्थ्य, सामाजिक क्रान्ति एवं सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना

भारत की आजादी के लगभग 78 वर्ष बाद भी देश में मदिरापान या मद्यपान का अस्तित्व विद्यमान है। भारत में मद्यनिषेध की नीति एक गम्भीर चिन्तन एवं विम''र्श का विषय रहा है। यह सभी राजनीतिक दलों का सर्वकालिक पसंदीदा एवं लोकप्रिय स्टंट भी है। यह उन राजनीतिक रणनीतियों में से एक है, जो महिला मतदाताओं के साथ–साथ पुरुष मतदाताओं को भी प्रभावित करती हैं। शराब के दुरुपयोग पर बहस 20वीं सदी की शुरुआत में अंतराष्ट्रीय स्तर पर शुरु हो गया था।[1] जब प्रोफेसर इरविंग फिशर द्वारा वर्ष 1927 में अमेरिका में शराब पर एक गोलमेज विमर्श का आयोजन एवं मेजबानी की गई। इस विमर्श में विश्व के अन्य देशों एवं संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच शराब के दुरुपयोग की समस्या पर गहन चर्चा हुई। इस गोलमेज विमर्श के दौरान सभी लोगों द्वारा शराबबंदी अथवा मद्यनिषेध का समर्थन किया गया।[2]

इसका प्रभाव भारतीय समाज पर भी पड़ा। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में शराबंबदी को शामिल किया गया। भारत के स्वतंत्रता सेनानियों में पहले गोपाल कृष्ण गोखले ने, फिर, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने भारत में शराब की समस्या के खिलाफ आवाज उठाया। बाद में महात्मा गाँधी ने शराबबंदी के खिलाफ आवाज को जोरदार ढंग से बुलंद किया। गाँधी जी के अनुसार, ''एक चीज सबसे अधिक निंदनीय है, वह है – शराब पीने का अभिशाप।'' उनका मानना था कि शराबबंदी से भारतीय स्वंतत्रता आंदोलन को मजबूती मिलेगी और नैतिक भ्रष्टाचार से भी सुरक्षा मिलेगी।[3]

इसका प्रभाव भारतीय संविधान के निर्माताओं पर भी पड़ा। फलतः उन्होंने भारतीय संविधान के भाग–चार में निहित राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के अन्तर्गत मद्यनिषेध से संबंधित प्रावधानों का समावेश किया। संविधान के अनुच्छेद–47 के अनुसर, ''राज्य मात्र चिकित्सीय प्रायोजनों को छोड़कर नशीले पेयपदार्थों

* सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, पी० सी० विज्ञान महाविद्यालय, छपरा, जय प्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार

एवं औषधिओं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, कि उपयोग पर निषेध लगाने का प्रयास करेगा।''[4] हालाकि राज्य के नीति निर्देशक तत्व कानूनी रूप से लागू करने योग्य नहीं है, लेकिन वे लक्ष्य निर्धारित करते हैं कि राज्य को ऐसी स्थितियां स्थापित करने का प्रयास करना चाहिये जिसके तहत नागरिक एक अच्छा एवं स्वस्थ जीवन जी सकें। इस प्रकार, भारतीय संविधान शराब को एक अवांछनीय बुराई के रूप में देखता है, जिसे राज्यों द्वारा नियंत्रित करने की आवश्यकता है।

भारतीय संविधान की **सातवीं अनुसूची** के अनुसार, शराब एक राज्य का विषय है, यानी राज्य विधानसभाओं के पास इसके बारे में कानूनों का मसौदा तैयार करने का अधिकार और जिम्मेदारी है, जिसमें मादक पदार्थ शराब का उत्पादन, निर्माण, कब्जा, परिवहन, खरीद एवं बिक्री शामिल है। संविधान शराब पर प्रतिबंध को एक लक्ष्य के रूप में निर्धारित करता है, फिर भी अधिकांश राज्यों के लिये शराब पर प्रतिबंध लगाना बहुत मुश्किल है। इस प्रकार, शराबबंदी एवं निजी बिक्री के बीच पूरे परिदृश्य में आने वाले शराब के संबंध में कानून सभी राज्यों में अलग–अलग हैं।[5]

हालाकि शराब का सेवन लम्बे समय से भारतीय सभ्यता का हिस्सा रही है। भारत के कई धार्मिक एवं ऐतिहासिक ग्रंथों में इसका उल्लेख है। भारतीय परिवारों की वर्तमान जीवनशैली को आकार देने में धर्म और संस्कृति का गहरा महत्व रहा है। नशीले अथवा मादक पेय के रूप में सबसे अधिक मात्रा में शराब का ही उपयोग किया जाता है। यह व्यक्ति के सामाजीकरण के प्राचीन काल से ही उपयोग किया जाने वाल मादक पेय है। यह गुड़, जौ, चावल, महुआ, काजू तथा कई अन्य पदार्थों को सड़ाकर एवं उनका वाष्पीकरण करके बनाई जाती है। यह वोडका, विअर, विस्की, वाइन आदि कई रूपों में बाजार में उपलब्ध है।

'मादक पेय' अथवा 'पीने योग्य शराब' से तात्पर्य है, बीआईएस मानकों के अनुरूप अल्कोहल युक्त किसी भी पेय से है, जो नशीला हो सकता है और मानव उपयोग के लिए उपयुक्त है। यहां 'बीआईएस मानक' का तात्पर्य भारतीय मानक ब्यूरो द्वारा निर्धारित मानक या प्रासंगिक अधिनियम के तहत गठित किसी अन्य केन्द्रीय सरकारी प्राधिकारण द्वारा निर्धारित मानकों से है। 'शराब' का अर्थ है – देशी या पारंपरिक शराब, भारत में निर्मित विदेशी शराब, विदेशी शराब या कोई भी तैयारी या घटक, चाहे ठोस, अर्ध–ठोस, तरल, अर्ध–तरल या गैसीय, या तो स्थानीय रूप से या अन्यथा बनाया गया हो, जो शराब या शराब के विकल्प के रूप में काम कर सकता है और नशे के प्रयोजनों के लिए उपयोग या सेवन किया जाता है। आज शराब की खपत वैश्वीकरण, औद्योगिकीकरण, मीडिया के प्रभाव एवं प्रचार, जीवन शैली के बदलने एवं पाश्चात्य संस्कृति को अपनाने की ललक के कारण मद्यपान अब भारतीयों के जीवन में वृहद और अप्रतिबंधित ढंग से प्रवेश कर रहा है। भारत एक विविधताओं से परिपूर्ण देश है। इसके कुछ राज्यों में शराब अथवा मदिरा का सेवन उच्च एवं संभ्रात संस्कृति का सूचक एवं प्रतिष्ठा का प्रतिमान माना जाता है।[6]

तालिका–1 से स्पष्ट है कि भारत में शराब पीने की कानूनी उम्र हर राज्य में अलग–अलग निर्धारित की गई है। यह देश के विविध सांस्कृतिक और विनियामक परिदृश्य को दर्शाता है। कुछ राज्य 18 वर्ष की आयु में मदिरा सेवन की अनुमति देते हैं, तो कुछ राज्य शराब पीने का न्यूनतम आयु 21 वर्ष निर्धारित किये हैं तथा कुछ राज्यों द्वारा न्यूनतम आयु 25 वर्ष निर्धारित किया गया है। इन आयु प्रतिबंधों को समझना व्यक्तियों और व्यवसायों दोनों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि गैर–अनुपालन के परिणामस्वरूप जुर्माना लग सकता है एवं कानूनी मुद्दे उत्पन्न हो सकते हैं।

भारत के विभिन्न राज्यों में शराब पीने के कानूनी उम्र, संबंधित कानून एवं अवैध शराब पीने अथवा संबंधित कानून उल्लंघन करने पर सजा के प्रावधानों के बारे निम्नलिखित तालिका में विवरण प्रस्तुत किया गया है:–

तालिका–1: विभिन्न राज्यों में शराब पीने के कानूनी उम्र एवं शराब पीने की सजा

क्र. सं.	राज्य/संघ राज्य क्षेत्र	शराब पीने की उम्र	कानून का विवरण	आयु सीमा का उल्लंघन करने पर जुर्माना
1.	असम	21 वर्ष	असम आबकारी नियम–1945 – नियम 241(5)	निर्दिष्ट नहीं है
2.	अरुणाचल प्रदेश	21 वर्ष	अरुणाचल प्रदेश आबकारी नियम–1993 : धारा 42(1)(ए)	निर्दिष्ट नहीं है
3.	आंध्रप्रदेश	21 वर्ष	आंध्रप्रदेश आबकारी अधिनियम, 1968–धारा 36(1)(जी)	निर्दिष्ट नहीं है
4.	हिमाचल प्रदेश	18 वर्ष	हिमाचल प्रदेश आबकारी अधिनियम, 2011–धारा 26	निर्दिष्ट नहीं है

5.	कर्नाटक	18 वर्ष	कर्नाटक निषेध अधिनियम, 1961 एवं कर्नाटक उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1965 –धारा 36(1)(जी)	निर्दिष्ट नहीं है
6.	मिजोरम	18 वर्ष	मिजोरम शराब निषेध अधिनियम, 2019–धारा 54	निर्दिष्ट नहीं है
7.	राजस्थान	18 वर्ष	राजस्थान आबकारी अधिनियम, 1950–धारा 22	निर्दिष्ट नहीं है
8.	सिक्किम	18 वर्ष	सिक्किम आबकारी अधिनियम, 1992–धारा 20	निर्दिष्ट नहीं है
9.	अंडमान और निकोबार	18 वर्ष	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह उत्पाद शुल्क विनियमन, 2012–धारा 24	निर्दिष्ट नहीं है
10.	पुडुचेरी	18 वर्ष	पुडुचेरी आबकारी अधिनियम, 1970 –धारा 35(1)(जी)	निर्दिष्ट नहीं है
11.	केरल	23 वर्ष	केरल आबकारी अधिनियम, धारा 15(ए), 1077 का 1–आयु 23ए, धारा 15 सी और 63	5,000 रुपये तक का जुर्माना या 2 वर्ष का कारावास
12.	छत्तीसगढ़	21 वर्ष	छत्तीसगढ़ आबकारी अधिनियम, 2015–धारा 23	जुर्माना और कारावास दोनों
13.	गोवा	21 वर्ष	गोवा उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1964–धारा 19(ए)	निर्दिष्ट नहीं है
14.	झारखण्ड	21 वर्ष	झारखण्ड उत्पाद शुल्क अधिनियम, 2015–धारा 54(1)(सी)	निर्दिष्ट नहीं है
15.	मध्यप्रदेश	21 वर्ष	मध्य प्रदेश आबकारी अधिनियम, 1915–धारा 23	निर्दिष्ट नहीं है
16.	ओड़िशा	21 वर्ष	उड़ीसा मद्य निषेध अधिनियम, 1956 और उड़ीसा आबकारी अधिनियम, 2005–धारा 61	जुर्माना और कारावास दोनों
17.	तमिलनाडु	21 वर्ष	तमिलनाडु मद्यनिषेध अधिनियम, 1937 और तमिलनाडु शराब (लाइसेंस और परमिट) नियम, 1981–नियम 25 (xv)	जुर्माना और कारावास दोनों
18.	उत्तराखंड	21 वर्ष	उत्तरांचल (उत्तर प्रदेश आबकारी अधिनियम, 1910) संशोधन अधिनियम, 2002 –धारा 22	निर्दिष्ट नहीं है
19.	उत्तर प्रदेश	21 वर्ष	संयुक्त प्रांत उत्पाद शुल्क अधिनियम, 1910–धारा 22	निर्दिष्ट नहीं है
20.	त्रिपुरा	21 वर्ष	त्रिपुरा आबकारी अधिनियम, 1987–53(1)(सी)	निर्दिष्ट नहीं है
21.	पश्चिम बंगाल	21 वर्ष	बंगाल आबकारी अधिनियम, 1909–51 (1)(सी)	निर्दिष्ट नहीं है
22.	हरियाणा	25 वर्ष	पंजाब आबकारी अधिनियम, 1914–धारा 29	जुर्माना और कारावास
23.	महाराष्ट्र	25 वर्ष	महाराष्ट्र निषेध अधिनियम, 1949–धारा 18	जुर्माना और कारावास
24.	पंजाब	25 वर्ष	पंजाब आबकारी अधिनियम, 1914–धारा 29	जुर्माना और कारावास
25.	दिल्ली	25 वर्ष	दिल्ली आबकारी अधिनियम, 2009–धारा 23	जुर्माना और कारावास
26.	जम्मू और कश्मीर	21 वर्ष	जम्मू और कश्मीर आबकारी अधिनियम, 1958 – धारा 50 बी(ए)	जुर्माना और कारावास
27.	लद्दाख	21 वर्ष	जम्मू और कश्मीर आबकारी अधिनियम, 1958 – धारा 50 बी(ए)	जुर्माना और कारावास
28.	दादर और नगर हवेली	21 वर्ष	दादर और नगर हवेली आबकारी अधिनियम, 2012–24	निर्दिष्ट नहीं है
29.	बिहार	18 वर्ष	बिहार मद्यनिषेध और उत्पाद शुल्क अधिनियम, 2016	जुर्माना और कारावास दोनो

स्रोतः लेखक द्वारा विभिन्न राज्यों से प्राप्त आंकड़ों का संकलन।

राज्यों के कानून के अनुसार, शराब पीने के पात्र नहीं होने वाले नाबालिगों पर दंड लगाने के लिए कोई विशेष प्रावधान नहीं किया गया है। हालाकि विशेष राज्यों से संबंधित कानून नाबालिग को शराब बेचने वाले व्यक्ति पर दंड लगाने का प्रावधान करते हैं। केन्द्र स्तर पर, किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 की धारा–77 में ऐसे व्यक्ति को दंडित करने का प्रावधान है जो किसी नाबालिग

को मादक शराब या अन्य मादक पदार्थ उपलब्ध कराता है। इसमें यह प्रावधान है कि जो कोई भी किसी बच्चे को मादक शराब देता है या पिलाने का कारण बनता है, उसे विधिवत योग्य चिकित्सक के आदेश के अलावा, 7 साल तक की कठोर कारावास की सजा दी जा सकती है और साथ ही, एक लाख रुपये तक का जुर्माना भी देना पड़ सकता है।[7] हालाकि भारतीय संस्कृति में ही ऐसे दबाव के कारक ढूंढे जा सकते है जो मद्यपान को प्रोत्साहित करने के बजाय हतोत्साहित करते हों और उसे रोकते हों। कुछ संस्कृतियां ऐसी हैं, जो दूसरों की अपेक्षा अधिक अच्छे तरीके से व्यक्ति पर प्रभावी नियंत्रण रखती है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, ''मद्यपान नशे की वह स्थिति है, जो किसी भी रूप में मादक पदार्थ के निरंतर सेवन से उत्पन्न होती है, जिससे थोड़ी देर के लिए नशा चढ़ता है या मनुष्य सदा ही नशे में चूर रहता है और जो व्यक्ति तथा समाज दोनों के लिए हानिकारक है।''[8]

महात्मा गाँधी के शब्दों में ''मद्यपान विष के समान है।''[9] भारत में मद्यनिषेध के प्रयास महात्मा गांधी की सोच से प्रभावित है, जिन्होंने शराब के सेवन को बुराई से ज्यादा एक बीमारी के रूप में देखा। भारत की स्वतंत्रता के बाद गांधीवादी शराब बंदी के लिये प्रयास करते रहे हैं। कई गांधीवादी विचारकों का यह मत है कि ''एक स्वस्थ व सभ्य राष्ट्र का निर्माण तभी हो सकता है, जब उस राष्ट्र में मद्यनिषेध नीति लागू हों।'' संविधान की सातवीं अनुसूची के अनुसार, शराब एक राज्य का विषय है, यानी राज्य विधानसभाओं के पास इसके बारे में कानूनों का मसौदा तैयार करने का अधिकार और जिम्मेदारी है, जिसमें 'मादक पदार्थ शराब का उत्पादन, निर्माण, कब्जा, परिवहन, खरीद एवं बिक्री' शामिल है। इस प्रकार, मद्यनिषेध एवं निजी बिक्री के बीच पूरे स्पेक्ट्रम में आने वाले शराब के संबंध में कानून सभी राज्यों में अलग–अलग है।

आजादी के बाद भारत में मद्यनिषेध की स्थिति

भारत 15 अगस्त 1947 ई० को आजाद हुआ। देश की आजादी के उपरान्त, कुछ राज्यों द्वारा ईमानदारी पूर्वक तथा कुछ राज्यों द्वारा आधे–अधूरे मन से मद्यनिषेध कार्यक्रम को लागू करने का प्रयास आरम्भ किया गया। विगत सात दशकों के दौरान, उनमें से अधिकांश ने इस निषेध को त्याग दिया। हालाकि कुछ नेतागण इस कार्यक्रम के प्रति अपनी दिखावटी समर्थनों को आज भी जारी रखे हुए हैं। सामान्यतः शराब पर प्रतिबंध को **'सूखा कानून'** कहा जाता है तथा राज्य द्वारा कानून बनाने को '**शुष्क अवस्था'** कहा जाता है। जबकि उसी तर्क को लागू करने पर विपरीत स्थिति को '**गीला अवस्था**' कहा जाता है।[10]

भारत में राज्यों का '**शुष्क**' एवं '**आर्द्र**' राज्यों में बदलने का इतिहास रहा है। विभिन्न राज्यों द्वारा अक्सर शराबंबदी के पक्ष में कानून बनाए गए हैं और बाद में इसे मुख्यतः दो कारणों – वित्त संबंधी कारण एवं कानून का प्रभावी कार्यान्वयन न होने के कारण, हटा दिया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मद्रास एवं बॉम्बे राज्य ने सन् 1948 तथा 1950 के बीच मद्यनिषेध को लागू किया था। भारतीय संविधान में निहित तथ्य को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1954 में श्रीमन्नारायण की अध्यक्षता में '**प्रोहिबिशन इन्क्वायरी कमेटी**' की स्थापना की गई। इस समिति ने देश में पूर्ण नशाबन्दी या शराबन्दी को अधिक प्रभावशाली एवं मजबूती से लागू करने के लिए कई सुझाव दिए।[11]

सन् 1954 तक भारत की कुल आबादी का एक–चौथाई भाग मद्यनिषेध के दायरे में आ चुका था। इस दौरान मद्रास, महाराष्ट्र, गुजरात तथा आंध्रप्रदेश जैसे राज्यों के 11 जिलों में सन् 1958 ई0 से 1969 ई0 के बीच पूर्ण मद्यनिषेध लागू था। वर्ष 1958 में ही मद्यनिषेध जांच समिति का गठन किया गया था। जिसका लक्ष्य था राष्ट्रीय मद्यनिषेध की स्थिति को प्राप्त किया जाना। हालाकि, शराब की बिक्री से प्राप्त होने वाले उत्पाद शुल्क राजस्व के कारण राज्य को होने वाली राजस्व की भारी हानि ने अधिकांश राज्य सरकारों को दीर्घकालिक मद्यनिषेध लागू किए जाने के प्रति निरुत्साहित कर दिया। राज्यों को प्राप्त होने वाले कुल राजस्व में शराब का योगदान लगभग 10 प्रतिशत का था तथा पंजाब के मामलों मे ंतो यह लगभग एक–तिहाई था।

सन् 1964 में केन्द्र सरकार ने मद्यनिषेध को प्रोत्साहित करने के लिए राज्यों को सुझाव देना प्रारम्भ किया। इसी क्रम में केन्द सरकार ने राज्य सरकारों को मद्यनिषेध लागू किये जाने के कारण उन्हें होने वाली उत्पाद शुल्क राजस्व की हानि के 50 प्रतिशत भाग की भारपाई करने का प्रस्ताव दिया। अधिकांश राज्यों ने प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया तथा मद्यनिषेध को उठा लिया। हालाकि गुजरात राज्य ने इसे कायम रखा। सन् 1977 में केन्द्र में मोरारजी देसाई के नेतृत्व में सरकार बनी। मोरारजी देसाई सरकार के कार्यकाल में मद्यनिषेध के लिए एक बार फिर से प्रयास प्रारम्भ किये गये, लेकिन यह राष्ट्रव्यापी मद्यनिषेध का लक्ष्य प्राप्त कर पाने में असफल रही।[12]

उस दौरान मद्यनिषेध के नकारात्मक प्रभावों, जिनमें बड़े पैमाने पर स्थानीय स्तर पर बनी नकली एवं सस्ती शराब की बिक्री किया जाना, संगठित अपराधों में वृद्धि तथा शराब के लिए काला बाजार के विकसित होने के कारण अवैध शराब का निर्माण, निषेध को लागू किए जाने की निगरानी के लिए बड़ी संख्या में आवश्यक पुलिस बल की आवश्यकता तथा शराब उद्योग से जुड़े लोगों को होने वाली रोजगार की हानि इत्यादि भी शामिल थे, ने मद्यनिषेध के लिए किये जाने वाली मांग को कम कर दिया। ये सभी कारकों के कारण शराब के विनियमन के आवाह्न को नये सिरे से जन्म दिया।

मई 2004 से अप्रैल 2009 के बीच केन्द्रीय स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्री अंबुमणि रामदॉस ने एक राष्ट्रीय अल्कोल नीति तथा राष्ट्रव्यापी निषेध नीति को लागू करने आग्रह एवं प्रयास किया। लेकिन वर्ष 2009 से 2011 तक की अवधि के दौरान सरकारी आंकड़े यह पुष्टि करते हैं कि शराब के विरुद्ध गैर–निषेध वाले राज्यों की तुलना में संपूर्ण मद्यनिषेध वाले गुजरात जैसे राज्यों के द्वारा नकली शराब से होने वाली मौतों के विषम आनुपातिक अंश का समाना किया जा रहा है। वास्तव में, हमारी सरकारें यह समझ पाने में विफल साबित हो गई कि शराब की बिक्री से प्राप्त होने वाला राजस्व मद्यपान के सामाजिक परिणामों के कारण किये जाने वाले व्ययों की तुलना में कहीं कम है।[13]

एक अध्ययन के आंकड़ों के अनुसार, कर्नाटक राज्य में यह देखा गया कि मद्यपान की सामाजिक लागत शराब से प्राप्त किये गये राजस्व की तुलना में कई गुना अधिक हो चुकी है। शराब आश्रित लोगों के एक छोटे से नमूने के आधार पर यह अनुमान लगाया गया है कि होने वाली हानियों की राशि 18.39 अरब रुपयों की थी, जबकि इसकी तुलना में प्राप्त राजस्व मात्र 8.6 अरब रुपयों का था। **राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण रिपोर्ट** 2005–06 के आंकड़ों के अनुसार, बिहार में जहां 33 प्रतिशत, उत्तर–प्रदेश में 25 प्रतिशत लोग शराब का सेवन करते थे, वहीं राजस्थान में केवल 15 प्रतिशत लोग शराब का सेवन करते थे।[14]

भारत के विभिन्न राज्यों में मद्यपान एवं मद्यनिषेध आज अपने नवीन एवं बदलते प्रतिमान के साथ चल रहा है। वर्तमान समय में भारत के पाँच राज्यों में पूर्ण शराबबंदी (**बिहार, गुजरात, लक्षद्वीप, नागालैंड एवं मिजोरम**) और कुछ में आंशिक शराबबंदी लागू है।[15] गुजरात में 01 मई, 1960 से शराब बंदी लागू है, लेकिन कालाबाजारी के जरिये शराब का कारोबार जारी है। हरियाणा में मद्यनिषेध के कई प्रयास किये गये, लेकिन अवैध शराब व्यापार को नियंत्रित नहीं कर पाने के कारण उसे उस नीति को छोड़ने के लिये बाध्य होना पड़ा। बिहार राज्य में 01 अप्रैल 2016 को विदेशी शराब के क्रय–विक्रय को निषेध घोषित किया गया। वहीं 05 अप्रैल, 2016 को राज्य में पूर्ण मद्यनिषेद्य लागू हो गया।[16] बिहार में मद्यनिषेध के बाद जहरीली एवं अवैध शराब से बिहार में मौतें होती रही हैं और परिवार उजड़ते रहे हैं। मद्यनिषेध का फैसला बिहार सरकार के हौसले का परिचायक है। बिहार सरकार द्वारा लिया गया एक अटल एवं सुदृढ़ नीति का परिचायक है।

निष्कर्षः–

उपर्युक्त तथ्यों कि विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारत एक विविधताओं से भरा देश है। इसके कुछ राज्यों में शराब अथवा मदिरा का सेवन उच्च एवं संभ्रात संस्कृति का सूचक माना जाता है। भारत में राज्यों का '**शुष्क**' एवं '**आर्द्र**' राज्यों में बदलने का इतिहास रहा है। विभिन्न राज्यों द्वारा अक्सर शराबंबदी के पक्ष में कानून बनाए गए हैं और बाद में इसे मुख्यतः दो कारणों – वित्त संबंधी कारण एवं कानून का प्रभावी कार्यान्वयन न होने के कारण, हटा दिया गया। शराब पीने के संबंध में कानून बनाने का अधिकार राज्य के पास है, इसलिये शराब पीने की कानूनी उम्र भी राज्य के अनुसार अलग–अलग निर्धारित किया गया है। विभिन्न राज्यों द्वारा यह 18 वर्ष से लेकर 25 वर्ष तक निर्धारित की गई है। कुछ राज्यों में शराब पीने संबंधी कानून तोड़ने पर जुर्माना का प्रावधान है, तो किसी राज्य में जुर्माना एवं कारावास दोनों का प्रावधान है। पुरुष में शराब की लत से सबसे ज्यादा उसके परिवार की महिलाएं ही पीड़ित होती हैं। यह भी सवर्विदित है कि शराब की बिक्री से राज्य को भारी राजस्व की प्राप्ति होती है। इसकी भारपाई कर पाना किसी सरकार के लिए आसान नहीं है। इन परिस्थितियों में बिहार में पूर्ण मद्यनिषेध नीति का लागू होना, वास्तव में बिहार सरकार का एक अनुकरणीय कदम है। यह बिहार के इतिहास में एक सामाजिक परिवर्तन का फैसला है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वेलियेंट, जी० ई० (1995), दि नेचुरल हिस्ट्री ऑफ एल्कोहलिज्म रिविजिटेड, हार्वर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, यू०एस०ए०, पृष्ठ सं० 12

2. पेक, गारेट (2009), दि प्रोहिबिशन हैंगओवर : एल्कोहल इन अमेरिका, रूटर्गस युनिवर्सिटी प्रेस, न्यू जर्सी, पृष्ठ सं० 61
3. भारतीय योजना आयोग (1990)**:** 'सोशल वेलफेयर इन इण्डिया', भारत सरकार, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 37
4. सुरेन्द्र वर्मा, सुरेन्द्र (2014) : भारत में समाज कार्य का क्षेत्र, आलेख पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 54
5. फारूकी, उमर (अक्टूबर, 2010): महिला सशिक्तकरण में पंचायती राज की भूमिका, कुरूक्षेत्र, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 113
6. सिंह, आनन्द (2010): आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 29
7. सिंह, अजय (2012): एवेयरनेस ऑफ कम्युनिटी डेवलपमेंट इन इण्डिया, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशनस्, नई दिल्ली, पृष्ठ सं० 58
8. सिंह, होशियार एवं पिलानिया, जी० पी० (1995): एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड सोशल चेन्ज, पिन्टबेल पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ सं० 32
9. खान, इमरान (21 मार्च, 2022): डेथ ड्यू टू कन्जप्शन ऑफ्फ 'देसी' इलिसिट लिकर इन ड्राई स्टेट बिहार, हिन्दुस्तान टाइम्स, पटना, पृष्ठ सं० 10
10. तिवारी, शिवकुमार (2009) : भारत में निर्धनता की समस्या और समाधान, कुरुक्षेत्र, अंक 4, फरवरी 2009, पृष्ठ सं० 06
11. केलर, एम० एवं एफ्रोन, वी० (दिसम्बर, 1955) : दि प्रिवेलेन्स ऑफ एल्कोहलिज्म, क्वार्टरली जर्नल ऑफ स्टडीज ऑन एल्कोहल, वाल्यूम–16, पृष्ठ सं० 1109
12. चटर्जी एवं गोखले (1994) **:** सोशल वेलफेयर, लीजेण्ड एण्ड लीगेसी, पॉपुलर प्रकाशन, बम्बई, प्रथम संस्करण, पृष्ठ सं० 32
13. अग्रवाल, एन., सिंह, सी०एम०, कुमार, सी० एवं शाही, ए०के० (2017): एसेसमेंट ऑफ इम्प्लिकेशनस् ऑफ एल्कोहल प्रोहिबिशन इन बिहारः ए पाइलोट स्टडी, इण्डियन जर्नल ऑफ कॉम्यूनिटी एण्ड फेमिली मेडिसीन, वाल्यूम–3, न0–1, पृष्ठ सं० 64
14. राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण रिपोर्ट, 2005–2006
15. प्रसाद, धनेश्वर (2018): शराबबंदी : एक फौलादी फैसला, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ० सं० 06
16. कुमार, एस0 एवं प्रकाश, एन0 (2016): बिहार् एल्कोहल बैन : गुड इन्टेन्शनस्, इम्प्रैक्टिकल पॉलिसी, इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल विकली, वाल्यूम– 51, न०– 01, पृष्ठ सं0 1034

राजनीतिनिपुणो गौतमो आर्य श्रावको

डॉ. लेखमणी त्रिपाठी*

ईदृग्भाषी गौतमबुद्धो नास्ति निवृत्तिचर्योपदेशको गृहस्थानां कृते। भारते। सदैव गृहस्थानां संख्याधिकरासीत् श्रमण–संख्यातः।

राजनीतिनिपुणो गौतमो राज्ञां विजयलाभोचित्तप्रवृत्तिमपि प्राबोधयत् महापरिनिब्बाणं–सुत्ते सोऽजातशर्त्रोदूतं वर्षकारेण परामृशति स्म– के ते सत्यपरिहाणीयधर्मा येषां परिपालनेन वज्जिगणोऽजेयो वर्तत इति। अन्यत्र स पाटलिपुत्रस्यान्तरायत्रयं विवृणोति– अग्निः, जलप्लावनं, पारस्परिकशात्रवं च।

आर्यश्रावको ब्रह्मविहारेण दिक्चतुष्टयमखिलजगदपि अभिव्याप्नोति।[1] गृहस्था अपि शीघ्रातिशीघं भिक्षुप्रथमेण प्रयरन्तु इति स निःसन्दिग्धं प्रणोदयति।[2]

गौतमबुद्धः प्राक्तनतमवैदिकधर्मस्य स्व६पं सम्यक् परिष्कृत्य प्रकाशितवान्। तद्यथा सुत्तनिपातस्य सेलसुत्ते प्रकटितम्– गौतमः केवल (वेद)[3] परिपूर्णं परिशुद्धं ब्रह्मचर्यं प्रकाशयतीति। अत्र ब्रह्मचर्यं हि ब्रह्मविद्यया ब्रह्मविहारः (करुणान्मुदितोपेक्षा–मैत्री) साध्यते।उपनिषदां ब्रह्मचर्येण ब्रह्मसंस्थत्वं प्राप्यते।

प्रसङ्गेऽस्मिन्निदमपि विचारणीयं यद् बौद्ध–जैनधर्मोपासका बहवो राजान[4] महासम्राजो बभूवुर्येषां विजयिनी गाथा लोकोत्थानमय्यः प्रवृत्तयश्चानन्या एव न केवलं भारतेऽपितु विदेशेष्वपि प्रगीयन्ते स्म। तस्य जीवनकालेसम्राऽजातशत्रुः कथं तस्य शिष्यो बभूवेति ऐतिहासिकी गाथा।

प्रवृत्तिमार्गेण महापुरुषः कश्चिच्चक्रवर्ती सम्राडादर्शो भवेतु, निवृत्तिमार्गेण च बुद्धो भवेदिति लोकशास्ता प्रतिपादयति।[5]

श्रमण–ब्राह्मण–भिक्षु–साधूनां कृते बौधधर्मानुयायि–गृहस्थेषु सत्प्रवृत्तिप्रवर्तनं परमकर्तव्यं निर्धारितम्। तद्यथा ते कलपुत्रान् (1) पापान्निवारयन्तु (2) कल्याण–पथे नियोजयन्तु (3) कल्याणं प्रापयन्तु (4) अश्रुतं ज्ञानं श्रावयन्तु (5) स्वर्ग–पथ दर्शयन्तु। अनेन विधिना राष्ट्रियचरित्रनिर्माणदिशि श्रमणादीनां राष्ट्राभ्युदये उद्योगः प्रशस्य आसीत्।

न केवलं मानवं प्रति बौद्धकरुणा समुदितापितु 'सब्बेसु भुतेसु निधाय दण्डं' अविहेठयं अञ्ञतरं पि तेसं इति प्ररोचनं विहितम्। सु0नि0 खडगविसाणसुत्ते अन्यत्र च। स त्रसस्थावरेष्वपि अविरूद्धः स्यात्।[6]

शरणत्रयोपलब्धिरार्यसत्यस्याष्टाङ्गिकमार्गस्य च प्रपत्तिः, ध्यानं, नैष्कर्म्यमुपशमः, नित्यमेव संसेव्यानि। अन्यच्च–

यथा–पूर्व प्रोक्तं वैदिकधर्मे इन्द्रादिदेवादीनामनुग्रहार्थं यज्ञ–स्तुति–तपो नम उपासना–ध्यान–योगादीनां महत्त्वमासीत्। एतेषां स्थाने गौतमेन बुद्धानां श्रावकानां प्रपञ्चतप्तिक्रान्तानां च पूजा व्यधात्।[7]

गौतमबुद्धस्य स्तुपमुद्दिश्योपासकैः मालागन्ध–चूर्ण–प्रदानमभिवादनं च सुखाय भवतः। महासुत्ते षष्ठपरिच्छेदे–

पूजा रहे पूजयतो बुद्धेयदिव सावके।
पपञ्चसमतिक्कान्ते तिण्णसोकपरिद्दवे।।
ते तादिसे पूजयतो निब्बुते अकुतो भये।
न सक्का पुञ्ञं संखातुं इमेत्तमपि केन चि।।[8]

---

* अतिथ अध्यापक, बौद्ध दर्शन विभाग, श्रमण विद्या संकाय, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

[1] अंगुत्तरनिकाये दसकनिपातो।

[2] आरोपयित्वा गिहिव्यंजनानि संसीनपत्तो यथा कोविदारो।
छेत्वान वीरो गिहिबन्धमानि एको चरे खग्गविसाणकप्पो।।
सुत्त0नि0 खग्गविसाणसुते 10

[3] केवलं तु Doctrine of the absolute unity of sprit Mon. Willioms Skt. Eng. Dictionary, p. 310

[4] दीघनिकाये सामञ्जफलसुत्ते (1.2) अजातशत्रोर्बुद्धादुपासकधर्मग्रहणं स विस्तरे वर्णितम्।

[5] दीघनिकाये लक्खण–सुत्त 3.7

[6] सु0नि0 नासकसुत्त 26। दशशिक्षापदेषु प्राणातिपातविरमणं निर्दिष्टम्।
प्रसास्तु मनुष्य–जीव–जन्तवः। स्थावराः पुनः मृत्तिका–पर्वत–तृण–वृक्षादयः।

[7] मधपरिनिब्बाण सुत्ते। अन्यत्रापि–धम्म चरियं ब्रह्मचरियं। सु0नि0 धम्मचरिय सुत्त।

न खलु स्वकार्यार्थमेवास्माकं कार्यप्रवृत्तयो भवन्तु, अपितु लोकहिताय बहुजनसुखायास्माकीनं ब्रह्मचर्यमिति मनसाधारयेत्।[9]

गौतमबुद्धो वैदिकधर्मस्य महत्वपूर्ण तपसो दुःसहस्वरूपमात्रं निषेधितवान् किन्तुस तपस उदात्तररूपं भिक्षुणां कृतेऽनिवार्यमपरिहार्यं च व्यधात्। तथैव स वैदिकयज्ञस्याग्निहोत्रं पशूनां बलिदानं च भृशं निनिन्द किन्तु स पञ्चमहायज्ञानां महान् पक्षधरो विभाति।[10]

मरणानन्तरं निर्वाणमेव मानवजीवनस्य सर्वोच्चमुद्देश्यम्। तत्तु धर्माचरणेन आर्यसत्यचतुष्टयेन, अष्टाङ्गिकमार्गेण, ब्रह्मविहारेण च लभ्यम्।[11] निर्वाण तु मुक्तिरेव। यदि भिक्षु साधनाया अपूर्ण–त्वात् निर्वाणं न लभेत् तर्हि स ब्रह्मलोकमधिगच्छति।[12] फुण्यपथगामिनां कृते बहवः स्वर्गलोकाः सुखभोगविलासार्थं तत्र निर्दिष्टाः।

निर्वाणायाकिञ्चन्यमनादानं चावश्यकम्। सु0वि0 कप्पमाणवपुच्छा।[13] तृष्णाया विमुक्तिरवे निर्वाणम्।[14]

सदाचारिणः श्रावकाः स्वर्गं गच्छन्तीति बुद्धः प्रबोधयति सुत्तनिपाते धम्मेन–माता पितरो भरेय्य पयोजये धम्मिकं सो वणिज्जं।

एतं गिही वत्तयं अप्पमत्तो सयंपभे नाम उपेति देवेति। धम्मिकसुत्ते 24 पापा निरयं (नरकं) गच्छन्ति। पापं तु भृशमेण परदारोपसेवनं, दुष्परामृष्टं श्रामण्यं मिथ्यादृष्टिः। एतानि नरयकारकाणि धम्मपदे 22.1.4 नैकविधनरकेषु असंख्यविधयातना गौतमेन सुत्तनिपातस्य कोकालिय सुत्ते विस्तारेण वर्णिताः सन्ति।[15]

यदि नाम निर्वाणपथे सम्यग् गतिर्नामवत् तर्हि भिक्षुः सकादागामी भवति। अर्थात् सकृदेवेह जातः पुनर्निर्वाणं लभते। कतिपयभिक्षवो मरणानान्तरं देवा भवन्ति[16], देवलोक एव निर्वाणं लभन्ते। अन्ये बोधिपथे स्त्रोतआपन्ना जायन्ते! अर्हन् प्राप्तनिर्वाणो महात्मा शाश्वतं जन्मबन्ध विनिर्मुक्तो प्रतिभाति। कि पुण्यं नामेति नैकशो बुद्धेन– व्यायातम्।

प्रथमं तावदष्टाङ्गिक मार्गो दशशिक्षापदं च व्यनक्ति पुनण्पथम्।

बौद्धधर्मस्य विदशेषु प्रसारो राजभिरपि सम्भावितम्।

तत्राशोकस्य गणना प्रथमस्थानमर्हति। स धर्मदूतान् ग्रीस–मिस्त्र–सीरिया मेसीडोनिया लङ्कादिप्रदेशेषु प्राहिणोत्।[17] रानिन्सन महोदयो निगदन्ति।

---

[8] धम्मपदे बुद्धवग्गो 17, 18

[9] गौतमबुद्धोऽपि विशुद्धयज्ञसम्पादनेन स्वर्गलाभस्य सम्भावनां स्वीकारेति। दीघनिकायस्य कुटदन्तजातकस्य महाणिजितेस्य यज्ञस्य वर्णनप्रसङ्गोनोदाहृतम्।

[10] तुलनात्मक दृष्टयाधोविर्ध प्रस्तुतर्वर्तते प्रकरणस्य–
(क) ब्रह्मयज्ञः (स्वाध्यायः अध्यापनम्)
(ख) देवयज्ञः (देवानां पूजा) बुद्धपूजा भिक्षुपूजा
(ग) पितृयज्ञः पित्रोः पूजा
(घ) भूतयज्ञः प्राणिनः प्रति अनुकम्पा
(ङ) अतिथिपूजां भिक्षुभ्यो भोजनदानं

[11] धम्मं चरे सुचरितं न तं दुच्चरितं चरे।
धम्मचारी सुखं सेति अस्मिं लोके परम्हि च।। (धम्मपदे 13.3)
महापरिनिब्बाण–सुत्तानुसारेण स कोटिग्रामे भिक्षुसंघं प्राणोधयत्। आर्यसत्य चतुष्टय सम्यग्दर्शनेन पुनर्जन्म न विद्यते।

[12] अङ्गुत्तरनिकाये मेत्तसुत्त।

[13] तृष्णाया विप्रहानेन निर्वाणमित्युच्चते। सु0नि0 उदयमाणवपुच्छा।

[14] धम्मपदे निरयवग्गे नरकगामिनां लक्षणानि वर्णितानि।
सुत्तनिपाते धम्मपरियसुत्ते
विनिपातं विनिपन्नो गब्भा गब्भं तमा तमं।
सवे तादिसको भिक्खू पेच्च दुक्खं निगच्छति।।
एष मार्गो निरयगामि।

[15] महापरिनिब्बाणसुत्ते सुदत्तोपासकविषये भगवद्वचनं।

[16] बुद्धशरणं गतो न हि नरकं गच्छति।
मरणानन्तरं स देवशरीरं लभते।

[17] When ashoka was converted to Buddhism his first thought was to dispatch missionaries to his friends, the Greek monarchs Egypt. Syria and macedonia that they might share in the glad tidings of this new creed, intercourse between India and western world, p. 39.

The Buddha story became gradually know in the west unit by 19 coincidence hardly to be paralied in literature it was narrated in the eight centur. A.D. by John of Damascus as the life of a Christian saint. Under the guise of Josaphat, Gautam, the Bodhisattva found his way in to the Christian Church and was included in the Martyrology of Gregory XIII.

Intercourse Between India and Western World- p. 142

काव्य– नाटकादिभिर्मध्येशियानामके भूखण्डे बौद्धधर्मस्य प्रचारः समभवत्। तत्रत्यानां भाषाभिर्विरचितेषु नाटकेषु बुद्धं नायकं विधाय तस्य जीवनचरितं सिद्धान्ताश्च प्रतिपादिताः।[18] चीन–तिब्बत–कोरिया जापानदिदेशान् बौद्धाचार्याः स्वधर्मोपदेशेन सच्चारित्र्य–प्रकाशनेनासंख्य ग्रन्थानां तेषां। भाषाविरचनेन चानस्यतमं योगदानं दर्शयन्तिस्म्। तत्र–तत्र शिल्पकला साहित्यदिसासांकृतिक– प्रवृत्तीनां लक्षितुं शम्पतेऽधुनापि।

पूर्वदिश्यप्रदेशेषु बौद्धधर्मो वर्मा–स्याम–मलय–सुवर्णद्वीप–जावा–बालि बोर्नियो–भारत चीनादिदेशेषु परिव्याप्तः।[19]

1954 ख्रीष्टाब्दे षष्ठबौद्धमहापरिषद् रंगूननगरे आयोजिताः त्रिपिटक संशोधनमं पुनरपि विहितम्। अस्मिन्नवसरे भारतराष्ट्रपतिः सन्दिदेश इस संगायन द्वारा न केवल उन देशों में जहाँ बौद्धधर्म का पालन नहीं हो रहा है, वहाँ बुद्धधर्म के प्रति प्रेम बढ़ेगा।

परन्तु उन लोगों के जीवन में भी जो सौभाग्य से इस धर्म का पालन कर रहे हैं, श्रद्धा और आदर पुनर्जीवित करने में सहायता मिलेगी।

आज की भटकी हुई मानव जाति में यह संगायन पुनः शान्ति और सद्भावना का सन्देश प्रचारित करे। तस्मिन्नवसरे भारतस्य प्रधानमन्त्री जवाहरलालो नेहरुः सन्दिदेश– बुद्ध की स्मृति में मैं अपनी श्रद्धा अर्पित करता हूँ और रंगून के बड़े संगायन को अपनी आदरपूर्वक शुभ कामनायें भेजता हूँ।

यह संगायन इस मंगलमय समारोह के अवसर पर जुट रहा है। जब दुनिया को शान्ति की बड़ी जरूरत है।

तरिमोपत्यकायां तरुष्काणा[20] माधिपत्यं ख्रीष्टपूर्वं द्वितीयशताब्देऽभवत्। तत्र ते बौद्धधर्मानुयायिनो जाताः। 570 ख्रीष्टाब्दे तीबा–रवाखानः बौद्धधर्मे दीक्षितो भ्रमचारिां तुरूष्काणां सांस्कृतिकसमृत्थानाय तेषु बौद्धधर्मेप्रचारमनुष्ठितवान्। बिहारमेकं स निर्मितवान्।[21] स चीनदेशाद् बौद्धग्रन्थान् प्राप्तुं दूतं प्राहिणोत्।

अन्येषु देशेषु बौद्धधर्मो लोकप्रियतामवाप। तथाहि– महायान–बौद्ध धर्मः चीन–कोरिया–जापान त्रिविष्टपेषु हीनयानश्च लङ्का–वर्मा–स्यामेन्डोचा– इनेण्डोनेशियासु च प्राचरत्।

गौतम बुधस्य शरणत्रयं परि परवर्तियोजनभासींद्यदा तस्य शिष्याण संख्या सातिशयवृद्धिं लेभे। बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामिति प्रारम्भिकस्थितौ समीचीनमासीत्। तदा नासीत् सङ्घः। भिक्षुबहुत्वे संघस्य कल्पना जाता। पूर्वतस्तु गौतमस्य मतमासीत्–

एको चरे खग्ग विसाण कप्पो। सु0नि0 खग्गविसाण सुत्ते। तदा बौद्ध–भिक्षूणां संस्थोपनिषत्संन्यासवानप्रस्थ संस्थावत् प्र६डा बभूव। गौतमस्तु विश्वस्य तादृशेषु धर्मोन्नायकेषु अनन्यतमं पदं भजते, ये वर्ण–जाति व्यवसाय–लिङ्ग–वैषम्यादिकं कस्यचिज्जनस्य धर्मोपचयपथे न केवलं सिद्धान्ततोऽपितु व्यवहारतोऽपि विचाराहं न मन्यन्ते। तत्र सर्वेषां योगदानं तस्याभीप्सितमासीत्।

उपासकानां कृते कस्य पूजा कर्तव्येति गौतमस्यान्य एव पन्थाः। न देवादीनामयितु (1) पित्रोः (2) गुरोः (3) पत्न्याः (4) बन्धु–बान्धवानाम् (5) सेवकस्य च पूजा विधेया। पूजा तु तेषां ससम्मानं सम्भरणमाज्ञापालनं, सात्विकव्यवहारः संरक्षणं चेत्येतानि यथायोग्यं सम्पादनमेव। प्रकरणेऽस्मिन् गौतमो लोकसंग्रहं सर्वोपरि निश्चिनोति

स स्वजनानपि धर्मप्रचारार्थं प्रेषितवान्। यथा तेन प्रेषितौ संघमित्रा–महेन्द्रो श्रीलङ्कदेशे बौद्धधर्मं प्रचारितवन्तो।

ग्रीकराजो मिनेण्डरो भद्रनागसेनस्य प्रभावेण केवलं स्वयं बौद्धधर्मं जग्राह, अपितु नैक देशेषु विदेशेषु बौद्धधर्मप्रचारार्थं योजना विधतेस्म।

महाराजकनिष्कस्य प्रभावेण बौद्धधर्मो मध्यएशिया–चीन–जापान–तिब्बत–वर्मा थाईलैण्ड– कम्बोडियादि– देशेषु प्रासरत्। बौद्धधर्म के 2500 वर्ष पृ0 39–42

[18] Indian and Central Asia, p. 54

[19] अस्य विषयस्य विशदवर्णनमग्रे द्रष्टव्यम्

[20] तुरूष्काः (तुर्काः) मूलतो हूणा बभुवूः।

[21] तोवा–खाकानो नैकस्तूपान् रचयामास, धर्मोत्संवांश्चायोजनामास।

पूर्वोक्तैर्विधानैरिह लोके व्यष्टिशः, समष्टिशश्च जीवनसौष्ठवं सामाजिकसहभावश्च समुदीयेत इति निश्चप्रचम्। स शिल्पज्ञानमुत्तमं मङ्लमिति विवृण्वन् सुष्ठुसमाजनिर्माणं व्याकुरुते।'

बुद्धो जन्मना जातिरिति वैदिकधर्मानुयायिनां विधानं भृशं विरुणद्धि। तदनुसारेण कर्मणा जातिर्भवति। जातिः कर्मपरिवर्तनेन परिवर्तनीयेति स प्रोक्तवान्।[22] यथा स निर्दिशति– ब्राह्मणस्तु सत्यहिंसा–ब्रह्मचर्य–परिग्रहाणां धयः।[23] स ब्राह्मणं निर्वाणाधिकारिणममन्यत।[24] निर्वाणार्थस्मृसत्युनिपि स्थानचतुष्टयस्य साधना चिरकालिकी अपि प्रभवति।[25] गृहस्थानां कृते बुद्धो भोगविलास–प्रवणं जीवनं निषेधयतिस्म। कथति धम्मिकसुत्ते–मद्यपान, मालाधारणं गन्धोपभोगं च वर्जयेत्। तत्र प्रसिद्धास्ति बुद्धस्य मध्यमा प्रतिपद यस्यां घोरतपसो विलासस्य च समानं वर्तते निषेधः। तथापि तपोमय जीवनस्यादर्शबौद्धधर्मेणाविनाभावः।

सप्तधर्मरत्नेषु स्मृत्युपस्थानं तु प्रथमस्थानीयम्।[26]

वैदिकदर्शनस्य जीवन्मुक्तिरिव बौद्धानां ब्रह्मविहारः–मैत्री–करुणा मुदितोपेक्षेति चतुष्टयेन सिद्धो भवति। तस्याभ्यासेन पापाद्विरतिः सम्भवति। (अंगुत्तरनिकाये 4–6) प्रकरणेऽस्मिन् विज्ञेयं यद् गौतमेन वैदिकधर्मास्यादिप्रवर्तकं ब्रह्मेति ख्यात सम्यग्विज्ञाय तस्य व्यवहारिकमनोवृत्तिं मैत्री–करुणा–मुदितोपेक्षेति चतुष्टयं ब्रह्मविहार इति स्वीकृत्य भिक्षुनुपादिशत्।[27] ब्रह्मविहारस्तु ब्रह्मसंस्थत्वम्। अस्यां स्थितौ कश्चित्साधको ब्रह्मभवत् सर्वेषु द्वन्देषु मैत्रीकरुणादिकमेव व्यवहरति। सोऽयं वैदिकदर्शनस्य ब्रह्मानन्दो गौतमेन स्वधर्मे उपरिकृतः। अत्र प्रश्नः समदेति– किं नम ब्रह्म, ब्रह्मा वा। वैदिकदर्शने 'ब्रह्मा आदिसत्ता, आदिदेवो वा। ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव। मुण्डकोपनिषद् बौद्धसाहित्येऽयं ब्रह्मा तु, यथा वैदिकसाहित्ये नैकस्थलेषु संकेतिम, महामानव एव। दीघनिकाये महाब्रह्ममुखेन व्याख्यातं वर्तते।[28] तदनुसारेण महाब्रह्मा अनभिभूतः, परार्थ द्रष्टा, वशी, ईश्वरः, कर्ता, निर्माता, श्रेष्ठः सर्वभूतभाविपिता चास्ति। स देवनोकाधिष्ठितः देवानां गणनायकस्सन्नपि गौतमबुद्ध इव सज्ञतार्वा नास्ति। स देवनोकाधिष्ठितः देवानां गणनायकस्सन्नपि गौतमबुद्ध इव सज्ञतार्वा नास्ति।

प्रकरणेऽस्मिन् देवा ब्रह्मा वा विशेषशक्तिसम्पन्ना मानवसना वर्तन्ते।

गौतमनुसारेण तत्रास्ति ब्रह्मचर्यमिति आचार्यप्रवेदितः कश्चित्सनातनो धर्मो न मनागपि कर्मकाण्डविधानस्पृष्टः। धर्मे तस्मिन् शीलसमाचारयोर्वैशिष्टयमस्ति। तस्य धर्मस्यानुयायिनोऽधोलक्षणैरभिज्ञाता भवन्ति–

(1) अनुतरा ते वचसा, मनसा, कर्मणा च।
(2) ते शान्ति–सौरत्य–समाधि–संस्थिता भवन्ति।
(3) ते ऋतस्य प्रज्ञायाश्च सारमधिगताः।[29]

तमार्यप्रवेदितं (सनातनं) धर्म स लोकसमक्षं विशदीयकार।

गौतमो यज्ञस्य विरोधको नाभवत्।[30] नैकविधयज्ञेषु यत्र यत्र स व्यर्थप्रपञ्चं 'दृष्टवान तत्र तर्कबुद्धया स विरोधम् प्रकाशितवान्। यथा सुतनिपाते सुन्दरीकभारद्वाजसुते सोऽग्निहोमनामकं यज्ञं निषेधति। स प्रबोधयति यद्

---

[22] मज्झिमनिकाये अस्सलायण सुत्तन्त, वासेट्ठ सुत्तन्त, फसुकारी सुत्तन्त।

[23] धम्मपदे ब्राह्मणवग्गो।

[24] दीघनिकाये 52 उष्णाभब्राह्मणसुत्त।

The Exalted one said 'It at this time, the Brahmin unnabha were to make an end there is no fetter, bound by which, he would come back to this works.

[25] मज्झिमनिकाये सतिपट्ठान–सुत्तन्त 15, 16 देहस्य, वेदनायाः, चित्तस्य मनोवृत्तीनां च यथार्थावलोकनं स्मृत्युपस्थान–चतुष्टयम्। एतेषु यथा श्मशाने शवशरीरदर्शनेन देह (कया) दर्शनं भवति। मज्झिमनिकायः सतिपट्ठानसुत्तन्ते।

[26] स्मृत्युयस्थानं, सम्यक् प्रधानं (प्रणिधानं प्रयत्नो वा), ऋद्धिपादं संकल्पोद्योगोत्साह संयमेनाभ्युत्थानम् इन्द्रियाणि (श्रद्धा, समाधि–वीर्य–स्मृति–प्रज्ञा) इत्यादीनि।

[27] गौतमबुद्धः पुराणब्रह्मणधर्म व्याख्यातवान् सुत्तनिपाते ब्राह्मणधम्मिकसुत्ते। तदनुसारेण पुरायुगे ब्राह्मणाः संयतात्मानः, तपस्विनः, स्वाध्यायधना लौकिकसम्पत्ति–रहिताः ब्रह्मनिधिपालकाः 48 वर्ष यावद् विद्याध्ययनरताश्च बभूवुः। इदं विशुद्धं ब्रह्मचर्य गौतमः सर्वार्थसाधकं मेने। सुत्तनिपात्तस्य सुन्दरिकभारद्वाज सुत्ते। भारद्वाजो गौतमं सम्बोधयति ब्रह्मन्निति 25 तमे सुत्ते।

[28] केवट्टसुत्ते 1.113; सक्कपञ्ञ्हसुत्ते गाथा 42

[29] सुतनिपाते किंसीलसुते 1,7।

[30] सुतनिपाते सुन्दरिकभारद्वाजसुते 29–31। अन्यत्र स प्रबोधयति।

हर्व्य तु तस्मा अर्पणीयं यो निष्कामः, सुसंयतात्मा, वीतरागः सुयमाहितेन्द्रियः, मायारहितो निर्लोभः, निर्ममः, निराशः, अपरिग्रहः समाधि विप्रमुक्तः निरकांक्ष साक्षाद ब्रह्मा भवति।[31] हव्यं तु महासव्वाय न तु अग्नये, प्रदेयमिति बुद्धस्य मत्तम् ।[32]

बौद्धमते देवानां प्रतिष्ठा प्रबभूव। स पाटलि ग्रामे सुनीथवर्षकारौ प्राबोधयत् देवेभ्यो दक्षिणा प्रदेया। ते लोकमौरसपुत्र वदनुकम्पन्ते। फलत उपासको मङ्गलमनुभवति। महापरिनिब्बाणसुतानुसारेण बुद्धस्य महापरिनिर्वाणदिवसे श्रेष्ठतमा अपि देवास्तस्य दर्शनार्थं कुशीनगरं समागताः। दीवनिकाये देवानां विविधकोटिकानां नामवसतीत्यादयः सहासमयसुते बुद्धेन गणिताः।

गौतमबुद्धो ब्राह्मणेभ्यो ब्रह्मसलोकता पथमपि प्रत्यपादयत्। दीघनिकायस्य तेविज्जसुते स वासिष्ठमाणवकं ब्रूते– पञ्चशीलैर्भिक्षुः प्रमुदितो भवति।[33] क्रमशः स प्रीतिमान्, शान्तः, प्रश्रब्धः एकाग्रचित्तश्च भवति। तदनन्तरं स ब्रह्मविहारेण (मैत्री–करुणामुदितोपेक्षा) भावनाभिर्ब्रह्मसलोकतां भजते। सोऽपरिग्रहः, निर्वैरः, अव्यापादः, असंक्लिष्टचित्तः, आत्मवशः, ब्रह्मवद् भति। इहलोकलीलासमाप्तौ स ब्रह्मसलोकतामधिकरोति।

ब्रह्मा महाब्रह्मा वा बुद्धानामपि किंकर्तव्य–समाधायकोऽमर एव वर्तते। यदा प्रथमो बुद्धः विपश्यी आदौ धर्मचक्रप्रवर्तनमुपेक्षते स ब्रह्मलोकेऽन्तर्धाय बुद्धसमीपमायाति। तं धर्मचक्रप्रवर्तनाय प्रोत्साध्यति च।[34]

गौतमबुद्धस्य सांघिकजीवनं क्वचित् सरसमपि विभाति। दीघनिकायस्य सक्कपञ्हसुत्तानुसारे स पञ्चशिखनामकस्य गन्धर्वस्य वेलुषवण्डु–वीणायाः सङ्गतौ बुद्धधर्म सङ्घाहर्दभोगविषयकगाथाः श्रुत्वा गीतवाद्य–स्वर–सामरस्येन सैमनस्यं सम्प्राप्तः। अत एव बौद्धधर्मानुयायिनां पूजा माला–गन्धद्रव्यस्तुतिगान–गीतवाद्ययुता सम्पाद्यते।

गौतमस्य शिश्या यद्यपि ऋद्धि–प्राप्त्या[35] प्रगुणा आसन् तथापि महिमार्जनाय ऋद्धि–प्रदर्शनं निषेधितमासीत्। महापरिनिब्बाणानुसारेण बुद्धः पारसिग्रामेऽन्तर्हितो गङ्गापारं गतवानासीत्।[36] अन्यत्रापि बहुशस्तस्य ऋद्धिमत्त्वं वर्णितम्।

बौद्धा जैना वा निवृत्ति–परायणा भवितुं शिक्षिता इति अर्धसत्यमेव। वस्तुत एतद् धर्मद्वयस्य द्विविधा लोका उन्नेया आसन् उपासका गृहस्था वा भिक्षवः साधवो वा। तत्र निवृत्ति–परायणास्तु अवश्यमेव निर्वाणार्थं निवृत्तिपरायणा भवन्तु नाम। किन्तु गृहस्थाः सदाचारयुता महता श्रमेणोद्योगेन च लौकिकसमृद्धिभूमान– मवाप्य समाजे सत्यं शिवं सुन्दरं च सर्वत्र प्रकल्पयन्तु इति तेषां कृते गौतमेनाष्टाङ्गिकमार्गेषु सम्यगाजीव इति व्याख्याताम्। मरणानन्तरं गृहस्थोपासकोऽप्यनागामी भवितुमर्हतीति दीर्घायुप्रकरणेन ज्ञायते।[37]

श्रीमती रीजडेव्सि प्रवृत्तिपरायणानां बौद्धानां ग्रामसौरभं सुमनसावर्णयति–

How happy would have been the village or the clan on the bank of the Ganges, where the people were full of the kindly sprit of fellow feeling, the noble sprit of justice, which bieathes through these naive and simple sayings (in the singalovadasutta). Buddhism, p. 148.

गौतमेन नैकशोऽभ्युदयशीलमानवस्य द्विविधप्रवृत्तिर्व्याख्याता–प्रवृत्तिः, निवृत्तिश्च। प्रवृत्तिपथेन स चक्रवर्ती विश्वजयी सम्राट् भवति। कायिक–सदाचारेण, प्रियङ्करत्वेन, अहिंसा–व्रतेन, सौमनस्य–प्रजननेन, धमार्थोपदेशेन न्यायवृत्त्या परिग्रहेण, दानेन, परहिताकांक्षया, सुचरितेन, सत्येन, मधुर–भाषणेन ऐक्यसमुत्थानेन, सम्यगाजीवने, सर्वजनहितकाम्यया च विश्वलोकमतिशेते।

उपासक–गृहस्थानां कृते गौतमेन पञ्चशीलानि निर्धारितानि। तद्यथा–

(1) प्राणातियात–विरतिः (2) अदत्तादान विरतिः
(3) काममिथ्याचार विरतिः (4) मृषावाद–विरतिः

यज्ञस्य शुद्धसनातनस्वरूपं यो यजति उप्पज्जति ब्रह्मलोकं। मानसुत 23 ये वे असता विचरन्ति लोके अकिंचना केवलिनो यवत्ता। कालेन तेसु हव्यं पवेच्छे यो ब्राह्मणो पुञ्च पेक्खो भजेथ।। सु.नि0 माधसुत 4, यजस्सु यजमानो इत्यादि माधसुत्ते 20।

[31] सुत्तनिपाते सुन्दरिकभारद्वाजसुत्तं।

[32] सुत्तनिपाते माथसुत्ते 4–17।

[33] महापरिनिब्बानसुत्ते सुनीथवर्षकासवसथ उपदेशः।

[34] दीघनिकाये 2.1 महापदानसुत्ते धर्मचक्रप्रवर्तनम्।

[35] ऋद्धयस्तु अलौकिकशक्तयः प्रायो योगाभ्यासेन स्वयमुपस्थिता भवन्ति।

[36] उदुम्बरिक– सीघ्नादसुत्तं 3.2।

[37] संयुत्तनिकाये 11.3

(5) सुरामैरेय–प्रमाद–स्थान–विरतिश्च।

सुत्तनिपातस्य धम्मिकसुत्ते बुद्धः प्रणोदयति– पयोजये धम्मिकं सो वणिज्जं।।24

सिगालोवादसुत्ते प्रवृत्तिमार्गनिदर्शनं गृहस्थानामुपासकानामार्याणामभ्युदयार्थं कथितम् सन्तानकर्तव्यम् पित्रो सम्भरणम्, कृलवंशसातत्य करणम्।

पित्रोः कर्तव्यम्– पुत्राय शिल्पप्रशिक्षणाद्–व्यवस्था, पुत्रोद्वाह–करणम्।

आचार्य प्रति कर्तव्यम्–शिल्पप्रशिक्षणम्, पत्नीं प्रति कर्तव्यम्– अलंकार प्रदानम्।[38]

यत्न्याः कर्तव्यम्– स्वामिनोऽर्जितस्य रक्षणमिति। मित्रं प्रति कर्तव्यम् – तस्मै दानं दातव्यम्, अर्थसम्पादनम् च। सेवकं प्रति कर्त्तव्यम्– भोजनवेतन– दानम् श्रमण–ब्राह्मणानां कर्तव्यम्–आर्येभ्यः उपासकेभ्यः स्वर्गमार्गनिदर्शनम्।[39]

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. बोधिचर्यावतार
2. अभिधर्मकोश
3. तत्वसंग्रह
4. सुत्तपिटम्
5. विनयपिटम्

◀◀ ▶▶

[38] दीघनिकाये 3/7 लक्खणसुत्तं।

[39] दीघनिकाये 3/8 सिगालोणादसुत्त।

रवीन्द्र नाथ टैगोर के शैक्षिक योगदान का समीक्षात्मक अध्ययन

मोहम्मद इरफान*

शोध सारांष :

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शैक्षिक योगदान मुख्यतः बालक की स्वतंत्रता, प्रकृति–आधारित शिक्षा, कला और साहित्य के समावेश, तथा मानवतावाद पर केन्द्रित था। उन्होंने शान्तिनिकेतन और विश्वभारती विश्वविद्यालय की स्थापना कर प्रयोगात्मक शिक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया। यद्यपि उनके प्रयोग सीमित स्तर पर सफल रहे, फिर भी उनकी शिक्षा–दृष्टि आधुनिक शिक्षा की कमियों को दूर करने में आज भी उपयोगी है। रवीन्द्रनाथ टैगोर भारतीय शिक्षा–दर्शन के ऐसे महान चिन्तक थे जिन्होंने शिक्षा को केवल ज्ञानार्जन या व्यवसायिक उपार्जन का साधन न मानकर उसे जीवन की समग्रता से जोड़ा। उनका मानना था कि शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के भीतर छिपे हुए व्यक्तित्व का विकास करना है, न कि केवल बाहरी उपलब्धियों की होड़ में उसे धकेलना। उनका शैक्षिक दृष्टिकोण इस विचार पर आधारित था कि शिक्षा बालक की सहज जिज्ञासा, स्वतंत्रता और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करे। उन्होंने प्रकृति को शिक्षा का सर्वोत्तम गुरु माना और कहा कि विद्यालयों को चारदीवारी में कैद करने के बजाय खुली प्रकृति में होना चाहिए। उनका मानना था कि बालक का विकास तभी संभव है जब उसकी शिक्षा कला, संगीत, साहित्य और संस्कृति से जुड़ी हो।

महत्वपूर्ण शब्द : रवीन्द्रनाथ टैगोर, शैक्षिक योगदान, मानवतावाद, शान्तिनिकेतन

प्रस्तावना :

भारतीय नवजागरण के पुरोधा, कवि, दार्शनिक, शिक्षाविद् एवं विश्वकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर (1861–1941) न केवल साहित्यकार और दार्शनिक थे, बल्कि एक क्रांतिकारी शिक्षाशास्त्री भी थे। उन्होंने शिक्षा को केवल पुस्तकीय ज्ञान का माध्यम न मानकर, जीवन–परिवर्तन और व्यक्तित्व–निर्माण की प्रक्रिया माना। उनका मत था कि शिक्षा मनुष्य को उसके परिवेश, प्रकृति, समाज और संस्कृति से जोड़ते हुए आत्मविकास के मार्ग पर अग्रसर करे। उनके शैक्षिक विचार आधुनिक शिक्षा की नींव रखते हैं तथा आज भी समकालीन शिक्षा–दर्शन में प्रासंगिक बने हुए हैं।

भारतीय पुनर्जागरण के इतिहास में रवीन्द्रनाथ ठाकुर का स्थान अद्वितीय है। वे एक साथ कवि, दार्शनिक, शिक्षाविद्, चित्रकार, राष्ट्रचिन्तक और विश्वमानव थे। उन्होंने भारतीय संस्कृति और सभ्यता को एक वैश्विक दृष्टि प्रदान की। साहित्य और संगीत के क्षेत्र में तो उनका योगदान विश्वविख्यात है ही, किंतु शिक्षा के क्षेत्र में भी उन्होंने एक नयी दृष्टि दी, जिसने आधुनिक भारत के शैक्षिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। रवीन्द्रनाथ ने अनुभव किया कि उस समय की शिक्षा–पद्धति बच्चों को केवल परीक्षा पास करने और सरकारी नौकरियों के योग्य बनाने तक सीमित थी। वह शिक्षा बच्चों की स्वाभाविक जिज्ञासा, रचनात्मकता और संवेदनशीलता को कुंठित करती थी। अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली के अंतर्गत विद्यार्थियों को मात्र ज्ञानार्जन की मशीन बना दिया गया था, जबकि उनका विश्वास था कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास करना होना चाहिए। इसीलिए उन्होंने कहा–"सच्ची शिक्षा वह है, जो हमें हमारे परिवेश और प्रकृति से जोड़ते हुए आत्मा की मुक्ति की ओर ले जाए।" उनकी दृष्टि में शिक्षा केवल बौद्धिक विकास का साधन नहीं है, बल्कि यह हृदय, मन और आत्मा को विकसित करने की प्रक्रिया है। वे शिक्षा को एक ऐसे माध्यम के रूप में देखते हैं जो मनुष्य को उसकी जड़ों से जोड़ते हुए उसे वैश्विक दृष्टि प्रदान करे। उनका यह विश्वास था कि बालक का विकास तभी संभव है जब उसे स्वतंत्रता और रचनात्मकता के लिए अनुकूल वातावरण दिया जाए।

इसी दृष्टिकोण के साथ उन्होंने 1901 में शान्तिनिकेतन की स्थापना की, जो आगे चलकर एक आदर्श शैक्षिक केंद्र बना। बाद में 1921 में स्थापित विश्वभारती विश्वविद्यालय ने उनके शैक्षिक विचारों को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित किया। यहाँ उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य शिक्षा का अद्वितीय समन्वय किया तथा शिक्षा को सार्वभौमिक और मानवीय मूल्यों से जोड़ने का प्रयास किया। आज जब शिक्षा व्यावसायीकरण,

* शोध छात्र (शिक्षा शास्त्र), डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ0प्र0)

परीक्षा–केंद्रितता और मूल्यहीनता की ओर अग्रसर हो रही है, तब रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शैक्षिक योगदान का पुनः अवलोकन अत्यंत आवश्यक हो जाता है। उनके विचार आधुनिक शिक्षा के लिए प्रेरणा–स्रोत हैं क्योंकि वे व्यक्ति और समाज, राष्ट्र और विश्व, तथा संस्कृति और प्रकृति के बीच एक संतुलित दृष्टि प्रस्तुत करते हैं।

यह शोधपत्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शैक्षिक योगदान का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। इसमें उनकी शैक्षिक पृष्ठभूमि, शिक्षा–दर्शन, शैक्षिक प्रयोग (विशेषकर शान्तिनिकेतन), शिक्षा में प्रकृति, कला, स्वतंत्रता तथा मानवतावाद की भूमिका, तथा उनके योगदान की आधुनिक प्रासंगिकता का विवेचन किया गया है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व

शैक्षिक दृष्टिकोण की विशिष्टता के रूप में वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में मूल्य शिक्षा, रचनात्मकता और समग्रता का अभाव स्पष्ट दिखाई देता है। टैगोर की शिक्षा–दृष्टि इन सबका समाधान प्रस्तुत करती है। प्रकृति और शिक्षा का संबंध से पर्यावरणीय संकट के दौर में प्रकृति–आधारित शिक्षा का महत्व पुनः रेखांकित हो रहा है। टैगोर का शिक्षा–तंत्र प्रकृति को शिक्षा का अभिन्न अंग मानता है। भारतीयता और सार्वभौमिकता का समन्वय की दृष्टि से शिक्षा को न केवल राष्ट्रीय बल्कि वैश्विक दृष्टिकोण से देखने का दृष्टिकोण टैगोर ने प्रदान किया। आधुनिक शैक्षिक चुनौतियों का समाधान के रूप में प्रतियोगी संस्कृति, परीक्षा–केन्द्रितता और शिक्षा के व्यावसायीकरण के बीच टैगोर का मानवीय, मूल्यपरक और सृजनशील शिक्षा–दर्शन दिशा दिखाता है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शैक्षिक योगदान केवल उनके समय तक सीमित नहीं है, बल्कि यह आज के युग में भी उतना ही आवश्यक और प्रासंगिक है। उनके शिक्षा–दर्शन को समझना और उसका समीक्षात्मक अध्ययन करना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि यह न केवल शिक्षा को मानवीय, प्रकृति–संगत और रचनात्मक बनाता है, बल्कि आज की चुनौतियों का भी समाधान प्रस्तुत करता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली अधिकतर परीक्षा और अंकों पर आधारित है। विद्यार्थी रटकर अंक प्राप्त करते हैं, किंतु ज्ञान का वास्तविक अनुभव और रचनात्मकता का विकास नहीं हो पाता। टैगोर का मत था कि शिक्षा का उद्देश्य केवल डिग्री या नौकरी नहीं, बल्कि व्यक्ति का समग्र विकास होना चाहिए। इसलिए उनके विचारों का अध्ययन आवश्यक है ताकि परीक्षा–प्रधान शिक्षा से हटकर जीवन–प्रधान शिक्षा का मार्ग अपनाया जा सके।

आज की शिक्षा में नैतिक मूल्यों, सह–अस्तित्व, करुणा, सहयोग और सत्य जैसे गुणों की उपेक्षा हो रही है। टैगोर ने स्पष्ट कहा कि शिक्षा तभी सार्थक है जब वह जीवन को नैतिकता और संवेदनशीलता से भर दे। वर्तमान सामाजिक विघटन, अपराध और हिंसा के दौर में मूल्यपरक शिक्षा का महत्व और भी बढ़ गया है। वर्तमान समय में पर्यावरण संकट, प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं। टैगोर का शिक्षा–दर्शन प्रकृति से जुड़ा हुआ था। वे मानते थे कि मनुष्य को प्रकृति के साथ एकात्म होकर जीना सीखना चाहिए। इसलिए आज प्रकृति–आधारित शिक्षा की आवश्यकता पहले से कहीं अधिक है।

वर्तमान शिक्षा प्रायः तकनीकी और व्यावसायिक दृष्टिकोण पर आधारित है, जिससे विद्यार्थियों की सृजनात्मक क्षमताएँ उपेक्षित रह जाती हैं। टैगोर ने कला, संगीत, नृत्य, चित्रकला और साहित्य को शिक्षा का अनिवार्य अंग माना। आज नवाचार (Innovation) और रचनात्मकता (Creativity) की जिस तरह से आवश्यकता है, टैगोर के विचार उसी दिशा में प्रकाश डालते हैं। आज शिक्षा में एक ओर अंध–राष्ट्रवाद का खतरा है और दूसरी ओर वैश्वीकरण की चुनौतियाँ। टैगोर ने शिक्षा को राष्ट्रीय चेतना से जोड़ते हुए भी उसे संकुचित नहीं किया, बल्कि विश्व–बंधुत्व और सार्वभौमिक दृष्टिकोण से जोड़ा। उनका यह दृष्टिकोण वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में अत्यंत उपयोगी है। आज की शिक्षा नौकरी और प्रतिस्पर्धा तक सीमित हो रही है, जबकि जीवन जीने की कला, सामाजिक उत्तरदायित्व और मानवीय संबंधों की समझ उसमें नहीं दिखाई देती। टैगोर ने शिक्षा को जीवनोपयोगी, व्यवहारिक और समग्र बनाने पर बल दिया। इस दृष्टिकोण का अध्ययन करना आज की पीढ़ी के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। भारत की बड़ी आबादी गाँवों में निवास करती है, लेकिन शिक्षा नीतियाँ अक्सर शहरी पृष्ठभूमि पर आधारित होती हैं। टैगोर ने ग्रामीण शिक्षा को विशेष महत्व दिया और कहा कि गाँवों को शिक्षा और स्वावलंबन के केंद्र बनाना चाहिए। यह विचार आज भी ग्रामीण विकास और समावेशी शिक्षा के लिए उपयोगी है।

प्रस्तुत शोधपत्र के उद्देश्य :

1. रवीन्द्रनाथ टैगोर के शैक्षिक दर्शन का विवेचन करना।
2. शान्तिनिकेतन एवं विश्वभारती विश्वविद्यालय की स्थापना और प्रयोगात्मक शिक्षा का विश्लेषण करना।
3. उनकी शैक्षिक अवधारणाओं की समकालीन प्रासंगिकता को स्पष्ट करना।
4. भारतीय एवं वैश्विक शिक्षा व्यवस्था पर उनके प्रभाव का समीक्षात्मक अध्ययन करना।

रवीन्द्र नाथ टैगोर की शैक्षिक पृष्ठभूमि :

रवीन्द्रनाथ का जन्म 7 मई 1861 को कोलकाता के जोरसांको ठाकुर परिवार में हुआ। परिवार में आध्यात्मिकता, कला, संगीत और शिक्षा का गहरा वातावरण था। औपचारिक शिक्षा प्रणाली से असंतोष के कारण उन्होंने आत्म–अध्ययन और प्रकृति से ज्ञान ग्रहण करने की पद्धति अपनाई। इंग्लैंड में अध्ययन के दौरान उन्होंने पश्चिमी शिक्षा प्रणाली का अनुभव किया, परंतु उसे भारतीय संस्कृति और प्रकृति से असंगत पाया। इसने उनके मन में एक नयी शिक्षा प्रणाली की नींव रखी।

रवीन्द्र नाथ टैगोर का शैक्षिक दर्शन

1. प्रकृति आधारित शिक्षा

- शिक्षा का सर्वोत्तम वातावरण खुला आकाश, वृक्षों की छाँव और प्राकृतिक परिवेश है।
- औपचारिक विद्यालयों की चारदीवारी और रटंत विद्या के विरोधी थे।

2. स्वतंत्रता और रचनात्मकता

- शिक्षा का उद्देश्य बच्चों की मौलिकता और सृजनशीलता को विकसित करना है।
- कठोर अनुशासन और दमनकारी शिक्षा प्रणाली को वे बच्चों की स्वाभाविक प्रवृत्तियों के प्रतिकूल मानते थे।

3. कला और साहित्य का समावेश

- संगीत, नृत्य, चित्रकला, साहित्य एवं नाट्यकला को शिक्षा का अभिन्न अंग माना।
- कला आत्म–अभिव्यक्ति और संवेदनशीलता के विकास का माध्यम है।

4. मानवतावाद और सार्वभौमिकता

- शिक्षा मनुष्य को केवल राष्ट्रीय नागरिक नहीं बल्कि 'विश्व–मानव' बनाती है।
- उन्होंने शिक्षा को अंतरराष्ट्रीय भाईचारे और सांस्कृतिक आदान–प्रदान का सेतु माना।

5. मूल्यपरक शिक्षा

- सत्य, करुणा, प्रेम और सहयोग की भावना शिक्षा का मूल आधार होना चाहिए।
- वे मानते थे कि शिक्षा केवल बुद्धि का नहीं, हृदय और आत्मा का भी विकास करे।

शान्तिनिकेतन और विश्वभारती विश्वविद्यालय

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 1901 में ''शान्तिनिकेतन विद्यालय'' की स्थापना की। यह विद्यालय प्राकृतिक वातावरण में खुली पाठशालाओं के रूप में विकसित हुआ। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी न होकर मातृभाषा रखा गया। 1921 में ''विश्वभारती विश्वविद्यालय'' की स्थापना हुई, जिसका ध्येय था। जहाँ विश्व का एक–एक व्यक्ति अपना घर समझे। यहाँ भारतीय और पाश्चात्य शिक्षा का समन्वय किया गया। अंतरराष्ट्रीय छात्रों और शिक्षकों का स्वागत कर वैश्विक शिक्षा का आदर्श प्रस्तुत किया गया।

शैक्षिक योगदान का समीक्षात्मक मूल्यांकन

1. सकारात्मक पक्ष

- शिक्षा को जीवनोपयोगी और व्यावहारिक बनाया।
- प्रकृति और कला को शिक्षा का केन्द्र बनाया।
- शिक्षा को सार्वभौमिक और मानवीय दृष्टिकोण प्रदान किया।
- बालक की स्वतंत्रता और रचनात्मकता को महत्व दिया।

2. सीमाएँ

- उनका मॉडल ग्रामीण भारत की आर्थिक परिस्थिति में सर्वत्र लागू नहीं हो सका।
- शान्तिनिकेतन जैसे प्रयोग उच्चवर्ग तक सीमित रहे।
- आधुनिक विज्ञान एवं तकनीकी शिक्षा पर अपेक्षाकृत कम बल दिया गया।

3. आधुनिक प्रासंगिकता

आज के परीक्षा–केंद्रित और व्यावसायिक शिक्षा के युग में टैगोर का मूल्य–आधारित और रचनात्मक दृष्टिकोण अत्यंत आवश्यक है। पर्यावरणीय संकट और सांस्कृतिक विखंडन की स्थिति में उनका प्रकृति और कला–आधारित शिक्षा दर्शन मार्गदर्शक सिद्ध होता है।

निष्कर्ष

रवीन्द्रनाथ टैगोर का शैक्षिक योगदान भारतीय शिक्षा–दर्शन का एक अद्वितीय अध्याय है। उन्होंने शिक्षा को जीवन, प्रकृति और कला से जोड़कर मानवीय संवेदनाओं और सृजनात्मकता के विकास का माध्यम बनाया। उनकी दृष्टि केवल भारतीय ही नहीं, वैश्विक भी थी। यद्यपि उनके शैक्षिक प्रयोग कुछ सीमाओं के कारण व्यापक रूप से लागू नहीं हो पाए, परन्तु उनकी शिक्षा–दृष्टि आज भी प्रेरणा स्रोत है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली को मानवीय, मूल्यपरक, रचनात्मक और प्रकृति–संगत बनाने में टैगोर के विचार अत्यंत प्रासंगिक हैं। वर्तमान समय में जब शिक्षा व्यावसायिकता, प्रतिस्पर्धा और परीक्षा–प्रधानता की ओर अग्रसर हो रही है, तब रवीन्द्रनाथ ठाकुर के विचार हमें याद दिलाते हैं कि शिक्षा केवल बुद्धि का विकास नहीं बल्कि हृदय और आत्मा का संवर्धन भी है। आज की पीढ़ी को मूल्यपरक, पर्यावरण–संवेदी और रचनात्मक शिक्षा देने के लिए टैगोर का शिक्षा–दर्शन मार्गदर्शक सिद्ध हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची –

1. चट्टोपाध्याय, सुभाष. (2012). टैगोर का शैक्षिक दर्शन और आधुनिक समय में उसकी प्रासंगिकता. कोलकाता, प्रोग्रेसिव पब्लिशर्स.
2. दत्ता, कृष्ण, एवं रॉबिन्सन, एंड्रू. (1995). रवीन्द्रनाथ टैगोर, द मायरीएड माइंडेड मैन. लंदन ब्लूम्सबरी.
3. मुखर्जी, एस. एन. (2010). शिक्षा और टैगोर. नई दिल्ली, अटलांटिक पब्लिशर्स.
4. सेन, अमर्त्य. (2006). टैगोर और उनका भारत. आर्ग्यूमेंटेटिव इंडियन (पृ. 89–121). नई दिल्ली, पेंगुइन।
5. चक्रवर्ती, मालिनी. (2011). टैगोर, राष्ट्रवाद और विश्वदृष्टि शिक्षा एवं संस्कृति की अवधारणाएँ. नई दिल्ली रूटलेज।
6. दासगुप्ता, उमाकांत (संपा.). (2013). ऑक्सफोर्ड इंडिया टैगोर, शिक्षा और राष्ट्रवाद पर चयनित लेखन. नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
7. पाण्ड्या, सुनीता. (2018). रवीन्द्रनाथ टैगोर के शिक्षा–दर्शन का पुनर्विचार. जर्नल ऑफ इंडियन एजुकेशन, 44(2), 25–40.
8. रॉय, तपन. (2009). शान्तिनिकेतन और उसकी विरासतः टैगोर का शैक्षिक प्रयोग. कोलकाता. विश्वभारती प्रकाशन.

सामवेद में निरुपित सोमरस का माहात्म्य

डॉ. दीपक कुमार*

वैदिक साहित्य के अनुशीलन से विदित होता है कि सोमरस एक विशेष प्रकार की लता से निचोड़कर निकाला जाता है, जिसे सोमलता कहते हैं। सोमलता मूजवान् (मूजवत्) पर्वत पर प्राप्त होती है, इसलिए इसे वेदों में मौजवत भी कहा गया है।[1] अथर्ववेद में सोम को बहुत ऊँचाई पर होने वाला बताया गया है।[2] प्राचीन काल में सोम पार्थिव होने पर भी स्वर्गीय माना जाता था। सामान्य मान्यता थी कि सोम को श्येन (बाज) पक्षी स्वर्ग से लाया है।[3] यह कश्मीर में सुषोमा नदी की तलहटी में भी प्राप्त होता था। आंशुमती नदी की तलहटी में भी सोमलता उत्पन्न होती थी।[4] इसके कई नाम (प्रकार) होते थे जैसे– अंशुमान (अंशुमती नदी की तलहटी में होने वाला), मुंजवान् (मूजवान् पर्वत पर पाया जाने वाला), रजतप्रभ, पूर्वासोम आदि। इसके 2 प्रकार या नाम प्राप्त होते हैं।[5] सभी प्रकार की सोम लताओं में 15 पत्ते होते हैं। प्रत्येक मास के शुक्ल पक्ष में प्रत्येक दिन या प्रत्येक तिथि को सोमलता में एक पत्ता निकलता है और पूर्णिमा की तिथि तक उसमें पन्द्रह पत्ते पूर्ण हो हाते हैं। पन्द्रह पत्तों से आगे संख्या नहीं बढ़ती। यही पन्द्रह पत्ते कृष्णपक्ष की प्रत्येक तिथि (प्रत्येक दिन) को क्रमशः (उत्पन्न होने वाले क्रम से ही) एक–एक पत्ता लता से पृथक् होकर गिर जाता है और अमावस्या के दिन केवल लता शेष रह जाती है।[6]

इस सोम लता को पत्थरों से कूटकर (कुचलकर) ऊनी कपड़े से छानकर इसका रस निकाला जाता था। छने हुए सोम को ही सोमरस पवमान अथवा पुमान (स्वच्छ होकर बहने वाला) कहा गया है। महर्षि सुश्रुत की मान्यता है कि जरावस्था और मृत्यु को दूर रखने के लिए सृष्टिकर्ता ने इस सोमरूपी अमृत को उत्पन्न किया है।[7] विष, अग्नि जल, अस्त्र, शस्त्र कोई भी सोम सेवन करने वाले को हानि नहीं पहुँचा सकते।[8] सोम रस का पान करने से मानसिक एवं शारीरिक शक्ति में अद्‌भुत वृद्धि होती है।[9] यह रस अत्यन्त शक्तिप्रद औषधि के रूप में जाना जाता है, इसके पान से व्यक्ति को असाधारण शक्ति प्राप्त होती है वह अश्व के समान शक्ति वाला हो जाता है।[10] वैदिक काल में सोमरस का पान करके लोग आनन्दातिरेक से उल्लसित हो जाते थे। ऋग्वेद में वर्णन है कि प्रगाथ काण्व सोम पीकर आनन्दित हो उठे और कहने लगे– हमने अमरत्व पा लिया हे, ज्योतिर्मय स्वर्ग की प्राप्ति कर ली है तथा वहाँ हमने देवताओं को जान लिया है।[11] लोग कभी–कभी सोम रस में दूध या दधि या जौ का सत्तू मिलाकर उसका पान करते थे। दुग्धमिश्रित सोम रस 'गवाशिर' कहलाता था।[12] सोम रस में जौ का सत्तू मिलाकर, जो स्वादिष्ट पेय तैयार किया जाता था उसे 'यवाशिर' कहते थे।[13] दधि मिलाकर भी सोम रस का पान किया जाता था, इसकी 'दध्याशिर' संज्ञा होती थी।[14] यद्यपि सोम का निरुपण सभी वेदों में है, फिर भी अधिकतर लोग सोम रस की चर्चा ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद को आधार बनाकर करते हैं किन्तु सामवेद में भी अनेक स्थलों पर सोम का माहात्म्य निरुपित है।

सामवेद के परिशीलन से यह विदित होता है कि सोम एक औषधि के रूप में वैदिक काल में प्रचलित थी। सोम औषधि अत्यन्त ऊर्जा को प्रदान करने वाली व अनेक रोगों का हरण करने का सामर्थ्य रखने वाली प्रतीत होती थी। सामवेद के पंचम अध्याय में पवमान और सोम शब्द के अर्थों का विचार करना चाहिए। सोम को यहाँ एक औषधि बताया गया है। इस सोम नामक औषधि को प्राप्त करने के वर्णन में कहा जाता है, कि इस औषधि को निचोड़ने से रस की प्राप्ति होती है, जिसे सोम रस कहा जाता है।

सामवेद में सोम के विषय में उद्‌धृत है, कि पृथ्वी के मनुष्य जब सोम रस का पान कर उसे ग्रहण करते हैं, तब वह सोम के प्रभाव से अपने रोगों को नष्ट करते हैं। इसके साथ ही बड़े सुख और यश को प्राप्त करते हैं–

उच्चा ते जातमन्धसो दिवि सद्‌भूम्या ददे । उग्रँ शर्म महि श्रवः ।[15]

सोम का वर्णन करते हुए कहा गया है कि सोम का भक्षण उदर में सर्वत्र व्याप्त होकर आरोग्य लाभ देने वाला होता है। सोम का पान कर लेने पर यह औषधि रस रूप को धारण कर जठर के द्वारा सम्पूर्ण शरीर में फैलकर शरीर के सभी अंगों प्रत्यंगों को निरोगी बनाता है–

विव्यक्थ महिना वृषन्भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ।[16]

---

* एसो. प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, म.गां. काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

सोम रस को स्वादिष्ट और हर्ष कारक (मदकारक) बताया गया है–

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया । इन्द्राय पातवे सुतरू ।।[17]

सोम रस को बल की वृद्धि करने वाले सभी गुणों को धारण किये हुए बताया गया है। इस रस में हर्ष को उत्पन्न करने और वीर्य को बढ़ाने वाले गुण विद्यमान होने का विवरण प्राप्त होता है–

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा । देवावीरघशं सहा ।।[18]

सोम रस को योग्य रक्षक और रोग आदि असुरों का नाशक बताया गया। इससे सज्जनों की रक्षा और दुर्जनों का नाश होना उद्धृत किया गया है। यह आदर और आनन्द को प्राप्त कराने वाला है। इसे सभी प्रकार से स्वीकार करने की प्रेरणा दी गयी है।

पहाड़ पर उत्पन्न होने वाले सोम से निकाला हुआ अर्क शुद्ध एवं पवित्र पात्र द्रोण कलश आदि में निचोड़ा जाने का वृतान्त दिया गया है। यह शुद्ध पात्र में निचोड़ा गया रस सबके धारण करने योग्य है। इससे हर्ष की प्राप्ति और रोगों का शमन होता है। इसे सभी को धारण करने का उपदेश दिया गया है–

परि स्वानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षरत । मदेषु सर्वधा असि ।।[19]

सोम औषधि का रस निकाल कर सेवन करने को बताया गया है। सोम रस के सेवन से वीर्य के वर्धन की कामना का पूर्ण होना कहा गया है। मनुष्यों को वीर्य वृद्धि कर यश प्राप्त करने के लिए सोम रस औषधि का सेवन करना चाहिए। यहाँ सोम रस के पान से वाजीकरण के रोगों के शमन का पता चलता है। वाजीकरण अष्टांग आयुर्वेद का एक अंग होता है। आयुर्वेद के इस अंग में वीर्य वर्धक औषधियों का प्रयोग बताया जाता है। यहाँ पर सोम को भी वीर्य वर्धक होने का उल्लेख मिलता है–

पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशशो जने । विश्वा अप द्विषो जहि ।।[20]

जैसे जल समुद्र में सभी ओर व्याप्त रहता है वैसे हि सोम लता में रस सभी ओर परिपूर्ण होता है। यह रस मनुष्य को पुष्ट करने वाला होता है। इसको आलस्य से निवृति दिलाने वाला भी कहा गया है। इस रस को श्रेष्ठ जनों के लिए शहद को रखने योग्य पात्र में सावधानी पूर्वक रखकर प्रयोग करना चाहिए–

प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अँ शोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ।[21]

सोम रस का सेवन भोजन के साथ करना चाहिए। इसका सेवन करके व्यायाम आदि करने से शरीर की उन्नति होती है। सोम ओषधि को शरीर का रोग दोष समाप्त करने का और बल वृद्धि करने का कारक कहा गया है–

यस्ते अनु स्वधामसत्सुते नि यच्छ तन्वम् । स त्वा ममत्त सोम्य ।।[22]

सोम में दिव्य गुण विद्यमान होने का वर्णन किया गया है। शुद्ध किया हुआ सोम रस पीने से वाणी के रोग दूर होते हैं। कण्ठ से ध्वनि स्पष्ट उच्चरित होती है। वाणी के दोष दूर हो जाते हैं। प्रखर वाणी प्रदीप्त होती है। इस प्रकार सोम के प्रभाव से वाणी दोष दूर होकर स्पष्ट वाणी के प्रस्फुटित होने का वर्णन किया गया है–

एष देवो रथयति पवमानो दिशस्यति । आविष्कृणोति वग्वनुम् ।[23]

औषधियों में सोम रस श्रेष्ठ है। इसको पीने वाला अपने पापों का नाश करता है। यह रस हमारे संस्कार किये हुए सौम्य चित्त के भावों को ग्रहण करता है। यह मानसिक वृत्तियों का दमन करने में सहायक होता है।

त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप नो हरिभिः मुतम् ।।[24]

वीर्यवान् पुरुष के द्वारा सोम पान करके वृष के समान पौरुष का सिंचन शरीर में किये जाने का वर्णन है। सोम पान से पुरुष का पुरुषत्व बढ़ता है। पुरुष का बल घोड़े के समान बढ़ने की तुलनात्मक व्याख्या दी गयी है। मनुष्य सन्तान की उत्पत्ति में सभी प्रकार से सामर्थ्यवान होता है। इसके पान से मद्यपान की तरह बुद्धि भ्रष्ट नहीं होती बल्कि बुद्धि का विकास होता है। इसके पान से मद जैसा नशा नहीं होता है। यह अन्न आदि सुख पहुंचाने वाले पदार्थ को पचाने का सामर्थ्य बढ़ाकर बल की वृद्धि करता है–

यस्य ते पीत्वा वृषभो वृषायतेऽस्य पीत्वा स्वर्विदः ।
स सुप्रकेतो अभ्यभक्रमीदिषोऽच्छा वाजं नैतशः ।।[25]

औषधियों का प्रयोग सुख को बरसाने वाला होता है। औषधियो के राजा अर्थात् सोम को मनुष्य और गौ आदि सभी पशुओं के लिए उपयोगी दर्शाया गया है–

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते शं राजन्नोषधीभ्यः ।।[26]

औषधियों को अपने ऋतु के नियमानुसार धर्म को धारणा करने योग्य बताया गया है। औषधियाँ अपने प्राकृतिक समय पर ही उत्पन्न होती है। औषधियों के माता के रूप में अग्नि को कहा गया है। उचित प्राकृ

तिक समय पर अग्नि और जल के संयोग से ही वन की औषधि व वनस्पतियों का जन्म होता है। इसलिए औषधियों को अपने ऋतुकाल के अनुसार ही गर्भ धारण करने वाला बताया गया है–

तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापो अग्नि जनयन्त मातरः ।
तमित्समानं वनिनश्च वीरुधोऽन्तर्वतीश्च सुवते च विश्वहा ।।[27]

मनुष्यों के मर्म स्थलों पर चोट लग जाने पर सोम के द्वारा उस चोटिल स्थान के घावों के रोगों का दमन करने की बात बतायी गयी है। उन चोटों पर औषधि के कवच से छादन करने को कहा गया है। औषधि राज सोम के द्वारा उस चोट पर अमृत तत्व बरसाने की बात कही गयी है। वरुण देव व अन्य से औषधि चिकित्सा द्वारा उस मर्म स्थान के चोटों को शीघ्र स्वस्थ करने की प्रार्थना करने का वर्णन प्राप्त होता है–

मर्माणि ते वर्मणाच्छादयामि
सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं स्वानु देवा मदन्तु ।।[28]

सामवेद में सोम को अन्य औषधियों की तरह मानव कल्याण के लिए रोगों से छुटकारा आदि प्रदान करने के उद्देश्य से परमात्मा द्वारा निर्माण करने का वर्णन किया गया है–

त्वमिमा ओषधीः सोम विश्वा–स्त्वमपो अजनयस्त्वं गाः ।
त्वममातनोरुर्वाɜन्तरिक्षं त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।।[29]

इस प्रकार सामवेद के अनुशीलन से स्पष्ट है कि सोमरस अत्यन्त शक्तिप्रदायक है। यह औषधि रूप है। इसका सेवन औषधि रूप में ही किया जाना चाहिए।

संदर्भ

1. ऋ.सं. 10/34/1
2. अथर्व.सं. 20/6/5
3. अथर्व.सं. 18/1/21
4. अथर्व.सं. 20/137/8
5. सुश्रुत सं.चि. 29/1–32
6. सुश्रुत सं.चि. 29/20 एवं 22
7. सुश्रुत सं.चि. 29/3
8. सुश्रुत सं.चि. 29/15
9. अथर्व.सं. 20/6/7
10. अथर्व.सं. 9/10/14
11. अथर्व.सं. 8/48/3
12. अथर्व.सं. 1/137/1, 2/41/13, 3/32/2
13. ऋ.सं. 2/22/1
14. ऋ.सं. 1/5/5
15. सामवेद पूर्वार्चिक 05/01/01
16. सामवेद उत्तरार्चिक 8/1/5
17. सामवेद पूर्वार्चिक 05/01/02
18. सामवेद पूर्वार्चिक 05/01/04
19. सामवेद पूर्वार्चिक 05/01/09
20. सामवेद पूर्वार्चिक 05/02/03
21. सामवेद पूर्वार्चिक 05/05/04
22. सामवेद उत्तरार्चिक 2/3/2
23. सामवेद उत्तरार्चिक 10/1/7
24. सामवेद उत्तरार्चिक 20/3/3
25. सामवेद उत्तरार्चिक 1/5/5
26. सामवेद उत्तरार्चिक 1/1/3
27. सामवेद उत्तरार्चिक 20/6/3
28. सामवेद उत्तरार्चिक 21/1/22
29. सामवेद पूर्वार्चिक 06/03/03

प्रतिनिधियों के चुनाव में डिजिटल मीडिया की भूमिका

डॉ. सुरेन्द्र कुमार यादव*

सारांश–

लोकसभा चुनाव भारत के लोकतंत्र का ह्रदय संघीय संसद को ही लोकसभा को कहा जाता है, इसी सदस्य संख्या आवश्यकता एवं प्ररूप के आधार पर परिवर्तित होती रही है, वर्तमान अध्यय और राष्ट्रपति द्वारा भारतीय समुदाय के दो मनोनीति सदस्यों की संख्या को मिलाकर वर्तमान में 543 सदस्य हैं, हॉलाकी समय–समय पर सदस्य कम ज्यादा होते रहते है पर कुल 552 से अधिक नही हो सकते–इसमें से 530 राज्यों और 20 सदस्य केन्द्र शासित प्रदेशों का प्रतिनिधित्व करते है, संविधान संशोधन अधिनियम 849 सी एवं 1971 की जनगणना को आधार बनाकर इस प्रक्रिया (प्रणाली) को वर्ष 2006 तक के लिए निश्चित की गई थी, यदि लोकसभा को भंग न किया जाय तो इसका कार्यकाल पॉच वर्ष तक का होता हे, पर आकाल एवं युद्ध की स्थिति में इसकी समयावधि कानूनी प्रक्रिया क्रियान्वित कर बढ़ायी जा सकती है,संवैधानिक परिपेक्ष्य में लोक सभा के सदस्य के लिए निम्नलिखित प्रारूप में योग्यताएँ आवश्यक है–प्रथम संबंधित व्यक्ति भारतीय नागरिक हो। द्वितीय आयु–सीमा हेतु प्रावधान 25 वर्ष या उससे अधिक हो। तृतीय राज्य एवं केन्द्र सरकार के किसी भी निकाय में व्यक्ति कोई लाभप्रद पर ग्रहण न किये हो। चतुर्थ विकृत मस्तिष्क वाला व्यक्ति न हो। पंचम किसी न्यायालय के माध्यम से उसे दिवालिया घोषित न किया गया हो। उपर्युक्त आवश्यकताओं के साथ ही सांसद ने 1951 में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम पारित कर संसद सदस्यों हेतु कुछ योग्यताओं का चयन इस प्रकार किया है– अनुसूचित जातियों से संबंधित सुरक्षित स्थानों के प्रत्याशियों हेतु आवश्यक है कि संबंधित जाति के सदस्य हो। जनजाति सदस्य हेतु भी यही प्रावधान निश्चित है।

मुख्य शब्द– लोकसभा, अधिनियम ,चुनाव, प्रतिनिधि, संसद, मतदाता, अधिकार,डिजिटल मीडिया समाज

उद्देश्य– प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य वर्तमान समय में राजनैतिक चुनाव में मीडिया की सहभागिता को ज्ञात करना है।

परिकल्पना –शोध क्षेत्र रीवा संभाग में 2014 के आम चुनाव में राजनैतिक क्षेत्र में मीडिया की उपयोगिता काफी महत्वपूर्ण रही है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत शोध प्रबंध में मुख्य रूप से प्रथम आकड़ों का प्रयोग किया गया है। आवश्यकता पड़ने पर द्वितीयक आकड़ों किया गया है।

प्रस्तावना –

लोकसभा का कार्यकाल 5 वर्ष का है, पर प्रधानमंत्री के चाहे जाने पर राष्ट्रपति के विचार–विमर्श द्वारा लोकसभा को समय पूर्व भी भंग किया जा सकता है। ऐसा निम्नलिखित वर्षो में किया गया है। 1970,1977, 1979 नम्बबर 1984 मार्च 1991, दिसम्बर 1997 अप्रैल 1999, यदि संकट काल की घोषणा की जाती है। तो संसद विधि मान्य स्वरूप में लोकसभा के कार्यालय में वृद्धि कर सकती है। इसे एक बार में 1 वर्ष से अधिक नहीं बढ़ाया जाता है।

सदस्यों के विशेषाधिकार –संसद सदस्यों को अपने कार्यो का उचित समन्वय करना होता है अतः प्रावधान हेतु उन्हें कुछ विशेषाधिकार प्रदान किये गये

- संसदीय नियमों एवं ओदशों का पालन करते हुए संसद में भाषण देने की स्वतंत्रता।
- संसद एवं उसकी किसी भी समिति में कही कई बात या दिए गए किसी भी मत के संदर्भ में संसद के किसी भी सदस्य के विरूद्ध किसी भी प्रकार के न्यायालय में कोई भी कार्यवाही नहीं की जाती है।
- संसदीय अधिकवेशन के चालू होने के 40 दिन पहले और बाद में संसद के किसी भी सदस्य को बंदी नही बनाया जाता है। हॉ यदि मामला फौजदारी विषयों में संदर्भित हो तो उस पर कार्यवाही

* गेस्ट प्रोफेसर–समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (म0प्र0)
मो:–8808694208, मेल आई डी:–ysurendra53@gmail.com

की जा सकती है कार्यवाही किसी भी प्रकार की होने की दशा में संसद के अध्यक्ष को यथाशीघ्र इस क्रम में सूचित किया जाना अनिवार्य है।

- सदन –क्षेत्र में किसी भी सदस्य (सांसद) की गिरफ्तारी बिना अध्यक्ष की अनुमति के संभव नही है।
- संसद के चाहे जाने पर विधिमान्य रूप से संसदीय सदस्यों को विशिष्ट अधिकार या उन्मुक्तियॉ प्रदान की जा सकती है।

लोकसभा की शक्तियॉ

1. विधायी शक्ति– संवैधानिक प्रकिया के अनुरूप भारतीय संसद निम्नलिखित विषयों पर कानून–निर्माण कर सकती है–

- संघीय सूची
- समवर्ती सूची
- अवशेष विषय
- राज्य सूची के विषय (विशिष्ट परिस्थितियों में)

2. वित्तीय शक्ति– संवैधानिक अनुच्छेद 109 के अनुसार वित्त विधेयक लाकेसभा मे ही प्रस्तावित किए जा सकते है। हॉलाकि लोकसभा में पारित होने के बाद विधेयक को राज्यसभा में भेजा जाता है और राज्यसभा हेतु यह प्रावधान निश्चित है कि वह वित्त विधेयक की प्राप्ति से 14दिवस के अन्तर्गत विधेयक मे संशोधन की सिफारिश सहित उसे लोकसभा कों लौटा दे। राज्यसभा के दिए गए सुझावों को मानना या इनकार करना लोकसभा की इच्छा पर निर्भर करता है।

3. कार्यपालिका पर नियंत्रण शक्ति– संविधान के अन्तर्गत संसदात्मक व्यवस्था को आधार दिया गया है। संवैधानिक स्वरूप में मंत्रिमंडल संसद के प्रति उत्तरदायी होता है। लोकसभा के विश्वास की कसौटी ही मंत्रिमंडल की भूमिका निर्भर करती है ।संसद विविध प्रविधियों के माध्यम से कार्यपालिका पर नियंत्रण रख सकती है।

संसद सदस्यों को यह अधिकार है कि वे सरकार द्वारा किए गए कार्यो मे क्रम में प्रश्न या पूरक प्रश्न पूछ सकते जाते है। सरकारी–नीतियों की गलती को संसद मे उन प्रक्रियाओं द्वारा प्रदर्शित किये जाने का अधिकार है।

1 बजट अस्वीकृति करके।
2 मंत्रियों के वेतन से कटौती प्रस्ताव स्वीकृति करके ।
3 सरकारी विधेयक मे सरकार विरोधी संशोधन करके।
4 काम रोको प्रस्ताव द्वारा।

4. संविधान संशोधन संबंधी शक्ति– संवैधानिक अनुच्छेद (368) के अनुसार संविधान मे संशोंधन का कार्य संसद द्वारा ही कियाजाता हैं।

5. निर्वाचन मंडल के रूप मे कार्य – संवैधानिक (54) के अनुसार लोकसभा राज्यसभा विधनसभा तथा संघीय विधानसभा के सदस्य मिलकर राष्ट्रपति का निर्वाचन करते है। संवैधानिक अनुच्छेद (66) के अनुसार लोकसभा व राज्यसभा सम्मिलित रूप से उपराष्ट्रपति का चयन करती हैं। लोकसभा के माध्यम से सदन के उपाध्यक्ष एवं अध्यक्ष को निर्वाचित एवं पदच्युत भी किया जा सकता है।

6. लोंक शिकायतों का निवारण– लोकसभा सदस्य चूँकि प्रत्यक्षतः जनता द्वारा निर्वाचन होते है अतः उनके माध्यम से आम जनता अपनी शिकायतं विचार व भावनाओं को सरकार तक पहुँचाती हैं।

विधिक कार्य – उपयुक्त कार्यो के अतिरिक्त कार्य इस प्रकार है–

- लोकसभा राज्यसभा के साथ संयोजित होकर राष्ट्रपति पर महाभियोग लगा सकती है।
- उपराष्ट्रपति को पद से हटाने संबंधी प्रस्ताव यदि राज्यसभा द्वारा पारित कर दिया जाए तो उसका अनुमोदन लोकसभा द्वारा आवश्यक होता है
- लोकसभा एवं राज्यसभा सम्मिलित रूपों में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के विरूद्ध सहाभियोग प्रस्ताव पारित कर सकती हैं।
- राष्ट्रपति द्वारा संकटकाल की घोषणा एक माह के अंदर संसद द्वारा पारित करना आवश्यक है। अन्यथा एक माह बाद यह प्रभावी नहीं होगी।
- किसी प्रकरण मे राष्ट्रपति सर्वक्षमा देना ता उसकी पुष्टि संसद मे माध्यम से आवश्यक है।

विश्लेषण – भारत में सोलहवीं लोकसभा का चुनाव 7 अप्रैल से 12 मई 2014 के बीच कुल 9 चरणों में संपादित किया गया था, जिसकी मतगणना 16 मई को करायी गयी, पूर्व की 15 वीं लोकसभा का कार्यकाल 31 मई 2014 को समाप्त होना था, देश में पहलीवार इतने बड़े समय तक 9 चरणों में चुनाव, चुनाव आयोग

द्वारा कराया गया था उसका मुख्य कारण निष्पक्षता से चुनाव करना मूल उदेश्य था। जिसमें चुनाव आयोग सफल भी रहा। कुल 834 मिलियन मतदाओं ने इसमें अपने मतदान किया है।

2014 चुनाव में एक उम्मीदवार के 7 मिलियन एवं छोटे राज्यों में 5.4 मिलियन खर्च करने के अनुमति दी गई, जिसका आधार लागत मुद्रा स्फीति को बना कर किया गया, जिसका परिणाम चुनाव में प्रदर्शित होता है। कोई भी चुनाव समस्याओं और विभिन्न प्रकार के मुद्दों पर ही लड़ा जाता है, इन समस्याओं को जनता के सामने उठाने वाला प्रथम प्रयास मीडिया ही करती है, 2014 के चुनाव में जी–न्यूज एक सर्वेक्षण कराया जिसमें मुद्रा स्फीति एवं महगाई मुख्य मुद्दा था, जिसमें नौकरियों की कमी, आर्थिक मंदी, भ्रष्टाचार, सुरक्षा आंतकवाद, धार्मिक विवाद, सांप्रायिकता और सड़क, बिजली; पानी, इत्यादि समस्या रही है। वाशिगंटन की न्यूज एजेंन्सी ने अपने शोध के दौरान भारत में चुनाव के मुद्दो और समस्याओं के संबंध में गहन –अध्ययन किया और पाया कि यहॉ की जनता का परिवर्तन चाहती है, इस मनोवृत्ति को देखते हुए ही विभिन्न राजनैतिक पार्टियों ने भी अपना आजमाइस की आप जैसी नयी पार्टि भी उभरकर सामने आ गई।

द ग्रेट इंडियन इलेक्शनः इट्स अवाउट जॉब्स– नामक न्यूज व्लांग में भी सर्वेक्षण के आधार पर पाया गया कि यहा के नव युवक जनता जो 18 –19 वर्ष की है जिसने 2.7 प्रतिशत योगदान मतदान ने किया और अपने प्रतिशत का 39 प्रतिशत भाजपा को वोट दिया की समस्या जॉब्स की ही थी, जिसको मीडिया ने जनता के सामने अच्छे तरीके से प्रस्तुत किया था, इसके साथ ही अर्थव्यवस्था की उस समय तत्काल परिस्थितियों को मीडिया ने जनता तक प्रचारित किया जैसे व्याज का दाम बढना नमक का दाम घोटालो को सामने आना जैसे कोयला घोटाला, ऊर्जा स्पेक्ट्रम मामला, हेलिकॉप्टर घोटला, धार्मिक मुद्दे आदि को मीडिया ने जनता के सामने प्रसारित किया जो सत्ता परिवर्तन के कारक बने। एन.डी.टी.वी. ने चुनाव बाद जनता तक सपूर्ण पार्टियों के अंतिम परिणाम को प्रसारित किया है।

स्रोत–NDTV एवं राष्ट्रीय जनतार्तिक गठबंधन का प्रतिवेदन –2014

स्पष्ट है कि मीडिया ने जो आकड़े जनता के सामने पारदर्शी तरिके से रखती है, मीडिया की उपयोगिता को प्रदर्शित करता है। इन द्वोर्रा–द्वोर्रा पाटियों को मिलाकर भाजपा ने राष्ट्रीय जनतात्रिक गठवन्धन वनाया था जिसने कुल 61.87 प्रतिशत सीटो पर चुनाव जीत कर सावित कर दिया कि जनता की मीडिया द्वारा उठाई गई समस्या इनती बड़ी जित हासिल करने में सहयोगी हुई है। वही पर कांग्रेस की संयुक्त प्रगतिशील गठवंधन ने कुल 538 सीटों पर चुनाव लड़कर 59 मत 10.86 प्रतिशत सीटों पर ही विजय पा सकती है।

लोक सभा चुनाव 2014 में मीडिया की उपयोगिता–

लोकसभा चुनाव में मीडिया ने पुरे वर्ष में चुनाव को केन्द्रित करके अपने न्यूज चैनल संचालित किया, टकोमेन्टी डाक्यूमेन्ट्री फिल्म (कार्टून) लांच की और विज्ञापन भी किया। शोधार्थी के शोध की सीमा रीवा जिला के लोक सभा सीटों के संबंध में मीडिया की उपयोगिता को सिद्ध करना है। प्रस्तुत सारणी में मीडिया का चुनाव में सहयोग की स्थिति संचालित कार्यक्रमों के घण्टों के आधार पर प्रस्तुत है–

लोकसभा चुनाव 2014 में मीडिया का प्रसारण

क्र.	राष्ट्रीय स्तर पर 2014 के चुनावी मुद्दों का प्रसारण (समय–घण्टों के आधार पर)				शोध क्षेत्र स्तर पर 2014 के चुनावी मुद्दों पर प्रसारण (समय–घण्टों के आधार पर)		
	चैनल का नाम	प्रसारण औसत् प्रत्येक दिन (घण्टे)	प्रसारण औसत् दिवस	चुनावी वर्ष में प्रसारण के कुल घण्टे	प्रसारण औसत् प्रत्येक दिन (घण्टे)	प्रसारण औसत् दिवस	चुनावी वर्ष में प्रसारण के कुल घण्टे
1	आज तक	6	120	720	18	38	11.4
2	ए.वी.पी.	3	100	300	26	40	17.3
3	NDTV	2	85	170	30	20	10.0
4	सीटी चैनल रीवा	2	20	40	6	90	540
5	विध्य न्यूज रीवा	1	10	100	5	112	560
6	तेज खबर 24 रीवा	2	30	60	6	118	708
7	रीवा समाचार	1	10	10	5	100	500

एवीपी (स्टार न्यूज)

हिन्दी भाषा में संचालित होने वाला एवीपी न्यूज पहले स्टार– न्यूज की 1998 में स्थापना हुई थी 2012 में इसका अधिग्रहण एवीपी ग्रुप ने कर लिया था इसको 2022 में 21 वें संस्करण में सर्वश्रेष्ठ हिन्दी समाचार का पुरस्कार भी प्राप्त हुआ है, इस चैनल ने लोकसभा 2014 के चुनाव साल में औसतन 4 घण्टे प्रतिदिन अर्जित औसत।

NSE –भारत का हिन्दी समाचार चैनल है, जिसकी शुरूआत 2003 में की गई यह इसने फ्री चैनल DD चैनल 45 पर 24 घण्टे न्यूज देने का निर्णय भी लिया है, यह पहले स्टार–न्यूज को खबर भी उपलब्ध कराता रहा है, अब इंग्लिश और हिन्दी दोनो में 24+7 चैनल के रूप में संचालित है। इसने लोकसभा चुनाव 2014 में राष्ट्रीय स्तर पर कुल 170 घण्टे का प्रसारण किया था जबकि शोध क्षेत्र रीवा के 6 खबरों को कुल 10 घण्टे तक प्रसारित किया है।

सीटी चैनल रीवा ने राष्ट्रीय स्तर के चुनावी जानकारी को 40 घण्टों तक प्रसारित किया है, जबकि शोध की समस्या एवं चुनावी मुद्दों को 540 घण्टों का कुल प्रसारण वर्तमान में किया था।

विन्ध्य न्यूज रीवा ने राष्ट्रीय स्तर पर 10 घण्टे एवं शोध क्षेत्र स्तर पर 560 घण्टे का कुल प्रसारण लोकहित चुनाव, एवं समस्या के संबंध में प्रसारण किया, इतना अधिक समय का प्रसारण का प्रमुख कारण लोकल चैनल का प्रभाव लोंगों पर ज्यादा होता है, और इन चैनलों को दर्शन देखते भी है। प्रसारण का प्रभाव उपभोक्ताओं की सोच, समझ एवं प्रत्याशियों के चुनाव में अधिक प्रभाव रहा है।

तेज खबर 24 रीवा –जो पहले छोटे चैनल होता है, वर्तमान में ज्यादातर खबरे यूटूब एवं नेटवर्किंग मीडिया के आधार पर लोगों तक अपने न्यूज को प्रसारित किया, व्यक्तिगत रूप से भेजे गये खबरों को लोकल मतदाताओं ने अधिक महत्व दिया, यहॉ के प्रत्याशियों एवं विकास की संभावनाओं को प्रस्तुत कर सका है। जिनने 708 घण्टे का प्रसारण किया है।

रीवा समाचार 24 घण्टे संचालित होने वाला लोकल समाचार चैनल हैं जिसमें क्षेत्र की समस्याओं, उसके ससस्या निवारण के प्रयास एवं उसकी उपयोगिता को दर्शता रहता है, लोगों के छोटी–छोटी सामूहिक समस्याओं को भी दर्शाता रहता है। जिसने कुल 500 घण्टे का प्रसारण शोध क्षेत्र के चुनावी मुद्दों पर लोगों के बीच मतदान का सही .....चुनने में सहयोग किया है।

प्रिन्ट एण्ड इलेट्रॉनिक मीडिया की लोकसभा चुनाव में सहभागिताः–

पत्रकारिता जगत की शुरूआत प्रिट मीडिया से ही हुई आज भी शोध क्षेत्र में न्यूज पेपर समचार,खबरों को जानने का प्रचलित माध्यम बन हुआ है। विभिन्न न्यूज पपेर कार्यालय से शोध अध्ययन से प्राप्त समंको के आधार पर प्रिन्ट मीडिया का 2014 लोकसभा चुनाव में भागीदारी को स्पष्ट कर सकते है, जो सारणी में प्रदर्शित है।

न्यूज पेपर में चुनावी स्टोरी का प्रिन्ट संख्या 2014

क्र.	पेपर का नाम	स्टोरी की संख्या अचानक	संख्यिकीय संख्या प्रिप्लान	कुल वार्षिक दिवस	365 वर्ष के विवरण
1	दैनिक जागरण	380	420	800	365
2	दैनिक भास्कर	402	720	1122	चुनावी वर्ष 365
3	स्टार समाचार	302	608	910	365
4	पत्रिका समाचार	520	530	1050	365
5	नव–भारत	320	640	960	365
		1920	2918	4842	

शोध से ज्ञात होता है कि लोकसभा चुनाव –2014 में जनता के बीच समस्याओं को रखने, प्रत्येक प्रत्याशियों के वक्तव्यों एवं विचारों को जनता के सामने रखने एवं विकास की हर विन्दु को जनता एवं सरकार तक पहुचाने में मीडिया ने अपनी अहम सहभागिता निभाई है।

विधान सभा चुनाव –

विधान सभा विधानमण्डल की प्रथम लोकप्रिय सदन प्रणाली है,जिस राज्य में विधानमंण्डल के दो सदन होते है। वहॉ पर इसको अधिक शक्तियॉ प्राप्त होती। मध्य प्रदेश में विधान सभा का एक ही सदन हैं,सविधान अनुच्छेद 170के आधार पर इनमें मात्र अधिकतम् एवं न्यूनतम् संख्या का ही निर्धारण किया गया है। इसमें अधिकतम् संख्या 500 एवं न्यूनतम् संख्या 60 हो सकती है, चुनाव के लिए भौगौलिक एवं जननाकिकी आधार पर निर्वाचन क्षेत्र को इस प्रकार विभाजित किया जाता है कि प्रत्येक क्षेत्र न्यूनतम 75 हजार लोगों की जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करता हो। प्रत्येक जनगणना के बाद विधानसभा क्षेत्र का निर्धारण पुनः करने हेतु अनुच्छेद 370 (3) निर्देशित किया गया है। इसका मूल कारण क्षेत्र एवं जनसंख्या प्रतिनिधित्व को नियमों में बनाये रखने के लिए किया जाता है, सवैधानिक संशोधन 42 के आधार पर 2020 तक विधानसभाओं की सदस्य संख्या निश्चित कर दी गयी थी, वर्तमान में अभी कोई नही व्यवस्था नही बनायी गयी है।

1. **स्थान आरक्षण–** राज्यों की विधानसभाओं मे अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए आरक्षण की व्यव्स्था 79 वे संवैधानिक संशोधन (अक्टूबर 1999) के अनुसार 26 जनवरी 2010ई तक के लिए है। अब 1039वें संविधान संशोधन इसे 2010 से 10 वर्ष के लिए और विस्तारित कर दिया गया है राज्य की विधानसभा के निर्वाचन के बाद यदि संबंधित राज्य का राज्यपाल यह अनुभव करता है कि विधनसभा में आंग्ल भरतीय समुदाय को उचित प्रतिनिधित्व नही मिला है तो वह उस समुदाय के एक सदस्य को विधानसभा में मनोनीत कर सकता हैं।
2. **निर्वाचन पद्धति–** आंग्ल भारतीय समुदाय के नामजद सदस्य कों छोडकर विधानसभा के अन्य सदस्यों का मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुनाव होता है चुनाव के लिए वयस्क मताधिकार और संयुक्त निर्वाचन प्रणाली तथा साधारण वहुमतकी पद्धति अपनायी गयी है प्रारम्भ मे विधानसभा के निर्वाचन के लिए कुछ द्वि–'सदस्यीय निर्वाचन क्षेंत्रों की व्यवस्था थी परन्तु अब सभी निर्वाचन क्षेत्र एकल–सदस्यीय है।
3. **मतदाताओं की योग्यताऍ–** मतदाता होने के लिए 18 वर्ष की आयु प्राप्त भारतीय नागरिक होना चाहिए कि उसे पागल दिवालिया या अन्य किसी अपराध के कारण मताधिकार से वंचित कर दिया गया हो उसका नाम मतदाता सूची मे होना चाहिएं
4. **सदस्यों की योग्यताऍ–** विधानसभा की सदस्यता के लिए व्यक्ति कों निम्नलिखित योग्यताऍ प्राप्त होती चाहिए–

   1 भारत का नगरिक हो 2 उसकी आयु कम– से – 25 वर्ष हो 3 भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन लाभ का पद धारण किये हुए न हो 4 वह पागल या दिवालिया घोषित किया जा चुका हो 5 वह संसद या राज्य के विधानमण्डल द्वारा निर्धारित शर्तो की पूर्ति करता हो।

सदस्यों की सदस्यता का अन्त– विधानमण्डल के दोनों सदनों की सदस्यता का अन्त निम्नांकित मे से किसी परिस्थिति मे हो जाता है।

1. कोई भी व्यक्ति यदि राज्य विधानमण्डलों के दोनों सदनों का सदस्य निर्वाचित हो जाता है उसे सदन से त्यागपत्र देना होगा। उसी प्रकार कोई भी व्यक्ति राज्य के विधानमण्डल और संसद दोनों का एक साथ सदस्य नहीं रह सकता है ।
2. कोई भी सदस्य यदि विधानमण्डल के सम्बधित सदन की बैठक मे सदन की आज्ञा के बिना लगातार 60 दिन तक अनुपस्थित रहता है।
3. यदि किसी सदन का सदस्य हो चुकने के बाद उसमें सदस्यता के लिए निर्धारित योग्यता नहीं रह जाती है या उसमें कोई निर्धारित आयोग्य पैदा हो जाती है तो वह सदन का सदस्य नहीं रहता है उदाहरण के लिए सरकारी नौकरी कर लेने दिवालिया या पागल हो जाने पर वह सदन का सदस्य नहीं रह जाता है 52वे संवैधानिक संशोधन (1985) के अनुसार निम्नांकित परिस्थितियों मे भी उसी सदस्यता समाप्त हो जाएगी –' 1 यदि सदस्य अपने दल या उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति की अनुमति के विना सदन में उसके निर्देश मे प्रतिकूल मतदान करे या मतदान मे अनुपस्थित हो 2 यदि निर्दलीय रूप से निर्वाचित सदस्य किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाए 3 यदि कोई मनोनीत सदस्य किसी रानीतिक दल मे सम्मिलित हो जाए।

कार्यकाल– राज्य विधानसभा का कार्यकाल 5 वर्ष है। राज्यपाल द्वारा इसे समय से पूर्व भी भंग किया जा सकता है परन्तु यदि संकट कल की घोषणा जो एक बार मे एक वर्ष से अधिक नहीं होगा तथा किसी भी स्थिति मे संकटकाल की घोषणा समाप्त हो जाने के बाद 6 माह की अवधि से अधिक नहीं होगा।

7 पदाधिकारी – प्रत्येक राज्य की विधानसभा के दो मुख्य पदाधिकारी होते है – 1 अध्यक्ष और 2 उपाध्यक्ष इन दोनों का चुनाव विधानसभा के सदस्य अपने सदस्यों मे से ही करते है तथा इनका कार्यकाल विधानसभा के कार्यकाल तक होता है। इसके बीच अध्यक्ष अपना त्यागपत्र उपाध्यक्ष को तथा उपाध्यक्ष अपना त्यागपत्र अध्यक्ष को दे सकता है इन दोनों (जिसके विरूद्ध प्रस्ताव हो) को देना आवश्यक है विधानसभा भंग हो जाने पर भी अध्यक्ष अपने पद पर उस समय तक बना रहता है जब तक कि नयी विधानसभा की प्रथम बैठक न हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूचीः–

- डॉ. एस. अखिलेश, रीवा दर्शन, गायत्री पब्लिकेशन रीवा 2004
- राजकिशोर – पत्रकारिता के नये परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, दरियागंज नई दिल्ली, 2007
- सिंह निशांत – पत्रकारिता लेखन कला, ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2008
- गप्ता डॉ. यू.सी. – इलेक्ट्रानिक्स मीडिया एवं सूचना प्रोद्योगिकी अर्जुन पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 2004
- वधवा, डॉ.एसः भारतीय राजनीति और प्रशासन, अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली 1989।
- डॉ. उपाध्याय, अनिल कुमार – पत्रकारिता और जनसंचार, सिद्धांत एवं विकास, भारती प्रकाशन, 2008
- डॉ. पाण्डेय, रवि प्रकाश, वैश्वीकरण एवं समाज, शेखर प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005
- शर्मा, कुमद, भूमण्डलीयकरण और मीडिया, ग्रन्थ अकादमी, नई दिल्ली, 2003
- डॉ. तिवारी, अर्जुन – आधुनिक पत्रकारिता, विश्वविद्यालय प्रकाशन वारायणसी, 2004
- प्रो. हरिमोहन – सूचना प्रौद्योगिकी और जन माध्यम, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, 2002
- प्रिन्ट एण्ड इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा प्रकाशि न्यूज पेपर 2014।
- तेज खबर 24 रीवा , विन्ध्य टाइम्स रीवा 2014।

मिथिला भाषा–रामायण मे रस–अलंकार

डॉ. निक्की प्रियदर्शिनी*

कवीश्वर रचित मिथिला भाषा–रामायण यद्यपि एकटा भक्तिकाव्य अछि मुदा ओहि मे रस आ भावक स्वाभाविक चमत्कार अछि, रीति आ अलंकारक सौन्दर्य अछि, छन्दोबद्ध भाषाक प्रवाह अछि। रामायणक प्रारम्भहि सँ कवीश्वर द्वारा एहि मे काव्यगुण समाहित कयल गेल अछि। एहि काव्य सौन्दर्यक स्पष्टीकरण कवीश्वर द्वारा एहि रामायणक प्रारम्भहि सँ भेटैत अछि। कवीश्वर शिव, विष्णु ओ गणेशक स्तुति करबा सँ पूर्व सर्वप्रथम वाणीक अधिष्ठात्री देवी शारदाक ध्यान करैत छथि–

''सरस मधु सुधातो गद्य पद्यन्नवीनां
वचन जनि धरायाश्शारदाया अधीनम्।
सकल जन नमस्यास्सन्नमस्यन्ति यस्याः
पदयुगलमतोऽस्या नौमि नित्यं सुभक्त्या।।[1]

कवीश्वर अपन मिथिला भाषा रामायण मे पाठक आ श्रोताक रुचिक यथेष्ट ध्यान रखलनि। ई तँ निर्विवाद अछि जे लोकभाषानिबद्ध रामायणक पाठक संस्कृतक पण्डित कमे होइतथि। समाजक स्त्रीगण, नेना ओ सामान्य जन लोकनि एकर रसास्वादन कयनिहार होइतथि, तेँ हुनका लोकनिकेँ अर्थबोध मे क्लिष्टताक अनुभव नहि हो, से ध्यान कवीश्वर सदति रखलनि। परिणामस्वरूप वर्णन वैशद्य आ कल्पना–विलास अत्यन्त सीमित भ' गेल। एहि प्रतिबन्धक अछैत कवीश्वर अपन रामायण मे काव्यात्मक सौन्दर्य केँ सुसज्जित करबाक बेस प्रयास कयने छथि।

कवीश्वर अपन रामायण मे जाहि विषय–वस्तु केँ विवेचनाक विषय बनओलनि से कोनहु प्रकारेँ नव नहि छल। ई पछिला सहस्त्राधिक वर्ष सँ भारतीय काव्य परम्पराक मुख्य प्रेरणास्रोत रहल अछि। वाल्मीकि सँ आरम्भ क' व्यास रचित विभिन्न पुराण आ तकर बाद संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आ विभिन्न आधुनिक भारतीय भाषाक काव्य सभमे एवं मौखिक रूप मे रामकथाक प्रचार होइत आबि रहल अछि।

अपन रामायण केँ सरस बनयबाक क्रममे कवीश्वर केँ एकटा सुविधा ई भेटलनि जे भारतीय साहित्य मे रामकथा ततेक प्रचलित अछि जे रोचकता एवं औचित्यक दृष्टिसँ जाहि स्थल पर जे उपयुक्त बूझि पड़लनि से हुनका विभिन्न रामायण सँ प्राप्त भ' गेलनि। जँ कतहु–कोनहु स्थल पर शृंगारिकताक समावेश आवश्यक बूझि पड़लनि ताहि ठाम बाल्मीकि रामायणक स्रोत ग्रहण कयलनि। एतावता ई देखैत छी जे कवीश्वर एहि रामायणमे परम्परागत रामकथाक अनुकूल प्रामाणिकताक रक्षा करैत यथासाध्य काव्यात्मकता केँ सन्निवेश सेहो कयने छथि। कवीश्वरक रामायण मे विभिन्न रस सभक सेहो समावेश भेल अछि जाहि मे शृंगार रस, हास्य रस, करुण रस, रौद्र रस, वीर रस, भयानक रस, वीभत्स रस, अद्‌भुत रस, शान्त रस आदि स्थान पओने अछि।

शृंगार रस–रामायणक कथावस्तुक विकास मे नायक राम आ नायिका सीताक पारस्परिक रतिभाव बेस विलक्षण रूपेँ दृष्टिगोचर होइत अछि। दुनू मे एकनिष्ठ प्रेम छनि, एवं व्यवहार–दशा मे ताही हेतु रावणक संग युद्ध क' राम ओकर बध करैत छथि। राम–सीताक एहि प्रेमक उदय बड़ चमत्कारपूर्वक होइत छनि। सीताक द्वारा गिरिजापूजन हेतु वाटिका मे प्रवेश करैत छथि तथा राम सेहो विश्वामित्रक आज्ञा सँ लक्ष्मणक संग तखने वाटिका मे प्रवेश करैत छथि। दुनूक एहि आकस्मिक साक्षात्कार सँ संयोगवशात एहन अवसर प्राप्त होइत छनि जाहिमे श्रृंगार रसक परिपाक बड़ चमत्कारपूर्वक होइत अछि।

''उपवन मध्यमे तड़ाग हंस चक्रवाक जल खग सरस सुरस कल गान।
देखि सुनइत मुनिहुक चितवित हर मानस समान जल एहन न आन।।
अमल कमल कमला निवास या समान गुंजित मधुप–पुंजमत्त मधुपान।।
गान कान पड़य चामर चाक ढरइछ देवता निवास मणिदीपक समान।।''[2]

मान आ मिलनक वर्णन रामायणमे कतहु वाच्य रूपेँ तँ नहि भेल अछि, किन्तु अन्य क्रम मे तकर सूचना भेटैत अछि। से सूचना बेस विलक्षण रूप सँ प्राप्त होइत अछि। किष्किन्धाकाण्ड मे विरही राम ऋतुशोभाक वर्णन करैत उच्छ्वास लैत छथि–

''शरद–सरित सुन्दर पुलिन, थोड़–थोड़ दरसाव।
नव–संगम–लज्जावतिक, जघनक उपमा पाव।।

*सहायक प्राध्यापक (मैथिली), श्री उग्रतारा भारती मंडन संस्कृत महाविद्यालय, महिषी, सहरसा, बिहार, मो– 9162504781

तारा भूषण विधु मुख थीक। तिमिर तनिक अलकावलिनीक।।
सन्ध्यारुण पट कुसुमक रंग। हो परतक्ष न संशय अंग।।
देखि पड़ अम्बर–दर्पण माँझा। राति कि सीता–छाया साँझ।।''[3]

हास्य रस– हास्य रस चित्रण बेस चमत्कारक संग एहि रामायणमे चित्रित भेल अछि, एहि क्रममे परशुराम–शतानन्द संवाद (बालकाण्ड), सूर्पनखाक संग राम–लक्ष्मण, वार्त्तालाप (आरण्यकाण्ड), अंगदक लंका प्रवेश वर्णन एवं अंगद–रावण संवाद (लंकाकाण्ड) मे पर्याप्त भेटैत अछि। परशुराम कोपग्रस्त छथि, सूर्पनखा कामातुरा अछि, रावण मे काम, क्रोध, लोभ तीनू दुर्गुण अछि। एहि सब दुर्बलताक चलते हिनका लोकनिक जे पराभव होइत अछि ताहि सँ हास्य रसक सृष्टि तँ होइते अछि संगहि ओहि दुर्बलताक प्रति दयाभाव वा कतहु–कतहु सहानुभूति सेहो उत्पन्न होइत अछि। संगहि काम–क्रोध आदि षड्रिपु केँ संयमित रखबाक कान्तासम्मित उपदेश सेहो भेटैत अछि।बालकाण्डक परशुराम–शतानन्द संवाद मे कहैत छथि–

''जनकक सभा तोहर बड़ भच। ना बड़ उच कान दुहु बूच।।
शतानन्द कहलनि खिसिआय। उचिते कहलेँ संग बिधुआय।।''[4]

करुण रस– करुण रसक स्थली भरल थिक शोक। ई शोक बन्धु विनाश सँ, बन्धु वियोग सँ, धर्मक उपघातसँ, द्रव्यनाश आदि सँ उत्पन्न होइत अछि। रामायणमे कवीश्वर ठाम–ठाम एहि स्थिति सभक वर्णन कयने छथि। तेँ एहि महाकाव्यमे करुण रसक प्रचुरता अछि। रामक वियोगमे दशरथक मृत्यु, रावणक प्रहार सँ जटायुक मृत्यु, सती ताराक वधव्य, कुम्भकर्णक वध सँ रावणक दुख, सती सुलोचना आ सती मन्दोदरीक बिसरल आदि अनेक एहन स्थल अछि जतय करुणाक अजस्र धार प्रवाहित भ' उठैत अछि। अयोध्याकाण्ड मे पुत्रक वियोग देखल जाय–

''पुत्र–पुतोहु–वियोग–व्यथा–ज्वर सौं हम आइ मरै परछी।
की दुख मे दुख दैछिअहाँ दुख–सागर आइ तरै परछी।।''[5]

रौद्र रस– कवीश्वर रचित रामायण मे अनेक ठाम रौद्र रसक अभिव्यक्ति भेल अछि। ब्रह्मर्षि परशुरामक वीरता, जाहि क्रम मे ओ एकैस बेर क्षत्रिय जातिक संहार कयल, रावणक विकट तपस्या आ तकर फलस्वरूप वरदान–प्राप्ति आ ताहि वरदानक उपरांत रावणक मदान्धता आ पापकर्म मे संलिप्तता आदि घटना मे रौद्र रसक उपस्थिति भेटैत अछि।

वीर रस– मिथिला भाषा रामायण मे अनेक ठाम वीर रस चरितार्थ भेल अछि। नायक श्रीराम आ हुनक सहयोगी लक्ष्मण, हनुमान, अंगद लोकनिक वचन ओ आचरण मे वीरता भरल अछि। संगहि प्रतिनायक रावणक पक्ष मे सेहो स्वयं रावण, कुम्भकर्ण, मेघनाद लोकनिक चरित्र मे वीर रस परिलक्षित होइत अछि। दुनू पक्षक वीरता मे एतबे अन्तर अछि रामक पक्ष न्याय, धर्म आ औचित्यक रक्षार्थ उत्साह ओ वीरताक प्रदर्शन करैत छथि मुदा रावणक पक्षक उत्साह केवल भौतिक स्वार्थक रक्षार्थ अछि। लंकाकाण्डक रावण–अंगद संवाद मे एहि रसक परिचय देखल जाय–

''गेली सूर्प्पनखा नटी कपटिनी गोदा–तटी धर्क्कटी।
श्रीरामानुज–तीक्ष्ण–खड्ग लगलै ख्याता मही नक्कटी।
लै सेना खरदूषणादि लडला गेला कहां से कहू।
सीतावल्लभ सौं विरोध कयलैं से ठाम जैबे अहूं।।''[6]

भयानक रस– कवीश्वर रामायण मे कएक ठाम भयानक रसक व्यवस्था कयने छथि। बलोन्मत्त रावणक अत्याचार सँ देवता लोकनिक त्राहि–त्राहि करब, हनुमान द्वारा लंका दहनक पश्चात् लंकावासीक त्राहि–त्राहि करब आदि स्थल पर भयानक रस देखबा योग्य अछि। भयानक रसक चित्रण द्वारा कवीश्वर ईहो कहबा मे सफल भेल छथि जे अत्याचार आ पापकर्म प्रारम्भ मे कतबो सुखद हो मुदा अन्ततः ओकर परिणाम भयानके होइत अछि आ अंतिम विजय सत्येक होइत अछि, धर्मेक होइत अछि। सुन्दरकाण्ड मे लंका दहनक बाद जे स्थिति उत्पन्न भेल तकर वर्णन–

''पीटथि छाती वनिता कानि। कपि–उतपात भेल सभ हानि।।
जरल कनक–मणिमय वर गेह। सम्पति रह की पाप–सिनेह।।''[7]

वीभत्स रस–एहि रामायणमे योद्धा सभ शरीर क्षत–विक्षत होअय लगैत छैक, अंग सभ कटि–कटि क' खसय लगैत छैक, युद्ध क्षेत्र मे रक्त, मज्जा, मुण्डादिक प्रचुरता आदिक दर्शन सँ वीभत्स रस उत्पन्न होइछ।

''फेकलनि अस्त्र एक वायव्य। अस्त्र सहित काटल भुज सत्य।।

भुजयुग–रहित चलल विसियाय। रावण कोँ प्राणाधिक भाय।।
छिन्न चरण माहि खसला ढेर। ओंघड़ायित दौड़ल से फेर।।''[8]

अद्भुत रस– मर्यादा पुरुषोत्तम रामक अद्भुत चरित्र मे अद्भुत रामक विशेषता अछि। रावणक दश मुह आ बीस भुजा होयब, कबन्धक वक्षस्थल पर आँखि होयब, सुरसाक मुह इच्छानुसार विस्तृत होयब, ताहि अनुकूले हनुमानक आकारक विस्तार होयब, मृत मेघनादक खंडित भुजा द्वारा अक्षर सिखायब, पति–परित्यक्ता सीताक निवेदन पर पृथ्वीक विदीर्ण भ' क' ओहि मे समा जायब, हनुमान द्वारा समुद्र लंघन करब, वानर–भालु द्वारा समुद्र पर पुल बान्हब आदि अनेक स्थल अछि जतय अद्भुत रस चरितार्थ होइत अछि–

''एक दिन मे लेल सेतु बांधि, चौदह योजन धरि।।
योजन बीस प्रमाण, दुसर दिन बांधल नल हरि।।
एकइस योजन सेतु, दिवस तेसर से कयलनि।।
बइस योजन सेतु, चारि वासर निर्म्मयलनि।।''[9]

शान्त रस– रामायणमे रामक अयोध्या त्याग, भरतक अयोध्या आगमन, चित्रकूट पर राम भरतक मिलन, बालिक बध, मेघनादक बध, रावणक बध, सीताक परित्याग आदि एहन स्थल सभ अछि जकर प्रतिक्रियास्वरूप क्रोध, लोभ, मोह आदिक उत्तेजनाक नग्न नृत्य भ' सकैत छल, मुदा शान्त रसक प्रवाहक कारणेँ सब उत्तेजना विपथगामी नहि भ' क' भक्तिक धार मे अन्तर्मुक्त भ' जाइत अछि।

जखन राम अपन अनुज लक्ष्मण केँ एहि संसारक असारताक आ भोग विकासक क्षणभंगुरता आ आत्माक नित्पताक उपदेश करैत छथि तँ सहजहि शान्त रस प्रवाहित भ' उठैत अछि। राम द्वारा लक्ष्मण केँ तत्व ज्ञानक उपदेश सँ निर्वेद वातावरण उत्पन्न करबा मे कवीश्वर बेस सफल सिद्ध भेल छथि। राम द्वारा तारा केँ आश्वासन देब, सती सुलोचनाक विलाप आदि सेहो शांत रसक व्यवस्था करैत अछि।

कवीश्वर रचित मिथिला भाषा रामायण मे अनेक अलंकारक प्रयोग भेल अछि। अलंकारक प्रयोग द्वारा ध्वनि केँ तीव्रतर बनयबा मे कवीश्वर ततेक विलक्षण छथि। एहि क्रम मे अनुप्रास, यमक, उपमा, उपमेयोपमा, रूपक, अपह्नुति, उत्प्रेक्षा, भ्रान्तिभान, निदर्शन, अप्रस्तुत प्रशंसा, अर्थान्तर न्यास, अनुमान, अर्थापत्ति, आदिक उपयोग भेल अछि।

छन्दक प्रयोग मे शार्दूल विक्रीड़ित, भुजगप्रभात, द्रुत विलम्बित, शिखरिणी, मोलिनी, मन्दाक्रान्ता, कवित, सवैआ, बरबा चौपाइ, दोहा, सोरठा, धनाक्षरी, षट्पद, वसन्त तिलका, जयकरी, नाराचा, मणिगुण, अमृतगति, विष्णुपद, तिरहुति, रूपक आदि अनेक देशी, मैथिल छन्द सभक प्रयोग भेल अछि।

एतावता हम देखैत छी जे कवीश्वर रचित मिथिला भाषा रामायण एकटा एहन महाकाव्य अछि जकर भाषा पक्ष, जकर संस्कृति पक्ष, जकर समाज पक्ष, जकर काव्यशास्त्रीय पक्ष, जकर अर्थशास्त्रीय पक्ष आदि अपन चिर प्रासंगिकता सिद्ध कयने अछि। कवीश्वर चन्दा झा मिथिलाक तात्कालिक समाज केँ देखि–परेखि, ओकर आवश्यकता केँ ध्यान मे राखि रामायणक रचना कयल। एहि हेतु समाज आ परवर्त्ती कविगण द्वारा तकर प्रतिफल सेहो हुनका भेटलनि। बाल–वृद्ध–वनिता द्वारा रचना केँ परिगृहीत होयब तथा परवर्त्ती काल मे कवि परम्परा द्वारा अनुकृत–अनुसृत होयब, निश्चये एकटा गौरवक विषय थिक। विद्यापतिक उपरांत कवि लोकनि केँ कवीश्वर चन्दा झा मे ओ तत्व भेटलनि जकरा आदर्श रूप मे मानि ओकर आलोक मे लोकोपयोगी काव्यक रचना कयल जाइत रहल।

संदर्भ–सूची–

1. पृ.–1, श्लोक–1, बालकाण्ड, मिथिला भाषा रामायण, मैथिली अकादमी, पटना, 1987
2. पृ.–32, बालकाण्ड, अध्याय–6, ओतहि
3. पृ.–184, किष्किन्धाकाण्ड, अध्याय–5, मिथिला भाषा रामायण, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रण, 2010
4. पृ.– 51, बालकाण्ड, मिथिला भाषा रामायण, मैथिली अकादमी, पटना, 1987
5. पृ.– 94, अयोध्याकाण्ड, ओतहि
6. पृ.– 252, लंकाकाण्ड, ओतहि
7. पृ.– 214, सुन्दरकाण्ड, ओतहि
8. पृ.–300, लंकाकाण्ड, अध्याय–8, मिथिला भाषा रामायण, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रण, 2010
9. पृ.–237, चतुर्थ अध्याय, ओतहि

नासिरा शर्मा के साहित्य में नारी की मूल संवेदना

डॉ. प्रिया जोशी*

संवेदना का अर्थ है अनुभूति, सहानुभूति, अनुभव, विशेषकर दुख या पीड़ा के प्रति। यह किसी के दर्द या भावनाओं को महसूस करने और समझने की क्षमता है । संवेदना अर्थात् मन में होनेवाला बोध, किसी के शोक, दुख कष्ट या हानि को देखकर मन में उत्पन्न वेदना, दुख या सहानुभूति । संवेदना ऐसी अनुभूति है, जो परायों के दर्द को अपना बना देती है। पीड़ा दूसरों को होती है पर प्राण अपने छटपटाते है।

नासिरा शर्मा की कहानी का दायरा बहुत अधिक व्यापक है। उनकी कहानियों में जहाँ आर्थिक दृष्टि से निम्न वर्ग के मुस्लिम पात्र आते हैं, वहीं मध्यम तथा उच्च वर्ण के मुस्लिम पात्र आते हैं। यही विविधता उनके हिंदू पात्रों में भी दिखाई देती है। यही नहीं अपितु वास्तविक जीवन में समस्याओं में विविधता है, वही विविधत आपकी कहानियों में परिलक्षित होती है।

नासिरा शर्मा जहाँ नारी की व्यथा-वेदना को आस्था की दृष्टि से देख बरखती हैं, वहीं पुरुष पात्रों को भी सम्यक् दृष्टि से देखती हैं। जहाँ मुस्लिम परिवेश की विभिन्न समस्याओं को उन्होंने अपनी कहानियों का विषय बनाया है। वहीं हिंदू समाज में व्याप्त समस्याओं पर भी आपका ध्यान गया है। कुल मिलाकर नासिरा शर्मा का अनुभव-क्षेत्र अन्य महिला कथाकारों की तुलना में अधिक व्यापक रहा है, जीवन को वे आस्थापूर्ण दृष्टि से देखती-परखती हैं। इस अध्याय में उनकी कहानियों में आये नारी पात्रों पर विचार किया जाएगा। जहाँ धर्म की दृष्टि से वे मुस्लिम नारी पात्रों का चित्रण करती हैं, वहीं हिंदू नारी पात्रों का भी।

इन नारी पात्रों के प्रश्नों की संवेदना की विविधता है। जहाँ उनके नारी पात्रों के जीवन मे गरीबी, भुखमरी जैसे भौतिक प्रश्न हैं, वहीं मध्यम या उच्चवर्ग की नारियों के उन संवेदना का चित्रण किया गया है, जहाँ नारी भूख की समस्या से निजात पा चुकी है और जीवन की विविध समस्याओं से जूझ रही है। इस सुविधा की दृष्टि से वर्ग-दृष्टि में विभाजन को आधार बनाकर उनके नारी पात्रों को देखना-परखना नासिरा शर्मा की कहानियों और निम्न वर्ग की नारी :- अवतरित परिचारी में जहां रोज की रोजी-रोटी का सवाल है। जिस पर शिक्षा से वंचित यह वर्ग मानवीय मूल्यों से कोसों दूर रहता है। शुक और उसका तबका उनके श्रम का शोषण करता है। फलस्वरूप ऐसे परिवारों में ताबूत उन्हीं अविवाहित एक ही परिवार की पाँच लड़कियों की दुखद गाथा प्रस्तुत कर रही है। यह मुस्लिम परिवार "सैयदाना" नामक ऊँचे खानदान का है। बहुत पहले कभी इस परिवार के पूर्वज शाही जिंदगी बसर करते रहे हों, पर आज तो उस परिवार की जिंदगी उस इमारत के समान ही बन गई है, जो इमारत आज खंडहर में तब्दील हो चुकी है। इन लड़कियों की विवाह की उम्र हो चुकी है, पर घर की स्थिति ऐसी नहीं कि यथासमय उनका विवाह कर दिया जाए। इसी कारण कभी किसी लड़के को उम्र के आधार पर तो कभी खानदान के आधार पर हर बार नकार दिया जाता है। सैयदाना खानदान की लड़कियाँ बाहर नहीं जा सकती, यह कहकर घर की चार-दीवारों में ही घुट-घुटकर जीने के लिए बाध्य होती हैं। इसी परिस्थिति में बड़ी बहन फहमीदा का इंतकाल होता है। शेष बची बहनें यही सोचती हैं कि -

"उस आँगन से डोली नहीं, पाँच जनाजे निकलेंगे ... और फिर ठहरी सैयदाना स्कूल में पढ़ने जाएँ, न घर से कदम निकालें। ऐसे करम करेगी तो बाबा की नाक नहीं कट जाएगी। उनका काम सिर्फ गुजरी हस्तियों को बार-बार जिंदा करके आँसू बहाना है। यही आँसू उनकी पवित्रता की निशानी है। यही जीवन की उपलब्धि है।

* असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, लक्ष्मण सिंह महर परिसर पिथौरागढ़ उत्तराखंड

उनके आज को गुजरे कल ने अपनी परिधि में ऐसा जकड़ रखा है कि वह अपनी जगह से हिल नहीं सकती।"[1] अतीत का गौरव इन लड़कियों के लिए अभिशाप का सबब बन गया है। जिंदगी को गूंगा बना दिया है ।

हकीकत में भारतीय परिवेश में स्त्री को कई प्रकार की यातनाएँ सहनी पड़ती हैं। नासिरा शर्मा का विश्वास है कि वह चाहे हिंदू स्त्री हो या मुसलमान । प्रत्येक काल ,जगह यातना एक-सी है और उसके दर्द का एहसास भी एक-सा है। कहीं मुस्लिम बहुल आबादी में हिंदू स्त्री बलात्कार का शिकार होगी तो हिंदू बहुल आबादी में मुस्लिम स्त्री उस पाश्विक बलात्कार से पीड़ित होगी। बलात्कार से पीड़ित स्त्री मूलतः औरत है। कश्मीर के आतंकवादी माहौल में कहीं सिपाहियों से बलात्कारित होती स्त्री दिखाई देती है तो कहीं किसी मुस्लिम आतंकवादी से। इसी प्रसंग को ध्यान में रखकर लेखिका ने एक कहानी लिखी है 'तीसरा मोर्चा' जिसमें एक हिंदू युवक कश्मीर के आतंकवादी इलाके से निरापद स्थान की तलाश में अपने परिवार के साथ जा रहा है। उसका मुस्लिम मित्र जब इस तथ्य को जानता है तो परेशान होकर, उसकी तलाश में निकला है। कुछ ही दूरी पर दोनों मित्रों की भेंट होती है। वे बातें करते पगडंडी पर चल रहे हैं कि इसी बीच उस पगडंडी पर एक जवान स्त्री बेहाल, बेहोश पड़ी दिखाई देती है। उसके मुख पर वे पानी के छींटे मारकर उसे होश में लाते हैं। अपना परिचय देकर उसकी व्यथा को जानना चाहते हैं। जवाब में वह कहती है- "मैं एक औरत हूँ और औरत की अस्मत तो हिंदू-मुसलमान नहीं होती जो...हिंदू-मुसलमान तो सिर्फ मर्द होते हैं जो मजहब के उन्माद में औरतों की आबरू लूटकर अपना धर्म निभाते हैं। मेरा मोहल्ला, मेरा पता क्या है? बताऊँ आपको कि मैं दो बच्चों की माँ हूँ और बच्चों का बाप साल भर से गायब है।"[2]

उसी स्त्री से उन मित्रों को यह मालूम होता है कि वहशी लोगों ने उस पर बलात्कार किया घायल भी किया और उसके बच्चों को मार डाला है। वे दोनों मित्र उसे सहारा देना चाहते हैं पर वह उसे नकारकर अपने उन दो बच्चों को दफन करने व पति की तलाश करने निकल पड़ती है। इतने हादसे सह लेने के बाद अब उसे किसी चीज का भय नहीं रहा। बलात्कारित स्त्री घायल है और उसके दो मासूम बच्चे मार दिए गए हैं- इन दो दुःखों में वह अपने दुःख को भूलने के लिए विवश है और इसीलिए उन दो बच्चों की अंतिम क्रिया अकेली करना चाह रही है। वह पति को ढूँढ़ना भी चाहती है। इस कथन में अपनी अधूरी जिंदगी को पूरा करना चाहती है। नासिरा शर्मा ने एक ही स्थिति में दो भाव स्थितियों का जो चित्र प्रस्तुत किया है - वह नारी मन के भाव, संवेदना , सौंदर्य का ही उद्‌घाटन कर रही है।

नारी मन की भाव स्थितियाँ वैश्विक धरातल पर प्रायः एक-सी होती हैं। मातृत्व ही नारी का मूल धर्म है। इससे बड़ा कोई धर्म ही नहीं है क्योंकि मातृत्व की भावना के कारण ही अपनी जान की परवाह नहीं करती, पर अपनी संतति को सुरक्षित रखने का प्रयत्न करती है। यही नहीं, अपितु जिस पति के कारण उसे संतति सुख प्राप्त हुआ है, उस पति के लिए भी वह त्यागमय जीवन जीना चाहती है । ' कागजी बादाम ' का यही सत्य एक दूसरे कथा - संदर्भ में भी ' मोम जाना ' कहानी में व्यक्त किया गया है । नासिरा शर्मा ने भोपाल की त्रासदी पर ' इब्ने मरियम ' कहानी में गैस की दुर्घटना से आधा शहर नष्ट हो जाता है । ताहिर नामक व्यक्ति भी इस दुर्घटना शिकार है । उनकी दो बेटियां हैं सुगरा और कुबरा । सुगरा का पति आकर उसे को जबर्दस्ती ले जाता है । उसी समय सुगरा को समझाते हुए कुबरा कहती है - " हम औरतें सरापा मुहब्बत होते हैं,सिर्फ मुहब्बत । मगर इसका यह मतलब नहीं कि हमारे जनाना गुरूर की कोई कीमत ही नहीं....?"[3] 'ततैया ' कहानी की मुख्य स्त्री पात्र शन्नो दूसरों पर होनेवाले अन्याय का जमकर विरोध करती है । भारतीय परिवेश में लड़की की उपेक्षा और लड़के को ममत्व की दृष्टि से देखा जाता है । मुस्लिम नारी अपने अधिकारों से इसलिए वंचित रहती है, क्योंकि निकाहनामा सम्बन्धी शरीयत की शर्तों को वह नहीं जानती । पति के गुजर जाने के पश्चात नारी बेवा बन जाती है । अगर वह जवान हो और बच्चों की मां हो, तो उसके प्रश्नों का कोई अंत ही नहीं है । नासिरा शर्मा की 'बचाव' कहानी एक मुस्लिम बेवा स्त्री की कुछ मुद्‌दों हृदय स्पर्शी ढंग से उजागर करती है ।

प्रस्तुत कहानी की प्रमुख पात्र है, बदली। उसके जवान पति की असमय मृत्यु हो गई है। वह दो बच्चों की माँ बन चुकी है। संयुक्त परिवार में उसके देवर बदली को हर चीज से बेदखल कर घर से निकाल देते है। अब आसरा सिर्फ भाई के घर का बचा। - "जिस परेशानी से वह ससुराल के घर से निकली थी, उसे सारी दुनिया परायी नजर आ रही थी। मायका आखिर मायका होता है। बचपन जहाँ गुजरता है, उसका सुकून कारुन का खजाना भी खरीद नहीं सकता है।"[4] उसे उसका हक मिले- इस दृष्टि से उसका भाई प्रयत्न करता है। पर नाकाम होने पर वकील के पास जाता है। कोर्ट में मुकदमा दायर होता है। इसी बीच वहीं वकील अपने बड़े भाई से बदली का विवाह कर देने का प्रस्ताव रखता है। बदली की भाभी वकील के बड़े भाई व उसकी दो लड़कियों को देख आती है। तय कर लेती है कि खाते-पीते घर में यदि बदली ब्याहकर चली जाए तो सुख ही पायेगी। विवश होकर बदली ब्याह कर लेने का निर्णय करती है। उस समय की मानसिकता का वर्णन लेखिका ने इस रूप में किया है- "शाम का तूफान ठहरा, तो रेहाना ने दो प्याली चाय बनायी और प्लेट में विस्कुट रख ननद के पतियाने रखा और प्यार से बाल सहलाए। शर्मिंदा-सी बदली उठ बैठी और उदास आँखों से भावज को ताका। रेहाना की आँखें भर आयीं। औरत की जात को वह जानती है। कम्बख्त को अपने पुराने से बड़ा मोह होता है. चाहे यह गाला-सड़ा ही क्यों न हो। मगर हर नयी चमकीली चीज को पकड़ते हुए भयभीत हो उठती है।"[5]

एकाकी नारी जीवन का चित्रण 'बिलाव' कहानी में किया है । सोनामाटी बलवीर की पत्नी है, उनकी दो बेटियां हैं मैना और हीरा । मैना जवान होने को आई है, हीरा की उम्र आठ वर्ष है । एक दिन रिश्ते के एहसास को भूलकर शराब के नशे में धुत होकर अपनी ही बेटी मैना पर बलात्कार करता है । बलवीर को जेल हो जाती है जाने से पहले वह धमकी देता है कि वह हीरा को नहीं छोड़ेगा । उनकी पत्नी सोनामाटी कहती है कि - "इंसान होकर बलवीर बिलाव बन गया और जब वह हीरा को सात घर झकाएँ (छिपाएं) तो भी क्या वह दरिंदे से बचा पाएगी ? वह काँप - कांप जाती । उसका दिल टूट गया था ...एक तरफ घर के बिखरने का दुख सालता तो दूसरी तरफ लड़की की बर्बादी का दर्द लावा - सा उठता ।"[6] मुस्लिम परिवेश में बहुपत्नीत्व की प्रथा को शरीयत ने वैध करार दिया है । अगर इस प्रथा के कारण किसी पढ़ी - लिखी नारी के जीवन में किसी कारण सोत का आना तय हो जाय, तो उस नारी के पर क्या बितती होगी - इसी प्रश्न को लेकर लेखिका ने 'बावली' कहानी में सुन्दर चित्रण किया है। 'बंद दरवाजा' कहानी में काजिम तथा शबाना दंपति की करुण कथा का चित्रण किया गया है । सामंती खानदानी आन-बान के नाम पर काजिम और शबाना के परिवार उन दोनों की खुशहाल जिंदगी को मानो दफना ही देते हैं। ये दोनों बचपन से साथ खेले हैं। दोनों परिवारों के आपसी संबंध भी अच्छे हैं। इसीकारण दोनों का विवाह भी कर दिया जाता है। परंतु निकाह के बाद दोनों परिवारों में वैमनस्य पैदा हो जाता है। इसीकारण जब शबाना शादी के बाद पहली बार मायके जाती है, तो उसके पिता उसे दुबारा ससुराल नहीं भेजते हैं। दोनों परिवारों में ठन गई है। इधर काजिम और शबाना विरह के कारण त्रस्त हो गये हैं। एक ओर काजिम अपने पिता का आदेश मानने के लिए विवश है, दूसरी ओर शबाना भी माँ का जहर खा लूँगी -इस धमकी से विवश बन गई है। उसकी मानसिकता को लेखिका ने इस तरह प्रस्तुत किया है-

"गुजरे कल की औरतें क्या थीं? बलिदान की मूर्तियाँ या फिर बलि की वेदी पर चढ़ायी गयी बकरियाँ?.... ऐसी हालत में उसे भी जलते जलते पिघलना है। मर्यादा की लौ को सिर पर उठाये दम तोड़ना है। घुट-घुटकर इस दर्द के समुंदर को पीना है। बड़े घरों की कहानियाँ उनके आँगन में दम तोड़ती हैं। ऊँचा खानदान मान मर्यादा का कब्रिस्तान होता है, जहाँ हर रोज एक नई कब्र खुदती है और बुजुर्गों की ख्वाहिशों के कफन में लिपटी लाश दफन कर दी जाती है। मेरी कब भी मेरा इंतजार कर रही है।"[7] सामंतशाही वातावरण में उत्पन्न एक अलग संवेदना का चित्रण 'पत्थर गली' नामक कहानी में किया गया है। 'चित्रण पत्थर गली' नामक कहानी में किया गया है। इस वातावरण में शोषण के खिलाफ, प्रतिकूल स्थितियों के खिलाफ यदि स्त्री विरोध भी करती है, तो उससे कोई नतीजा नहीं निकलता। कहानी की मुख्य पात्र फरीदा है। इच्छा के बावजूद यह शिक्षा

प्राप्त नहीं कर पाई। उसका बड़ा भाई सामंती मानसिकता से ग्रस्त है। मैं ममता है, पर वह भी रूढ़िग्रस्त है। ये दोनों उसके जीवन को उजाड़ देते हैं। फरीदा अपने ही परिवार द्वारा किये गये शोषण का शिकार होती है। वह सोचती है-

"नफरत की चिता में उसके शोलों में तपती-झुलसती फरीदा ने बीस साल इत्त घर में गुजार दिए थे। उसको खुद से बातें करने की आदत हो गई थी।.... खुद फरीदा को इस घर में लगता था कि जाने उसकी आत्मा कहाँ, किस पथरीली गली में भटक रही है, जहाँ केवल पत्थर की दीवारें, पत्थर की जमीन, पत्थर की छत है जहाँ कोई द्वार नहीं है। बस सफेद चिकने बड़े-बड़े पत्थर हैं। पत्थर की गली और पत्थर के कूचे-दर-कूचे हैं।"[8] फरीदा परिवार में निहित अंधी मान्यताओं के विरुद्ध विद्रोह करती अवश्य किन्तु इसका भी कोई परिणाम प्राप्त नहीं होता । नासिरा शर्मा ने घर व्यव स्था से पीड़ित नारी के प्रति 'दरवाज - ए - कजविन' कहानी में संवेदना व्यक्त की है । 'संगसार' कहानी में धर्म और कानून नारी के जीवन में उत्पन्न नई समस्याओं के समाधान की दृष्टि से कितने अप्रासंगिक हो इसे चित्रित किया गया है । राजनैतिक परिस्थिति से पीड़ित नारी, भूख की त्रासदी को झेलती स्त्री ,वैवाहिक संबंधों में विच्छेद के परिणाम भोगती स्त्री, पुरुष द्वारा प्रताड़ित स्त्री इत्यादि के प्रति संवेदना दिखाई देती हैं ।

'शाल्मली' उपन्यास में लेखिका ने एक शिक्षित और आत्मनिर्भर नारी के आंतरिक संघर्ष को दिखाया है, जो समाज की रूढ़ियों का सामना करती हैं । 'शाल्मली' उपन्यास में इसकी नायिका शाल्मली एम.ए.तक पढ़ाई कर लेती है ,साथ ही स्पर्धात्मक परीक्षा की तैयारी करती है, फिर भी वह इस विचार डरजाती है कि इतना पढ़-लिखकर सिर्फ गृहिणी बनकर रह जायेगी । शाल्मली का पति उनका बैंक बैलेंस देखकर वह नया फ्लैट लेना चाहता है। शाल्मली का विरोध करने पर वह उस धन को शेयर बाजार में लगाकर ज्यादा धन प्राप्त करना चाहता है। वह शाल्मली से कहता है -" क्यों फ्लैट की किसी स्कीम में पैसे डाल दें ? इससे बेहतर मकान में अब जाना चाहिए। .....कुछ शेयर खरीद लेते हैं । पूंजी भी लगी रहेगी और आमदनी भी बढ़ेगी।"[9] ठीकरे की मंगनी 'उपन्यास में महरूख नाम की एक संघर्ष शील और परिश्रमी लड़की का चित्रण किया गया है, जो समाज की पाबंदियों के बावजूद अपने जीवन को अपने ढंग से जी रही है । उपन्यास की नायिका महरूख एक स्कूल में अध्यापिका है । इस उपन्यास अन्य एक नारी की भी संवेदना व्यक्त की गई है। खालिदा को त्रासदी भुगतनी पड़ती है । उसका - "एक भाई आज़ादी की जंग में शहीद हुआ, दूसरा पाकिस्तान जा बसा ... बीस साल पहले भाई के कुनबे के पाकिस्तान जाते हुए भी मायका छूटने के गम में वह सारी रात भाई के बच्चों के लिए खजूरे और नमक पारे तलती रहती थीं ।"[10] 'पारिजात' उपन्यास में एक नारी के रूप में, रिश्तों की जटिलताओं और जीवन के संघर्षों को चित्रित किया गया है । इस उपन्यास में मानवीय रिश्तों, विशेष रूप से स्त्री - पुरुष संबंधों, और आधुनिकता तथा प्राचीनता के बीच संघर्ष को दिखाया है । इस उपन्यास को श्रेष्ठ भारतीय पुरस्कार 'साहित्य अकादमी' से सम्मानित किया गया है । 'पारिजात' एक विराट कैनवास का उपन्यास है जिसे महाका व्यात्मक उपन्यास के नाम से जाना जाता है । 'पारिजात' सिर्फ एक वृक्ष, कथा और विश्वास नहीं है, किन्तु यथार्थ की धरती पर लिखी एक ऐसी तमन्ना है, जो रोहन के खून में रेशा-रेशा बनकर उतरी है और रूही के सांसों में ख्वाब बनकर घुल गई है । रोहन की खोजी वृत्ति देखकर ऐसा लगता है कि स्वयं नासिरा ने अपने संघर्ष को दिखाया है। नासिरा शर्मा की रचनाएँ, नारीवादी दृष्टिकोण को महत्व देती हैं तथा नारियों का समाज में स्थान, उनकी स्थिति, अधिकार और स्वतंत्रता, संवेदना के संदर्भ में स्थान दिलाती हैं।

निष्कर्ष के रूप में नासिरा शर्मा के कथा साहित्य में स्त्री, संघर्षरत, सशक्त हस्ताक्षर के रूप में अंकित की गई है । उन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री को केन्द्र में रखा है। अपने साहित्य में वे रूढ़िवादी सोच, सामाजिक बंधन और पुरुषवादी मानसिकता से ग्रस्त स्त्रियों की कहानी लिखती हैं। उनका पारिवारिक और सामाजिक बंधनों में जकड़ी नारियों की दशा को दर्शाती हैं जो पुरानी सोच और रीति - रिवाजों के विरुद्ध

जूझती रही हैं। मुस्लिम समाज की महिलाओं की दशा को भी उद्घाटित किया है । उन्होंने अपने साहित्य के द्वारा नारियों की अवदशा पर संवेदना व्यक्त करते हुए, सामाजिक परिवर्तन के लिए भी प्रेरित किया है।

संदर्भ - ग्रंथ :-

1. पत्थर - गली. नासिरा शर्मा. पृ. 93 - 94
2. इब्ने मरियम. वही. पृ. 67 - 68
3. इब्ने मरियम. नासिरा शर्मा. पृ. 156
4. खुदा की वापसी. वही. पृ. 49
5. वही. पृ. 149
6. इंसानी नस्ल. नासिरा शर्मा. पृ. 71
7. पत्थर गली. नासिरा शर्मा. पृ. 48
8. वही. पृ. 156
9. शाल्मली. नासिरा शर्मा. पृ. 54
10. ठीकरे की मंगनी. नासिरा शर्मा. पृ. 26- 27

महात्मा बुद्ध का दार्शनिक चिंतन

जय सिंह यादव*

महात्मा बुद्ध न केवल हमारे देश के प्रत्युत् विश्व के एक महान विभूति थे। उनका व्यक्तित्व विश्व के महान व्यक्तियों मे से एक था। यही नही, उनके व्यक्तित्व की गणना महान् पुरूषों में सर्वोपरि की जाती है। हमारे देश इतिहास यद्यपि बहुत प्राचीन है, किन्तु ऐतिहासिक–काल बुद्ध से ही प्रारम्भ होता है। उनकी देन हमारे देश की अक्षुण्ण–मणि है जो शाश्वत चिरन्तन तथा अक्षय निधि के समान महत्वपूर्ण है। उन्ही के महान ऐतिहासिक उपदेशों तथा तदनुरूष अनुगमन के कारण हमारा देश विश्व गुरू कहलाता है। ऐसे महापुरूष का जीवन भी कम महिमामय नहीं है।

बुद्ध के जीवन सम्बन्धी विभिन्न प्रकरणों का उल्लेख ''पालि त्रिपिटक'' में अनेक बार हुआ है, जिसमे कहीं कहीं स्वयं बुद्ध के विचार है और कहीं अन्य लोगों के मुख से घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। त्रिपिटक के ये वर्णन बुद्ध की जीवनी के प्रामाणिक स्रोत माने जाते है। अट्ठकथाओं में जीवनी का उल्लेख अधिक है। यहां मूल त्रिपिटक की कमियो के पूर्ण करने का प्रयास किया गया है। इसलिए अट्ठकथाओं को त्रिपिटक का पूरक कहा जा सकता है। संस्कृत तथा गाथा संस्कृत में लिखे गये ग्रन्थों में ''बुद्धरचित'' उपलब्ध होता है जिसकी प्रामाणिकता ऐतिहासिक दृष्टिकोण से निम्न स्तर की है।[1]

''ललितविस्तर'' एवं ''महावस्तु'' में बुद्ध की जीवनी अतिरंजित दृष्टिगत होती है। इसलिए अलौकिक तथ्यों की अधिकता के कारण उन्हें कभी ऐतिहासिक महत्व नहीं दिया गया है। उत्तरालीन युग में बुद्ध के जीवन सम्बन्धी घटनाओं में कल्पना का आश्रय लिया गया, जिनका समावेश पिटक साहित्य में बहुत कम है। मूल ''विनय'' में बुद्ध का जीवन चरित तथा विनय के नियमों का विवरण एक सूत्र मे समबद्ध है। इसके आधार पर आधुनिक विद्वानों ने बुद्ध की जीवनी लिखने का प्रयास किया है।[2]

गौतम बुद्ध अपने जीवन–काल में महापुरूष और तीर्थकर माने जाते थे, न कि एक अलौकिक अवतार अथवा तत्व, जैसा कि बाद के भक्ति–प्रवण बौद्धों ने उन्हें समझा। इस कारण जहाँ बुद्ध भगवान के पहले शिष्यों ने उनके उपदेशों का संग्रह ध्यान से किया, उनके जीवन सम्बन्धी वृत्तान्त को उन्होंने उतना महत्वशाली नहीं समझा। बाद के भक्तों ने उनकी जीवनी को अपनी श्रद्धा और सिद्धांतों के अनुरूप कल्पना से मण्डिल किया। परिणाम यह है कि बुद्ध के जीवन के विषय मे प्राचीन और ऐतिहासिक सामग्री अत्यंत विरल है। जो जीवनियाँ मिलत है वे उत्तरकालीन तथा श्रद्धाप्रधान है।[3]

चीनी यात्रियों के विवरणों में भी गौतम बुद्ध के जीवन एवं चारिका का उल्लेख मिलता है। इस सम्बन्ध में फाहियान एवं इत्सिंग अपेक्षाकृत कम सूचनाएँ देते हैं और विस्तृत सूचना ह्वेनसांग से ही प्राप्त होती है इनके विवरण से भी गौतम बुद्ध की जीवनी से सम्बन्धित प्रायः उन्ही तथ्यों का ज्ञान होता है जो पालि आदि अन्य स्रोतों से ज्ञात हौ। यह अवश्य सत्य है कि क्योंकि उनकेसमय तक बुद्ध कल्पना यथेष्ठ विकसित थी और सद्धर्म के क्षेत्र का व्यापक विस्तार हो चुका था। वे उन स्थानों से भी बुद्ध को सम्बन्धित करते है जहां सम्भवतः बुद्ध कभी नहीं गये थे। उनके विवरण में भी अनेक जातक और पौराणिक कथाओं का समावेश देखने को मिलता है।[4]

पालित्रिपिटक में बुद्ध की सर्वागीण जीवनी कहीं उपलब्ध नहीं होती। मज्झिम निकाय के चार सुत्तों में उनकी पर्येषणा का वर्णन मिलता है। संबोधि का वर्णन अनेकत्र निकायों में और महावग्ग में उपलब्ध होता है। महावग्ग में सम्बोधि के बाद के कुछ समय का क्रमबद्ध इतिवृत्त भी दिया गया है। ऐसे ही महापरिनिब्बान सुत्तन्त में निर्वाण और उसके कुछ पहले के समय का वर्णन मिलता है। महापधान सुत्त में बुद्ध की जीवनी को एक आदर्श साँचे में कस दिया गया है।[5]

ललित विस्तर में बुद्ध की जीवनी दी गयी है।[6] यद्यपि ललित विस्तर अपने वर्तमान रूप में महायान सूत्र है, तथापि उसमें स्पष्ट ही अनेक सीलो पर प्राचीन सन्दर्भ अवशिष्ट है। तिब्बती परम्परा के बुद्ध की जीवनी से सम्बन्ध रखने वाले कुछ अंश का रॉकहिल ने अंग्रेजी में अनुवाद किया है।[7] चीनी अनुवाद में रक्षित

* शोधार्थी, प्राचीन इतिहास पुरातत्व एवं संस्कृति विभाग, मडियाहूँ पी0 जी0 कालेज, मडियाहूँ, जौनपुर।

'अभिनिष्क्रमण सूत्र' अधिकांश में महावस्तु से मेल खाता है। अश्वघोष के बुद्ध चरित में बुद्ध की जीवनी काव्य के रूप में प्रस्तुत है।[8]

पालि तथा संस्कृत बौद्ध साहित्यों में भगवान बुद्ध के जो जीव चरित्र उपलब्ध है, उनमें अधिक विषमता नही है। अपने श्रद्धाभाजन शास्ता के प्रति व्यक्त, सम्मान–सूचक एव चमत्कारिक कुछ बातों को छोड़कर प्रायः सभी में समानता है। वास्तव में सबका स्रोत एक ही है।[9] बौद्ध मान्यता के अनुसार जो व्यक्ति बुद्धत्व की प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्प होकर दस पारमिताओं[10] को पूर्ण करता है, वह भविष्य में बुद्ध होता है। पारमिताओं को पूर्ण करने के समय उसे 'बोधिसत्व' कहा जाता है। जातकट्ठकथा में गौतम बुद्ध की 550 पूर्वजन्म सम्बन्धी कथाएँ आयी हुई हैं, जिनमें उनके द्वारा पारमिताओं के पूर्ण करने का वर्णन है।

गौतमबुद्ध जब बोधिसत्व थे और तुषित स्वर्ग में शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहते थे, तब तत्कालीन भारतीय समाज के दुःख–दारिद्रय तथा अस्थिरता को देखकर उनसे त्राण के लिए देवताओं ने स्वर्ग में जाकर उनसे प्रार्थन की–

"कालोयं ते महावीर! उप्पज्ज मातुकुच्छितं।
सदैवकं तारयन्तो बुज्झस्सु अमतं पदं।।"

(अर्थ– हे महावीर! अब आपका समय हो गया है। माँ के पेट में जन्म ग्रहण करें (और) देवताओं के सहित (सारे संसार को भवसागर से) पार करते हुए अमृत–पद (निर्वाण) का ज्ञान प्राप्त करें।) [11]

बोधिसत्व ने देवताओं की प्रार्थना पर अनुकम्पापूर्वक ध्यान दिया और समय, द्वीप, देश, कुल माता तथा आयु का विचार कर देवताओं को अपने मर्त्यलोक में उत्पन्न होने की स्वीकृति दे दी। उन्होंन विचार करते हुए देखा कि सौ वर्ष से कम आय का समय बुद्धों की उत्पत्ति के लिए अनुकूल नहीं होता और न इससे अधिक लम्बी आयु का समय ही। जब लम्बी आयु होती है तो प्राणियों के जन्म, जरा और मृत्यु का मान नहीं होता है। अतः वे अनित्य, दुःध तथा अनात्म सम्बन्धी बुद्धों के उपदेश का नही समझ पाते। ऐसे ही कम आयु वाले प्राणियों में राग–द्वेष बहुत होते है। उन पर बुद्धों के उपदेश का प्रभाव पानी पर लकीर के समान शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। अतः बोधिसत्व ने निश्चय किया कि सौ वर्ष की आयु वाला समय ही बुद्धों के उत्पन्न होने का समय है।[12]

द्वीप का विचार करते हुए उन्होंने देखा कि सभी बुद्ध जम्बूद्वीप में ही जन्म लेते है और वह भी उसके मध्यदेश में ही[13] विनय पिटक में मध्यदेश की सीमा इस प्रकार वर्णित है– मध्यदेश की पूर्व दिशा में कजंगल[14] नामक कस्बा है, उसके बाद बड़े साल केवन हैं और फिर आगे सीमान्त (प्रत्यन्त) देश। पूर्व–दक्षिण में सलीलवती[15] नामक नदी है, उसके आगे सीमान्त देश। दक्षिण दिशा में सेतकण्णिक[16] नामक कस्बा है, उसके बाद सीमान्त देश। पश्चिम में थूण[17] नामक ब्राह्मण ग्राम है, उसके बाद सीमान्त देश। उत्तर दिशा में ऊशीरध्वज[18] नामक पर्वत है, उसके बाद सीमान्त देश।[19] इसी प्रदेश में बुद्ध, प्रत्येक बुद्ध प्रथम अग्रश्रावक, महाश्रवक, अस्सी महाश्रावक, चक्रवती राजा तथा दूसरे महाप्रतापी क्षत्रिय, ब्राह्मण और वैश्य पैदा होते हैं और वही यह कपिलवस्तु नामक नगर है। मुझे वहीं जन्म लेना है।

कुल का विचार करते हुए उन्होंने देखा कि आजकल क्षत्रिय कुल लोकमान्य है। इसीलिए उसी कुल में जन्म लूँगा। शुद्वोधन नामक राजा मेरा पिता होगा। माता का विचार करते हुए उन्होंने देखा कि बुद्धों की माता चंचल और शराबी नहीं होती, वह दीर्घकाल से पारमिताएँ पूर्ण करने वाली और जन्म से ही अखण्ड पंचशील का पालन करने वाली होती है और यह महामाया नामक देवी ऐसी ही है। यह मेरी माता होगी, किन्तु उनकी आयु का विचार करते हुए उन्होंने देखा कि दस महीने सात दिन की ही उनकी आयु है। [20]

बौद्ध धर्म के आविर्भाव की प्रारम्भिक स्थिति–

भगवान बुद्ध के आविर्भाव के पूर्व भारतीय समाज की सुव्यवस्थित परम्परा एवं दृढ़ बन्धन शिथिल हो गये थे। वैदिक काल की आश्रम–व्यवस्था धीरे–धीरे स्वतंत्र हो गयी थी और उसमें परिवर्तन आ गया था। धार्मिक अनुष्ठानों ने रूढ़ियों का स्थान ले लिया था। यज्ञ का आयोजन हिंसात्मक हो गया था। यद्यपि वैदिक काल में 'यज्ञ हिंसा–रहित होते थे। सुत्तनिपात के ब्राम्हणधम्मियसुत्त में उसी प्राचीन व्यवस्था की ओर इंगित करते हुए कहा गया है– ''पुराने ब्राम्हणों की चर्या के अनुसार चलने वाले ब्राम्हण इस समय नहीं दिखायी देते [21] यज्ञ के उपस्थित होने पर वे गौवों का वध नहीं करते थे।[22] उनके कर्मकाण्ड की विधि से जनता का मन ऊब सा गया था और वह अब आध्यात्मिक चिन्तन की ओर अग्रसर हो रही थी। वैदिक देवताओं की अपेक्षा ईश्वर, आत्मा, मुक्ति आदि की चर्चायें हुआ करती थी। उस समय उत्तर भारतीय समाज में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र– ये चारो वर्ण थे, किन्तु इनकी जातियाँ नहीं थी। कहीं–कही और कभी–कभी ही व्यवसाय के

अनुसार नीच–ऊँच की भावना, दृष्टिगत होती थी, किन्तु जाति–पाति या छुआछूत की भावना जैसी कि बाद में उत्पन्न हुई, उस समय नहीं थी। वर्ण भी कर्मप्रधान ही थे, किन्तु उनमें धीरे–धीरे जन्मजात श्रेष्ठता एवं हीनता की भावना घर करती जा रही थी, जिसका कि पीछे तथागत को विरोध करना पडा था और कहना पड़ा था कि ''व्यक्ति कर्म से ही नीच–ऊँच होता है, जन्म से नहीं।[23]

भारतवर्ष का यह पुण्यमय प्रदेश सदा से प्रकृति–नदी का रमणीय रंगस्थल बना हुआ है। प्रकृति देवी ने अपने करकमलों से सजाकर शोभा का आगार बनाया है। भारत का बाह्यारूप अतिशय अभिराम है। उसका अभ्यन्तर रूप उससे भी अधिक सुचारू और सुन्दर है। यहाँ सभ्यता और संस्कृति का उदय हुआ। धर्म तथा दर्शन का जन्म हुआ। उस समय समाज कई श्रेणियों में विभक्त था, जिनमें राजन्य, प्रभुवर्ग, वणिक्, कृषक, पूजक आदि प्रमुख थे, राजन्य और प्रभुवर्ग शासन–व्यवस्था सम्हालता था। उस समय राजतंत्र एवं गणतंत्र प्रणालियों में उत्तर भारत का राजनैतिक विभाजन था। मगध, कोशल, अंग, वज्जी, मल्ल, शूरसेन, वत्स अवन्ति आदि शासन की इकाइयाँ थी जो सोलह महाजनपदों [24] में शामिल थी।

भगवान बुद्ध के आविर्भाव के पूर्व उत्तर भारत की धार्मिक एवं दार्शनिक स्थिति जटिल हो गयी थी। नाना प्रकार के मतवाद फैले हुए थे। कर्मकाण्ड एवं अन्धविश्वास में पड़ी हुई जनता धार्मिक एवं दार्शनिक ज्ञान की चर्चा होती थी तो दूसरी ओर यज्ञ, होम, बलि, मेध आदि कर्मकाण्ड का बोलबाला था। निरीह–पशुओं की बिल यज्ञों में पुण्य की अभिलाषा से लोग करते थे, जिनमें भेड, बकरे, गाय, भैंस और साँड के अतिरिक्त अश्व, गज और नर–बलि का प्रचलन था। दर्शन की स्वाभाविक जटिलताओं से जन–जीवन बोझिल था। उस समय सम्पूर्ण भारत में छः प्रमुख धर्माचार्य अपने–अपने धर्म तथा दर्शन के प्रचार में संलग्न थे। जिनके नाम हैं– (1) पूरण कस्सप (पूर्ण काश्यप) (2) मक्खलि गोसाल (मस्करी गोशाल) (3) अजित केस कम्बलि (अजित केश कम्बलि) (4) पकुधकच्चायन (प्रक्रुधकात्यायन), (5) निगण्ठ नाथपुत्त (निग्रन्थ ज्ञातृपुत्र), (6) संजय वेलट्ठिपत्त (संजय वेलष्ठि पुत्र)[25] इन्हें तीर्थकर कहा जाता था।

किसी भी तथ्य को व्यक्तिगत परीक्षण के बाद ही स्वीकार किया जाना चाहिये, परम्परागत प्रमाण के आधार पर नहीं। बुद्ध वेदों को ईश्वरीय ज्ञान न मानने का सीधा अर्थ था वैदिक कर्मकाण्डों और यज्ञों को अस्वीकार करना। बुद्ध ने सार्वभौम ईश्वर की अवधारणा का भी खण्डन किया है।[26] उनके अनुसार ईश्वर नाम की कोई वस्तु नहीं है जो इस लोक का सृष्टिकर्ता हो, इस लोक का संचालक हो। सभी सत्व अपने कर्मों से इस लोक में लन्म लेते हैं और अपने कृत कर्मों का अच्छा बुरा भोगते है। बुद्ध ने जन्म आधारित जाति प्रथा का भी घोर विरोध किया। उनके अनुसार जन्म से कोई ब्राम्हण या अब्राम्हण नहीं होता है। अतः कर्म के आधार पर ही जाति का निर्धारण होना चाहिए।[27] इस पकार तत्कालीन भारतीय समाज की सामाजिक मान्यताएँ तथा जीवन–प्रणाली के अनेक तत्व केवल रूढ़ि बनकर रह गये थे जो सामाजिक विकास के लिए जिन व्यक्तियों ने प्रयास किया उनमें गौतम बुद्ध का सबसे विशिष्ट स्थान है। गौतम बुद्ध ने अत्यन्त तार्किक ढंग से तद्युगीन समाज में व्याप्त सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार किया। सम्पूर्ण मानवता के कल्याण की दृष्टि से भी बुद्ध के विचार अत्यन्त स्थायी सिद्ध हुए। ए0 एल0 बाशम के शब्दो में – 'सामान्य रूप से संसार पर उनके मरणोपरान्तीय प्रभावों के आधार पर ही उसकी प्रतिष्ठा का निर्णय किया जाए तो निश्चय ही भारत में जन्म लेने वाला वह (बुद्ध) महानतम व्यक्ति था।[28]

बौद्ध धर्म विश्व के महनीय धर्मों में अन्यतम है। भगवान बुद्ध इसी भारत–भूमि में अवतीर्ण हुए थे। वे संसार की दिव्य विभूति थे। महामहिमशाली गुणों से वे विभूषित थे। उन्होंने समय की परिस्थिति के अनुरूप जिस धर्म का चक्र प्रवर्तन किया, वह इतना सजीव, इतना व्यावहारिक तथा इतना मंगलमय था कि आज ढाई हजार वर्षों के अनन्तर भी उसका प्रभाव मानव समाज पर न्यून नही हुआ है। एशिया के केवल एक छोटे पश्चिमी भाग को छोड़कर इस विस्तृत भूखण्ड पर इसकी प्रभुता अतुलनीय है। बुद्ध–धर्म ने करोड़ों प्राणियों का मंगल साधन किया है और आज भी वह उनके आत्यन्तिक कल्याण की साधना में लगा हुआ है। पाश्चात् जगत् के चिन्ताशील व्यक्तियों पर इस धर्म तथा दर्शन का महत्वपूर्ण प्रभाव पूर्वकाल में पड़ा है और आज भी पड़ रहा है।[29]

भगवान बुद्ध की शिक्षाएँ–

भगवान बुद्ध के समय सामाजिक स्थिति इतनी बिगड गयी थी कि कोई कर्मफल एवं पुनर्जन्म आदि को न मानकर कामसुख में लीन था। कोई कठिन तपस्या से मुक्ति मानकर अपने को कष्ट देने में लगा हुआ था। भगवान बुद्ध ने स्वयं दो अंतों का अनुभव अपने बुद्धत्व काल के पूर्व किया था। पालि साहित्य में वर्णित है कि राजा शुद्धोदन ने पूरा प्रयास किया था कि सिद्धार्थ सांसारिक आसक्तियों में लगे रहें लेकिन उन्होंने

काम भोगों का उपभोग करके उसमें कोई चिर सुख का अनुभव नहीं किया। उनकी अनित्यता समझकर उन्हें त्याग दिया। इसके पश्चात् तपस्या में भी उन्होंने इतनी कठोर तपस्या की कि उनक शरीर का अस्थिपंजर मात्र शेष रह गया था और उसमें भी लाभ न देखकर बोधि की ओर उन्मुख हुए।[30]

बुद्ध ऐसे आध्यात्मिक ज्ञान का उपदेश देना चाहते थे, जिससे वासना का क्षय हो। केवल बौद्धिक विलास की तरफ वे तटस्थ थे। उन्होनें जीवन को, जैसा भी यह है, वैसा मानकर व्यवहारिक दृष्टि से इसकी समस्या की खोज की। उन्होंने देखा कि हर आदमी दुःखी है। इसका कारण जानने हेतु किये गये प्रयत्नों के फलस्वरूप वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इच्छा का वह विकृत रूप, जिसे तृष्णा कहा गया है, ही सारे दुःखों का मूल है। साथा ही बुद्ध को इसका बोध भी हो गया था कि इस तृष्णा पर नियन्त्रण किया जा सकता है।[31] इस प्रकार जीवन मे दुःख की अपरिहार्यता से उनके धर्म का प्रारम्भ होता है। दुःख की प्रवृत्ति समझकर उसके निवृत्ति हेतु प्रयत्नशील होना ही बुद्ध की शिक्षाओं का मूल उद्देश्य है।

चार आर्य सत्य–

तथागत ने ऋषिपतन मृगदाय में जिस धर्म का सर्वप्रथम प्रवचन किया, जिसे धर्मचक्र प्रवर्तन कहते हैं, वह चार आर्य सत्यों का ही उपदेश था।

प्रथम आर्य सत्य (दुःख)–

यह संसार भव–ज्वाला से प्रदीप्त भवन के समान है, परन्तु मूढ़ जन इस स्वरूप को न जानकर ही तरह–तरह के भोग–विलास की सामाग्री एकत्र करते हैं परन्तु इससे क्या होता है? देखते–देखते बालू की भीत के समान विशाल सौख्य का प्रासाद पृथ्वी पर लौटने लगता है, उसके कण–कण छिन्न–भिन्न होकर बिखर जाते है। परिश्रम तथा प्रयास से तैयार की गयी भोग– सामग्री सुख न दुःख ही पैदा करती है। अतः इस संसार में प्रथम सत्य दुःख ही प्रतीत होता है, साधारण जन इसे प्रतिदिन अनुभव करते हैं, परन्तु उससे उद्विग्न नहीं होते। साधारण घटना समझकर उसके आग अपना सिर झुका देते है। महात्मा बुद्ध का अनुभव नितान्त सच्चा है– उनका उद्देश वास्तविक है। महर्षि पतांजलि ने स्पष्ट कहा है कि दुःखमेव सर्व विवेकिनः (योग सूत्र 2/15) विवेकी पुरूष की दृष्टि में यह समग्र संसार ही दृःख है। बृद्ध की भी यही दृष्टि थी।[32]

द्वितीय आर्य सत्य (दुःख का समुदाय)–

समुदाय शब्द का अर्थ उत्पत्ति है। दुःख की उत्पत्ति को ही दुःख समुदय कहा जाता है। यह उत्पत्ति तृष्णा के कारण होती है। चाह और कामना का ही नाम तृष्णा है। जिस–जिस योनि में प्राणी उत्पन्न होते हैं, वही–वहीं तृष्णा के कारण आनन्द का अनुभव करते है और वहाँ से मरना नहीं चाहते है। तृष्णा ही उन्हें फँसाये रहती है। यह तृष्णा तीन प्रकार की होती है– (1) काम–तृष्णा, (2) भव–तृष्णा, (3) विभव–तृष्णा।[33]

1. **काम तृष्णा**– जो तृष्णा नाना प्रकार के विषयों की कामना करती है।
2. **भव तृष्णा–** भव–संसार या जन्म। इस संसार की सत्ता बनाये रखने वाली तृष्णा। इस संसार की स्थिति के कारण हमीं है। हमारी तृष्णा ही इस संसार को उत्पन्न किये हुए हैं। संसार के रहने पर ही हमारी सुख वासना चरितार्थ होती है। अतः इस प्रकार की तृष्णा भी तृष्णा का ही एक प्रकार है।
3. **विभव तृष्णा–** 'विभव' का अर्थ है उच्छेद, संसार का नाश। संसार के नाश की इच्छा उसी प्रकार दुःख उत्पन्न करती है, जिस प्रकार उसके शाश्वत् होने की अभिलाषा। जो लोग संसार को नाशवान् समझते है, वे चार्वाक पन्थ पथिक बनकर ऋण लेकर भी घृत पीते हैं। जीवन को सुखमय बनाना ही उनका उद्देश्य होता है। वे इससे से तनिक भी विचलित नहीं होते कि उन्हें ऋण चुकाना पड़ेगा। जब यह देह भस्म की ढेर बन जाती है, तब कौन किसे ऋण चुकाने आता है? संसार के अच्छेदवाद का यही चरम अवसान है।[34] इस आर्य सत्य की पृष्ठभूमि में बुद्ध का हेतु–प्रत्यय सम्बन्धी वह तथ्य छिपा है जिसकी व्याख्या उन्होने प्रतीत्य–समुत्पाद नामक सिद्धान्त में की है।[35] इसे द्वादश–निदान भी कहते हैं। प्रतीत्य–समुत्पाद के अन्तर्गत वर्णित द्वादश निदान इस प्रकार है– अविद्या, संस्कार, विज्ञान, नामरूप, षडायतन, स्पर्श, वेदना, तृष्णा, उपादान, भव जाति एवं जरा–मरण।

तृतीय आर्य सत्य (दुःख निरोध)–

निरोध का अर्थ है रूक जाना, बन्द हो जाना अथवा नष्ट हो जाना। उसी तृष्णा से सम्पूर्ण रूप से मुक्ति पा जाना अर्थात् उस तृष्णा का नाश हो जाना ही दुःख निरोध आर्यसत्य है। विशुद्धिमार्ग में कहा गया है– परमार्थ से दुःख निरोध आर्यसत्य निर्वाण कहा जाता है। चूँकि उसे पाकर तृष्णा उदय होती है और निरूद्ध हो जाती है, इसलिए विराग और निरोध कहा जाता है।[36]

चतुर्थ आर्य सत्य (दुःख निरोध मार्ग)–

यद्यपि तृतीय आर्य सत्य से यह विश्वास तो होता है कि दुःख निरोध मार्ग है भी या नही। चतुर्थ आर्य सत्य की शिक्षा देकर बुद्ध ने यह निश्चित कर दिया कि संसार में दुःखों का अन्त एक विशेष मार्ग का अनुसरण करके किया जा सकता है। यह मार्ग बौद्ध धर्म में अष्टांगिक मार्ग के नाम से विख्यात है। चतुर्थ आर्य सत्य के सम्बन्ध में संयुक्त निकाय में कहा गया है कि– यह दुःख निरोध मार्ग सम्बन्धी आर्य सत्य है, यह अष्टांगिक मार्ग है अर्थात् सम्यक् दृष्टि, सम्यक्–संकल्प, सम्यक्–वाक्, सम्यक् कर्मान्त, सम्यक् आजीव, सम्यक्–व्यायाम्, सम्यक् स्मृति तथा सम्यक् समाधि है।[37]

निष्कर्ष–

भगवान बुद्ध की शिक्षा की पहली विशेषता थी कि मन को सभी चीजों का केन्द्र बिन्दु स्वीकार किय गया था इसलिए सबसे मुख्य बात मन की साधना है। दूसरी विशेषता यह थी कि मन ही सब भलाइयों एवं बुराइयों का स्त्रोत है जो हमारे भीतर उत्पन्न होती है और जिनका हमें बाहर से शिकार होना पड़ता है। इसलिए अपने चित्त को निर्मल बनाये रखना ही धर्म का सार है। तीसरी विशेषता है सभी पाप कर्मों से विरति। चौथी विशेषता है–धर्म धार्मिक ग्रन्थों के पाठ में नहीं है बल्कि धार्मिक जीवन बिताने में है।

बुद्ध की समस्त शिक्षाओं का आरम्भ स्तम्भ प्रतीत्यसमुत्पाद है। प्रतीत्यसमुत्पाद ही बुद्ध के उपदेशों का सार है। यह द्वितीय तथा तृतीय आर्य सत्यों में निहित है जो दुःख का कारण तथा उसके निरोध को बताते है। दुःख संसार है तथा दुःख निरोध निर्वाण है। दोनों एक ही सत्ता के पहलू है। सापेक्षवादी दृष्टि से विचार करने पर प्रतीत्यसमुत्पाद संसार है तथा वासविकता की दृष्टि से विचार करने पर यही निर्वाण है। प्रतीत्यसमुत्पाद हमें बताता है कि भौतिक जगत में सब कुछ सापेक्ष्य, परनिर्भर तथा जरा–मरण के अधीन होने के कारण अनित्य है। संसार की प्रत्येक वस्तु सापेक्ष्य होने के कारण न तो पूर्ण रूप से सत्य है और न ही पूर्ण असत्य इसलिए नहीं है कि इसका अस्तित्व दिखाई देता है। इस प्रकार सभी दृश्यमान वस्तुएँ वास्तविकता तथा शून्यता के बीच में स्थित हैं। इस प्रकार बुद्ध अपने मत को मध्यम मार्ग कहते है। यह दोनों अतिवादी विचारधाराओं शाश्वतवाद तथा उच्छेदवाद का निषेध करता है। बुद्ध का मध्यम मार्ग अरस्तू के स्वर्णिम मार्ग के समान है। उन्होंने अतिशय आसक्ति तथा कायाक्लेश दोनों का विरोध किया। अपने प्रथम उपदेश में उन्होंने भिक्षुओं को सम्बोधित करते हुए कहा था–संसार में दो अतियाँ हैं। इनसे धार्मिक व्यक्ति को बचना चाहिए। तथागत ने इन दोनों से परे होकर माध्यम मार्ग की खोज की है जो नेत्र तथा मस्तिष्क को प्रकाशित करता है तथा शान्ति, ज्ञान, सम्बोधि, निर्वाण की ओर ले जाता है।

सन्दर्भ–

1. अवधेश सिंह, चीनी यात्रियों के यात्रा विवरण मे प्रतिबिम्बित बौद्ध धर्म का एक अध्ययन, पृष्ठसं0–57
2. वही पृष्ठ–57, रॉकहिल, दि लाइफ ऑफ बुद्ध; ई0 जे0 टामस, दी लाइफ ऑफ बुद्ध ऐज लीजेण्ड एण्ड हिस्टी इसमें बुद्ध जीवनी लेखन का सविस्तार एवं अत्यन्त प्रमाणिक प्रयास है; गोविन्द चन्द्र पाण्डेन्य, स्टडीज इन दि ओरिजिन्स ऑफ बुद्धिज्म और बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, औल्डेन वर्ग, बुद्धः हिज लाइफ डाक्टिन्स एण्ड आर्डर, आदि ग्रन्थों में बुद्ध की जीवन सुरक्षित है।
3. पाण्डेय गोविन्दचन्द्र, बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, पृष्ठ–40
4. अवधेश सिंह, चीनी यात्रियों के यात्रा विवरण में प्रतिबिम्बित बौद्ध धर्म का एक अध्ययन पृष्ठ–58
5. पाण्डेय गोविन्दचन्द्र, पूर्व मिर्दिष्ट, पृष्ठ 40–41
6. ललितविस्तर, राजेन्द्र लाल मित्र द्वारा सम्पादित (कलकत्ता, 1877) लेफमान द्वारा परिषरपूर्वक सम्पादित (हाल, 1902, 1908) पी0एच0 द्वारा सं0 (मिथिला, 1958)
7. पाण्डेय गोविन्द चन्द्र, पूर्व निर्दिष्ट, पृष्ठ 40, डब्ल्यू डब्ल्यू शकहिल, दि लाइफ आफ बुद्ध (कैगन पॉल)
8. वही पृष्ठ 41, बुद्धचरित, ई0बी0 कॉवेल द्वारा सम्पादित (आक्सफोर्ड, 1893)
9. मालविका, विद्यावती, हिन्दी सन्त साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव, पृष्ठ–9
10. कौसल्याय, आनन्द, जातक हिन्दी, पृष्ठ 27–33 (दस पारमिताएँ ये है– दान, शील, नैष्क्रम्य, प्रज्ञा, वीर्य, सत्य, शान्ति, अधिष्ठान, मैत्री और उपेक्षा)
11. श्री नारायण श्रीवास्तव, भारत में बौद्ध–निकायों का इतिहास, पृष्ठ–2
12. श्री नारायण श्रीवास्तव, भारत में बौद्ध–निकायों का इतिहास, पृष्ठ–3 (जातक प्रथम खण्ड– पृष्ठ 63–64)
13. श्री नारायण श्रीवास्तव, भारत में बौद्ध–निकायों का इतिहास, पृष्ठ–3 (जातक प्रथम खण्ड– पृष्ठ 63–64)
14. वही (वर्तमान ककजोल, जिला संथाल–परगना बिहार)

15. वहीं (वर्तमान सिलई नदी)
16. वही (हजारी बाग जिले में कोई स्थान)
17. वही (थानेश्वर, जिला–करनाल, हरियाणा)
18. वही (हरिद्वार के पास का पर्वत भाग)
19. वही (विनयपिटक, महावग्ग, 5, 3, 2 तथा जातक पृष्ठ–64 और बुद्धचर्या पृष्ठ–1)
20. वही (जातक निदान कथा)
21. सुत्तनिपात, भिक्षु धर्मरत्न द्वारा हिन्दी में अनूदित, प्रथम संस्करण, पृष्ठ– 57
22. वही, गाथा पृ0 संख्या– 12
23. वही, गाथा 21, पृष्ठ–26
24. सोलह जनपद ये थे–काशी, कोशल, अंग, मगध, वज्जि, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरू, पंचाल मत्स्य, शूरसेन, अश्वक, अवन्ति, गन्धार और कम्बोज–संयुक्त निकाय भूमिका, पृष्ठ–1
25. दीघनिकाय 1, 2, पृष्ठ– 19–20
26. सांकृत्यायन राहुल, बौद्ध दर्शन पृष्ठ–2
27. बुद्ध प्रकाश, भारतीय धर्म और संस्कृति, पृष्ठ– 44
28. बाशम, ए0एल0, अद्भुत भारत, पृष्ठ– 215
29. उपाध्याय, बलदेव, बौद्ध–दर्शन–मीमांसा, पृष्ठ–3
30. मिश्रा वसुन्धरा, भगवान बुद्ध और हिन्दी काव्य, पृष्ठ सं0–10–11
31. बुद्ध प्रकाश, भारतीय धर्म और संस्कृति, पृष्ठ– 41
32. उपाध्याय, बलदेव, पूर्व निर्दिष्ट, पृष्ठ–48
33. मालविका, विद्यावती, हिन्दी सन्त–साहित्य पर बौद्ध धर्म का प्रभाव, पृष्ठ–35–36
34. उपाध्याय, बलदेव, पूर्व निर्दिष्ट, पृष्ठ–49
35. उपाध्याय, भरत सिंह–बौद्ध दर्शन और अन्य भारतीय दर्शन, पृष्ठ 374 और आगे
36. विशुद्वि मार्ग, भाग 2, पृष्ठ– 119
37. उपाध्याय, बलदेव, पूर्व निर्दिष्ट, पृष्ठ–1 और आगे

भारत में नगरीय विकास से सम्बन्धित मुद्दे

डॉ. सुनील कुमार यादव*

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् औद्योगीकरण एवं नगरीकरण की प्रक्रियाएं तीव्र हुई है। 2001 की जनगणना के अनुसार नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत 22.78 हो गया है। पिछले 56 वर्षों में नगरीय जनसंख्या काफी बढ़ी है। वर्तमान मे नगरीय जनसंख्या 28 करोड़ से अधिक हो चुकी है। भारत में जिस तीव्र गति से जनसंख्या बढ़ी है उस गति से यहां नगरीय विकास नहीं हो पाया। पिछले कुछ वर्षों में नगरीय जनसंख्या की बढ़ोत्तरी के अनुपात में नगरों में वे सब आवश्यक सुविधाएं हम नहीं जुटा पाये है जो अच्छे नगरीय जीवन के मूलभूत आवश्यकताएं हैं। भोजन, वस्त्र तथा आवास या निवास। मनुष्य और अन्य समस्त प्राणियों को अपना जीवन चलाने के लिए भोजन की अनिवार्यतः आवश्यकता पड़ती है। उसे मौसम के अनुरूप अपने शरीर को ढकने के लिए वस्त्रों की आवश्यकता भी पड़ती है, आवास की आवश्यकता रहती है। किसी समय मनुष्य गुफाओं व कन्दराओं में रहता था। कन्द–मूल, फल खाकर और पशुओं का शिकार करके अपनी भोजन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करता था। धीरे–धीरे वह खेती करने लगा, फसलें उगाने लगा, वस्त्र बनाने लगा, मिट्टी,पत्थर, लकड़ी, लोहा, सीमेण्ट, आदि से मकान बनाने लगा। आज मनुष्य में ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में काफी प्रगति की है। अब वह लकड़ी, लोहे के छोटे–मोटे औजारों से आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन नहीं करता है बल्कि बड़े–बड़े कल कारखानों में वस्तुएं निर्मित करता हैं।

उद्योग–धन्धों के पनपने से समय के साथ–साथ अनेक नगरों का विकास हुआ। नगर व्यापार के केन्द्र बन गये। रोजगार की तलाश में लोग गांवों से नगरों की ओर प्रस्थान करने लगे। भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ता गया। इस बढ़ते दबाव में भी कुछ लोगों को नगरों की ओर ढकेल दिया। नगरों में शिक्षा सम्बन्धी सुविधाएं भी प्रचुर मात्रा में पायी जाती हैं। वहां चिकित्सा सम्बन्धी सुविधाएं भी उपलब्ध हैं। नगर में तड़क–भड़क और मनोरंजन के साधन की काफी मात्रा में उपलब्ध हैं। यहां द्रुतगामी आवागमन के साधन भी पाये जाते हैं। नगरों का अपना एक आकर्षण हैं जो लोगों को अपनी ओर खींचता हैं। नगरों का राजनीतिक महत्व भी कम नहीं हैं। ये सभी कारण लोगों को नगरों की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। जो नगर सीमित जनसंख्या को ध्यान में रखकर बसाये गये, आज उनकी जनसंख्या निर्धारित जनसंख्या से कई गुना अधिक हो गयी हैं। ऐसी स्थिति में कई नगर अनेक समस्याओं के गढ़ बन चुके हैं। आज नगरों में इतनी भीड़–भाड़ पायी जाती हैं कि सड़कों पर चलना भी कठिन हो गया है। रहने के मकानों की वहां इतनी कमी हो गयी है। कि कई लोगों को बाध्य होकर झुग्गी–झोपड़ियों या गन्दी बस्तियों में रहना पड़ता है। नगरों में आज आवश्यक सुविधाओं का अभाव दिखलाई पड़ता है। चारों ओर शोरगुल और प्रदूषण ही देखने को मिलता है लोग अस्वास्थ्यकर परिस्थितियों में अपना जीवन जी रहे हैं। नगर में कुछ साधन सम्पन्न लोगों को ही नगरीय जीवन की सुख–सुविधाओं का आनन्द ले रहें हैं। शेष अधिकांश नगरवासी इनसे वंचित है। यदि किसी बड़े नगर या महानगर का सुक्ष्म अवलोकन न किया जाएं तो ज्ञात होगा कि वहां नगरीय जनसंख्या के काफी बड़े भागे को परिस्थितियों से बाध्य होकर नारकीय जीवन जीना पड़ रहा है। मनुष्य नगर में अच्छा जीवन जीने की आकांक्षा लेकर आता है। लेकिन अधिकांश लोगों की आकांक्षा की पूर्ति नहीं हो पाती। इसके लिए आखिर कौन उत्तरदायी है। इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है।

प्रमुख मुद्दे– नगरीय विकास से सम्बन्धित प्रमुख मुद्दे इस प्रकार हैं–

- आवास की समस्या
- निर्धनता की समस्या
- बड़े उद्योगों तथा कुटीर एवं लघु उद्योगों का विकास
- बेकारी
- यातायात की समस्या
- कूड़ा–कचरा एक गम्भीर समस्या
- अतिक्रमण एक प्रमुख समस्या

* असिस्टेन्ट प्रोफेसर, S. T. D. College, Rehala, Palamu, Jharkhand

- पार्किंग की समस्या
- सार्वजनिक स्थानों तथा पार्कों की देखभाल
- निर्धनों के लिए शहरी बुनियादी सुविधाएं
- पर्यावरण की रक्षा करना
- गन्दी बस्तियों को हटाने की समस्या

नगर विकास हेतु प्रयास– नगरों में आवास और गन्दी बस्तियों की समस्या है–

- इस समस्या को केन्दीय सरकार ने हल करने का प्रयास किया है। आवास सुविधाओं की उपलब्धता बढ़ाने हेतु सरकार ने प्रतिवर्ष 20 लाख अंतिरिक्त मकानों के निर्माण का लक्ष्य रखा है। सरकार की नीति का मुख्य सार यही है कि आवास और बुनियादी सुविधाओं से जुड़ी समस्याओं के समाधान में सरकारी और निजी भागीदारी मजबूत की जाय। सरकार के राष्ट्रीय योजना में सभी को आवास को प्राथमिकता का विषय माना गया है। और इस क्रम में कमजोर वर्गों की आवश्यकताओं पर विशेष ध्यान दिया गया है। प्रतिवर्ष 20 लाख मकानों मे से 7 लाख शहरी क्षेत्रों में और 13 लाख ग्रामीण क्षेत्रों में बनाये जायेंगे।
- वर्ष 2000–2001 के दौरान हुडको ने आवास तथा शहरी मूलभूत सुविधाओं की योजनाओं के लिए 7912.73 करोड़ रूपए के ऋण मंजूर किये।। देश के विभिन्न भागों में हुडको ने अप्रैल 1990 से अब तक 106 रैन बसेरा याजनाओं को मंजूरी दी है जिसमें फुटपथ पर रहने वाले 5 लाख से अधिक लोगों को लाभ मिला है।
- नगरीय क्षेत्रों में शुष्क शौचालयों को कम लागत वाले बहाऊ शौचालय में बदलकर तथा शौचालयों की नई इकाइयों का निर्माण कर मैला होने की प्रथा को पूरी तरह समाप्त करने का प्रयास किया गया हैं।

स्रोत :–

- www.google.com

प्राचीन भारत में दास–प्रथा का विश्लेषण

डॉ. रजनीकांत राय*

मुख्य शब्दावली– दास, दस्यु, महाभारत, मनु, उपचारक, परिचारिका, उपचारिका, युनानी यात्री।

भारत में दास प्रथा का प्रचलन प्रागैतिहासिक काल से ही रहा है। सैन्धव सभ्यता में भी दासों का अस्तित्व था। मोहनजोदड़ो के बड़े–बड़े भवनों में छोटे कमरों का निर्माण इस बात की ओर इंगित करता है कि इनमें सेवक या दास रहते रहे होगें।[1] मोहनजोदड़ो की खुदायी से प्राप्त एक ही कतार में बने हुए आवासों की दो पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं।[2] ऋग्वेद से 'दासों' के विषय में स्पष्ट और विस्तृत विवरण मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं। वस्तुतः अनार्यों को 'दास' 'दस्यु' या असुर कहा गया है। दास कहे जाने वाले अनार्य आर्यों से पूर्णतः विलग थे। उन्हें 'अकर्मण्य' (वैदिक कर्मकाण्ड से शून्य), 'अदेवयु', 'अब्रह्मन', 'अयज्वन', 'अब्रत', 'अन्यव्रत', 'देवपीयु', 'शिश्नदेव', 'अनासा', 'कृष्णयोनि', 'अयन्तु', अमानुष आदि कहा गया हैं।[3] ऐसा माना जाता है कि आर्यों व अनार्यों में जमकर संघर्ष हुआ, जिसमें अनार्यों की पराजय हुई। पराजित और बन्दी अनार्य तत्कालीन समाज में 'दास' के रूप में स्वीकार किए गए। ऋग्वेद में एक ऋषि कहता है कि पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु ने उसे पचास युवतियाँ प्रदान की थीं।[4] यह कथन सम्भवतः दासियों को उपहारस्वरूप भेंट करने की प्रथा का दर्शन कराता है।

उत्तर वैदिक साहित्यों में भी दास प्रथा पर प्रचुर प्रकाश पड़ता है। तैत्तरीय संहिता के एक उद्धरण से विदित होता है कि दासियाँ प्रायः मार्जालीय के चतुर्दिक अपने सिर पर पानी के घड़े रखकर पृथ्वी पर अपने पैरों से आघात करते हुए नृत्य और मधुर गायन करती थीं।[5]

उदकुम्भानधिनि धायदास्यौ मार्जालीयं परिनृत्यन्ति पदो
निघ्नतीरिदं मधु गायन्त्यो मधु वै देवानां परम मन्त्राद्यम्।

एक दूसरे को भेंट में प्रायः दास–दासियाँ प्रदान करने की प्रथा उत्तर वैदिक काल तक पूर्ण विकसित हो चुकी थी। उपनिषदों में भी दास–दासियों के अनेक सन्दर्भ मिलते हैं। कठोपनिषद में एक स्थान पर यमराज ने नचिकेता के मृत्यु सम्बन्धी प्रश्नों के पूछे जाने पर यह कहा था ''मनुष्य लोक में जो–जो दुर्लभ है, उन सब भोगों को तू स्वछन्दतापूर्वक माँग ले। यहाँ रथ एवं बाजों के सहित ये रमणियाँ भी हैं। ऐसी स्त्रियाँ मनुष्यों को प्राप्त होने योग्य नही होतीं। मेरे द्वारा दी हुई इन कामिनियों से अपनी सेवा करा। परन्तु हे नचिकेता तू मरण सम्बन्धी प्रश्न मत पूछ।''[6] इस प्रकार उपनिषद काल में दास–दासियों का प्रचलन समाज में निर्बाध रूप से होने लगा था। छान्दोग्य उपनिषद में भी 'दासी' का उल्लेख हुआ है। राजा अश्वपति ने सत्ययज्ञ से कहा, ''खच्चरियों से जुता हुआ रथ और 'दासियों' के साथ हार प्रवृत्त है।''[7]

प्रवृत्तोऽश्वतरीरथों दासीनिष्कोऽत्स्यत्रं पश्यसि .....।

इन कथनों से प्रमाणित होता है कि दास–दासियाँ उच्च वर्णों की सेवा में रत रहती थीं तथा उन्हें सेवा में रखना उच्चता का प्रतीक माना जाता था।

साहित्यों की विवेचना से यह स्पष्ट हो जाता है कि दासों के साथ प्राचीन भारतीय उच्च वर्णो का व्यवहार अमानवीय, कठोर व कटु नहीं था। वस्तुतः भारत में दासों की स्थिति पाश्चात्य दासों की तुलना में अत्यन्त उच्च एवं मानवीय थी। भारत में दासों के साथ मानवीय और सहृदयतापूर्वक व्यवहार किया जाता था। सम्भवतः इसीलिए यूनानी यात्री मेगस्थनीज समाज के अन्य वर्णों और दासों के बीच अन्तर नहीं समझ सका तथा उसने दासों का कोई विवरण नही दिया है। बौद्ध और स्मृति साहित्य में भी उनके प्रति सदाशयता का विचार व्यक्त किया गया है।

* सहायक प्राध्यापक, श्यामा प्रसाद मुखर्जी राजकीय महाविद्यालय, प्रयागराज।

महाभारत में दास–दासियों को भेंट स्वरूप प्रदान करने के अनेक उदाहरण मिलते हैं।[8] युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ सम्पन्न करने के उपलक्ष्य में 88,000 ब्राह्मण स्नातकों को तीस–तीस दासियाँ प्रदान की थी। कौटिल्य के अनुसार आर्य दास नहीं बनाए जा सकते।[9] इससे स्पष्ट है कि म्लेच्छ की संतान दास बनाये जा सकते थे। किन्तु आर्यों की संतान दास नही बनाये जा सकते थे चाहे वह बेचे जायें या प्रदान किये जायें। अशोक ने अपने नवें शिलालेख में दासों के साथ उचित व्यवहार करने के लिए निर्देश दिया है।

मनु के अनुसार शूद्रों से दास कर्म कराना चाहिए[10]। याज्ञवल्क्य, नारद, कात्यायन आदि स्मृतिकारों ने दासों का विशद् चित्रण किया है। भारतीय धर्मशास्त्रकारों ने दासों के प्रकार, उनके कार्य, स्वामी द्वारा उनके प्रति किया जाने वाला व्यवहार तथा उनकी स्वतन्त्रता आदि का विस्तृत विवेचन किया है मनु ने सात प्रकार के दासों का वर्णन किया है[11]–

ध्वाजहृतो भक्तदासो गृहजः क्रीतदत्रियौ।
पैत्रिको दण्डदासश्य सप्तैते दासयोनयः।।

(1) ध्वजाहृत (युद्ध में जीता गया), (2) भक्त दास (भोजन प्राप्ति के लाभ में बना हुआ दास), (3) गृहज (दासीपुत्र) (4) क्रीत (मूल्य देकर क्रय किया हुआ), (5) दत्रिय (किसी के देने से प्राप्त), (6) पैत्रिक (पिता की परम्परा से चला हुआ) और (7) दंड दास (दण्ड या ऋण आदि न चुका सकने के कारण)। जबकि नारद ने आठ प्रकार के दासों का उल्लेख किया है। विभिन्न वर्गों के लिए दासत्व का अलग–अलग नियम था। उदाहरण के लिए ब्राह्मण के क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र दास हो सकते थे, क्षत्रिय के वैश्य और शूद्र तथा वैश्य के शूद्र। किन्तु ब्राह्मण अपने से निम्न तीनों वर्णों का दास नही हो सकता था। इसी प्रकार क्षत्रिय व वैश्य भी अपने से निम्न वर्ण के दास नहीं हो सकते थे।

वैदिक युग से ही दासों का प्रधान कर्म था आर्यों अथवा उच्च वर्णों की सेवा करना। वे विभिन्न प्रकार के सेवा कार्य से अपने स्वामी को प्रसन्न रखने का प्रयास करते थे। वैसे, शूद्र से भी दास कर्म कराया जाता था। उनके द्वारा कृत कार्य के आधार पर 'कम्मन्तदास', 'पेशकर दास', 'रजक दास' आदि प्रकारों में विभक्त किया जाता था। ऐसे भी दास थे जो अपने स्वामी के गृह में भंडागारिक, कोषाध्यक्ष, निजी सचिव जैसे उत्तरदायी पदों पर कार्य करते थे। किन्तु इस प्रकार के दासों की संख्या नगण्य थी। अधिकतर दास गृह एवं कृषि सम्बन्धी कार्यों में संलग्न रहते थे। मनु ने दास द्वारा उपार्जित धन पर स्वामी का अधिकार माना है।[12]

भार्या पुत्रस्य दासश्च त्रय एवाधनाः स्मृताः।
यन्ते समधिगच्छन्ति यस्य ते तस्य तद्धनम्।।

कौटिल्य ने विभिन्न कार्य करने वाले दास और दासियों का उल्लेख किया है। उपचारक, परिचारिका, अर्द्धसीतिका, उपचारिका आदि विभिन्न कार्यो में संलग्न दास दासियों का वर्णन उसने किया है। नारद के अनुसार दासों को गृह के द्वार, मार्ग व पहाड़ी आदि को साफ करने में, शरीर के गुह्यांगो की सफाई करने में, मूत्र आदि को फेकने आदि के कार्य में लगाना चाहिए। स्वामी अगर चाहे तो अपने शरीर के सेवा में भी उसे संलग्न रख सकता है।[13] सब्जी काटना, फर्श साफ करना, झाड़ू लगाना, जल ले आना, गाय बैल व बकरी चराना, घास काटना अनाज निकालना आदि अनेक प्रकार की पारिवारिक सेवाएँ दास किया करते थे।

निष्कर्ष :–

प्राचीन व्यवस्थाकारों ने दासों की मुक्ति की भी व्यवस्था की हैं। कौटिल्य ने ऐसे दासों का विस्तार से वर्णन किया है, जो मूल्य चुकाने के पश्चात् दासत्व के बन्धन से मुक्ति या मोक्ष प्राप्त कर सकते थे। धन लौटाने में असमर्थ होने के कारण जिन्हे दण्ड मिला हो ऐसे व्यक्ति काम करके पारिश्रमिक के रूप में धन चुका सकेंगे। युद्ध में बन्दी दास अपने पर व्यय का आधा धन चुका कर छुटकारा पा सकता था। बौद्ध, ग्रन्थों में भी दासता से मुक्त होने के कतिपय उपायों का उल्लेख किया गया है। जो इस प्रकार है–

(1) या तो वह सन्यास ग्रहण कर ले,
(2) स्वामी द्वारा मुक्त कर दिया जाय, या
(3) शुल्क अदा कर दे।[14]

सन्दर्भ–

1. मार्शल, मोहनजोदड़ो, मा01, पृ0 12,
2. चानन, स्लेवरी इन एंशिएंट इंडिया, पृ0 16–18
3. ऋग्वेद, 8.56.3; 7.21.5, 10.99.3 आदि।
4. ऋग्वेद, 8.19.36.
5. तैत्तिरीय संहिता, 7.5 10.1
6. कठोपनिषद, 1.41.25,
7. छान्दोगय उपनिषद् 5.13.2,
8. महाभारत, सभापर्व, 52.45; वनपर्व, 233.43; विराट पर्व, 18–21
9. अर्थशास्त्र, 3.13,
10. मनुस्मृति 8.416,
11. मनुस्मृति, 8.416,
12. नारद 0, 6, 7
13. दीर्घ निकाय, 1.60–61